हिन्दी व्याकरण सार

एल· एन· शर्मा एम· ए·

लक्ष्मी पुस्तकालय
पटना-४

हिन्दी-व्याकरण-सार

ESSENTIALS OF HINDI GRAMMAR

(दशम तथा एकादश वर्गों के लिए)

लेखक

एल० एन० शर्मा, एम० ए०

प्रकाशक

लक्ष्मी पुस्तकालय

पटना-8

मूल्य ३ रु० २५ पैसे

प्रकाशक
लक्ष्मी पुस्तकालय
नवीन कोठी, पटना-४

मुद्रक
घनश्याम प्रेस
नवीन कोठी, पटना

भूमिका

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में, जब हिन्दी गद्य का विकास हुआ, हिन्दी में कोई व्याकरण नहीं था। इस क्षेत्र में अँगरेजों का आभार हमें स्वीकारना चाहिए, क्योंकि सर्वप्रथम अँगरेजी में ही हिन्दी व्याकरण के अनेक ग्रंथ निकले, जिनमें बीम्स का 'कम्परेटिव ग्रामर आफ दि एरियन लैंगवेजेज आफ इन्डिया', पादरी एथरिंगटन का 'हिन्दी ग्रामर", के० लॉग का 'ए ग्रामर आफ दि हिन्दी लैंगवेज' आदि उल्लेख्य हैं। यहाँ स्मरणीय बात यह है कि पादरी एथरिंगटन ने हिन्दी में भी 'भाषा-भास्कर' नामक एक व्याकरण-ग्रंथ लिखा था।

हिन्दी में पण्डित कामता प्रसाद गुरु, पण्डित अम्बिका प्रसाद वाजपेयी, पण्डित किशोरीदास वाजपेयी, श्री रामचन्द्र वर्मा, आचार्य शिवपूजन सहाय, आचार्य रामलोचन शरण, श्री सुरेश्वर पाठक विद्यालंकार आदि ने इस क्षेत्र में स्तुत्य प्रयास किया है। हम हिन्दी व्याकरण में नयी देन का दावा नहीं कर सकते।

लेकिन इतना निवेदन हम अवश्य करेंगे कि 'हिन्दी-व्याकरण-सार' छात्रों के लिए सर्वाधिक उपयोगी सिद्ध हुआ है। अत्यन्त अल्प समय में इसका तीसरा संस्करण प्रकाशित करने का अवसर हमें मिला है।

हिन्दी में तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशज चार प्रकार के शब्द प्रायः प्रयुक्त होते हैं। इसलिए हिन्दी व्याकरण पर संस्कृत, उर्दू और अँगरेजी व्याकरणों का पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। सन्धि, समास, उपसर्ग, प्रत्यय आदि की आधारशिला संस्कृत व्याकरण है। कारक भी संस्कृत व्याकरण से लिया गया है, किन्तु संस्कृत में सम्बोधन कारक नहीं होता। हिन्दी के लैंगिक नियमों का आधार प्राकृत व्याकरण है। चिह्न-विचार अँगरेजी व्याकरण के नियम पर आधारित हैं।

एल० एन० शर्मा

६-४-६३

नवीन संस्करण के सम्बन्ध में

'हिन्दी व्याकरण सार' पिछले वर्षों में छात्रों के बीच काफी प्रिय पुस्तक के रूप में रहा है। इसकी इस लोकप्रियता के सम्बन्ध में मुझसे अधिक सुधी पाठक और हिन्दी व्याकरण की समस्याओं पर गहराई से विचार करने वाले शिक्षक ज्यादा अच्छी तरह कह सकते हैं।

एक शिक्षक होने के नाते मुझे गत वर्षों में छात्रों की कठिनाइयाँ और परीक्षा की दृष्टि से जो कुछ आवश्यक लगा, इसी रोशनी में इस नये संस्करण में आवश्यक परिवर्त्तन कर दिया गया। बाह्य और आन्तरिक रूप में पुस्तक को सुरुचिपूर्ण और आकर्षक बनाने का यथासंभव प्रयास किया गया है। आशा है, इस संस्करण को पहले से ज्यादा उपयोगी मान कर छात्र और शिक्षक स्वीकारेंगे।

—लेखक

विषय-अनुक्रमणिका

प्रथम विभाग

द्वितीय विभाग



(क) भाषा की परिभाषा

जिस साधन के द्वारा हम अपने मन का भाव दूसरों पर स्पष्ट रूप से प्रकट कर सकते हैं और दूसरों के मन के भावों को स्पष्ट रूप से समझ सकते हैं, उसे भाषा कहते हैं। इसके अन्तर्गत वे सार्थक शब्द हैं, जो हम बोलते हैं और उन शब्दों के वे क्रम भी हैं, जिन्हें हम लगाते हैं। हमारे मन में समय-समय पर जो विचार, भाव या इच्छाएँ उत्पन्न होती हैं अथवा जो अनुभूतियाँ प्राप्त करते हैं, हम उन्हें अपनी भाषा के द्वारा चाहे लिखकर या बोलकर, दूसरों पर प्रकट करते हैं। कभी-कभी हम अपने मुख की विशेष आकृति या संकेत के द्वारा भी अपने मन के विचारों या भावों को प्रकट करते हैं, परन्तु भाव प्रकट करने के ये सब साधन उतने सहायक नहीं होते हैं, जितनी भाषा होती है। हमारे मन में जिन भावों या विचारों का प्रादुर्भाव होता है, उन्हें कार्यरूप में परिणत करने के लिये हमें दूसरों की सहायता या सम्मति की जरूरत होती है। इसलिए हमें अपने भावों या विचारों को दूसरों पर प्रकट करना पड़ता है। यह कार्य भाषा के द्वारा ही संभव है, अतः कहा जा सकता है कि संसार के समग्र कार्यकलाप भाषा के द्वारा ही चलते हैं। भाषा ही समाजविशेष को एक सूत्र में बाँधती है।

संसार की वस्तुएँ परिवर्त्तनशील हैं। भाषा भी इस सांसारिक नियम का अपवाद नहीं है। अभिप्राय यह है कि इसका रूप भी बदलता है। जिस भाषा का परिवर्त्तन या विकास रुक जाता है, वह भाषा मृत हो जाती है। भाषा-तत्त्ववेत्ताओं का कथन है कि कोई भी भाषा सैकड़ों वर्ष तक एक रूप में नहीं रह सकती, यही कारण है कि प्रत्येक भाषा का स्वरूप बदलता रहा है। लेकिन भाषा का यह रूप-परिवर्त्तन इतनी मन्द गति से होता है कि हमें तत्काल इसका ज्ञान नहीं होता है। हिन्दी का इतिहास साक्षी है कि इस देश में पहले प्राकृत भाषा प्रचलित थी, जिसका उद्भव संस्कृत से हुआ था। अपने रूपों में परिवर्त्तन अपनाती हुई वही प्राकृत भाषा हिन्दी के कलेवर में आई। फिर आज की जो हिन्दी है, वह भी सैकड़ों वर्ष पूर्व की हिन्दी से भिन्न है। भाषा के इस परिवर्त्तन

में स्थान और सभ्यता का भी प्रभाव पड़ता है। एक स्थान पर जो शब्द जिस रूप में उच्चरित होता है, दूसरे स्थान पर वह उसी रूप में उच्चरित नहीं होता, क्योंकि जलवायु की भिन्नता से शब्दों के उच्चारण में भिन्नता आ जाती है। सभ्यता के विकास के साथ भाषा का विकास होता है। कारण, सभ्यता के विकास के साथ-साथ नवीन विचार उत्पन्न होते हैं और नवीन विचारों को व्यक्त करने के लिये नवीन शब्दों को अपनाना आवश्यक हो जाता है।

(ख) भाषा और व्याकरण

जब हम भाषा के द्वारा अपना विचार प्रकट करते हैं, तब हमें यह ध्यान रखना पड़ता है कि हम इस ढंग से अपनी बातें कहें कि सुनने वाले उन्हें स्पष्ट रूप में समझ सकें। इसके लिये हम अपने विचार को कई अंशों में बाँटने को बाध्य होते हैं, और उन्हीं अंशों को वाक्य कहते हैं। संक्षेप में, पूर्ण अर्थ प्रकट करने वाली बात को वाक्य कहते हैं। वाक्य कई शब्दों के संयोग से बनता है। शब्द अर्थ प्रकट करने वाली ध्वनि है, जिसे सार्थक ध्वनि कहा जाता है। शब्दों को हम इस ढंग से संगठित कर प्रयोग करते हैं कि भाषा दोषपूर्ण न हो और हमारी भाषा, चाहे हम बोलें या लिखें, दूसरा अच्छी तरह समझ सके।

हम अपने मन के विचारों को दो प्रकार से व्यक्त करते हैं। हमारे सामने जो लोग उपस्थित होते हैं, उनके लिये कथित भाषा का प्रयोग कर हम अपने मन के विचारों को व्यक्त करते हैं और जब हमें दूर रहने वाले व्यक्तियों तक अपने विचारों को पहुँचाने की या भविष्य के लिये संचय करने की आवश्यकता प्रतीत होती है, तब हम लिखित भाषा का प्रयोग करते हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि भाषा के दो रूप होते हैं—(क) कथित और (ख) लिखित।

लिखित भाषा में शब्दों की मूल ध्वनियों को पहचानने के लिये भिन्न-भिन्न संकेत निश्चित हैं, जिन्हें वर्ण या अक्षर कहते हैं। अभिप्राय है कि ध्वनियों के सहारे हम बोलते हैं और वर्णों या अक्षरों के सहारे लिखते हैं। इस प्रकार ध्वनियों और अक्षरों से शब्द, शब्दों से वाक्य और वाक्यों से भाषा बनती है।

भाषा और व्याकरण में क्या सम्बन्ध है और भाषा के लिये व्याकरण की क्या आवश्यकता है, यह बात विचारणीय है। जब हम किसी भाषा की रचना को ध्यानपूर्वक देखते हैं, तो हमें ज्ञात होता है कि उसमें जितने शब्द प्रयुक्त होते हैं वे सभी अलग-अलग भाव व्यक्त करते हैं। कभी-कभी हम यह भी देखते हैं कि एक ही भाव को अनेक रूपों में व्यक्त करने के लिये शब्दों के रूप में भी अनेक भेद होते हैं। इसके अतिरिक्त शब्दों और वाक्यों का प्रयोग किसी विशेष क्रम से होता है और उनमें रूप और अर्थ के अनुसार पारस्परिक सम्बन्ध भी होता है। इस स्थिति में स्पष्ट रूप में भाव व्यक्त करने के लिये शब्द के रूप और प्रयोग में निश्चित नियम का निर्वाह जरूरी होता है और इसी निश्चित नियम का निर्वाह करना व्याकरण का काम है।

व्याकरण वह शास्त्र है, जिसमें शब्दों के शुद्ध रूपों और प्रयोगों के नियम का निरूपण हो। 'व्याकरण' शब्द का अर्थ ही है 'अच्छी तरह समझाना'। अभिप्राय यह है कि भाषा के द्वारा हम शुद्ध-शुद्ध बोलने और लिखने का तरीका सीखते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि भाषा और व्याकरण में अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। लेकिन भाषा व्याकरण के अधीन नहीं होती, यह भी एक सर्वमान्य सिद्धान्त है। वस्तुतः व्याकरण ही भाषा के अधीन होता है, क्योंकि नये नियम का निर्माण कर व्याकरण भाषा की गति को बदलने की शक्ति नहीं रखता। व्याकरण का प्रधान कार्य भाषा के नियमों को ढूँढ़ कर उन्हें स्थिर और क्रमबद्ध करना है। बोली जाने वाली भाषा की गति के अनुसार उसी के आधार पर व्याकरण अपना नियम बनाता है क्योंकि भाषा पहले बन जाती है और उसके बाद व्याकरण बनता है। श्री रामचन्द्र वर्मा ने लिखा है—"जो समाज बराबर उन्नति करता और आगे बढ़ता रहता है, उसकी भाषा भी बराबर उसके साथ-साथ बढ़ती रहती है; और व्याकरण उसके पीछे-पीछे पैर घसीटता हुआ चलता है। जब भाषा बहुत कुछ आगे बढ़ चुकती है, तब वैयाकरण अपना व्याकरण भी उसके पास तक पहुँचाने का प्रयत्न करते हैं।"

व्याकरण के जटिल नियमों से भाषा को सीमित करने का परिणाम यह होता है कि भाषा का प्रवाह अवरुद्ध हो जाता है और भाषा मृत हो जाती है।

इसलिये यह आवश्यक है कि जब भाषा में परिवर्त्तन हो जाये, तब व्याकरण भी उसके अनुसार अपने नियमों को परिवर्त्तित करे, क्योंकि व्याकरण का मुख्य काम भाषा के नियमों की छानबीन कर एक सिद्धांत स्थिर करना है। उसमें भाषा की रचना, शब्दों की व्युत्पत्ति और स्पष्ट रूप में भाव व्यक्त करने के लिये शुद्ध प्रयोग बतलाये जाते हैं, जिन्हें जानकर प्रचलित भाषा के नियमों को जानना आसान होता है। शुद्ध-शुद्ध बोलना और लिखना अत्यन्त सरल हो जाता है।

(ग) हिन्दी व्याकरण के आधार

यह उल्लिखित हो चुका है कि हिन्दी का उद्भव प्राकृत से हुआ और प्राकृत का उद्भव संस्कृत से। इसके सिवा हिन्दी भाषा फारसी, अरबी और अँगरेजी से भी न्यूनाधिक रूप में प्रभावित हुई है। इसलिये यह स्वाभाविक है कि हिन्दी व्याकरण पर फारसी, अरबी और अँगरेजी का प्रभाव भी पड़े. हालाँकि इसके आधार संस्कृत और प्राकृत के व्याकरण हैं। हिन्दी व्याकरण में सन्धि और समास से सम्बन्धित जो प्रकरण हैं, वे मूलतः संस्कृत व्याकरण से लिए गये हैं। कुछ समस्तपद मूलत: हिन्दी के भी माने जा सकते हैं। जहाँ तक सन्धि-प्रकरण की बात है, इसमें संस्कृत का एकछत्र अधिकार स्वीकृत है, इसमें संदेह नहीं। किन्तु जहाँ तक उपसर्गों की बात है, हिन्दी में संस्कृत और उर्दू के उपसर्गों की भी मान्यता है। कारक-प्रकरण भी संस्कृत व्याकरण की देन है, हिन्दी व्याकरण ने उसे किंचित् हेरफेर के साथ ग्रहण किया है। हिन्दी में सम्बोधन कारक भी होता है, संस्कृत में इसका स्थान नहीं है। हिन्दी की विभक्तियाँ संस्कृत और प्राकृत से ली गयी हैं। संस्कृत में जहाँ तीन लिंग और तीन वचन माने जाते हैं, वहाँ हिन्दी में दो ही लिंग और दो ही वचन हैं, जिनका आधार प्राकृत भाषा है। हिन्दी ने फारसी के मुहावरे, अँगरेजी के चिह्न-विचार और व्याकरण लिखने की शैली आदि को आवश्यकतानुसार अपना लिया है।

(घ) हिन्दी व्याकरण के विभाग

यह स्पष्ट हो चुका है कि व्याकरण वह शास्त्र है, जिसमें शब्दों के शुद्ध रूपों और प्रयोगों के नियमों का निरूपण हो अर्थात् जिसके द्वारा हम शुद्ध-शुद्ध बोलने

और लिखने का ढंग सीख सकें। भाषा का प्रधान अंग वाक्य है। वाक्य शब्दों के संयोग से और शब्द मूल ध्वनियों के संयोग से बनता है। जब हमें भाषा को लिपिबद्ध करने की आवश्यकता प्रतीत होती है, तब एक-एक मूल ध्वनि के लिये एक-एक चिह्न निश्चित कर लिया जाता है, जिसे वर्ण कहते हैं। कहा जाता है कि भाषा के मुख्य भाग वाक्य, शब्द और वर्ण हैं, इसलिए व्याकरण के प्रधान भाग भी ये तीनों हैं। वर्ण, शब्द और वाक्य के विचार से व्याकरण तीन विभागों में विभक्त है—(क) वर्ण-विचार, (ख) शब्द-साधन और (ग) वाक्य विन्यास।

(क) वर्ण विचार—जिस विभाग में वर्णों अथवा अक्षरों के आकार, उच्चारण और उनके संयोग से शब्दों के निर्माण की बातें होती हैं, उसे वर्ण-विचार कहते हैं।

(ख) शब्द-साधन—जिस विभाग में शब्दों की अवस्था, रूपान्तर, व्युत्पत्ति, निर्माण आदि के नियम निर्धारित होते हैं, उसे शब्द-साधन कहते हैं।

(ग) वाक्य-विन्यास—जिस विभाग में अक्षरों के द्वारा वाक्य बनाने के नियम होते हैं और जिसमें वाक्यों के प्रत्येक अंग का पारस्परिक सम्बन्ध निर्दिष्ट होते हैं, उसे वाक्य-विन्यास कहते हैं।

उपर्युक्त तीन विभागों के सिवा हिन्दी व्याकरण का एक और विभाग माना गया है, जिसे चिह्न-विचार कहते हैं। इस विभाग में विराम आदि चिह्नों का निरूपण होता है। यह विभाग अंगरेजी व्याकरण से लिया गया है, इसमें सन्देह नहीं है। संस्कृत और प्राकृत के व्याकरण में, जो हिन्दी व्याकरण के प्रधान आधार हैं, चिह्नों के प्रयोग को अत्यल्प महत्ता स्वीकृत है।

टिप्पणी—कतिपय वैयाकरणों ने हिन्दी व्याकरण का एक और विभाग माना है—वह है छन्द-विचार। इस विभाग में पद्य के अंग छन्द, रस और अलंकार का विवेचन है। पर हिन्दी में छन्द-विचार के अन्तर्गत जिन विषयों का विवेचन होता है, वे विषय साहित्य-शास्त्र के अंग हैं और भाषा को रोचक और प्रभावशालिनी बनाते हैं। इनका सम्बन्ध हिन्दी व्याकरण से नहीं है। इसलिये इस पुस्तक में छन्द-विभाग का विवेचन न होगा।

अभ्यास

(१) भाषा किसे कहते हैं ? (२) व्याकरण किसे कहते हैं ? (३) भाषा और व्याकरण में क्या सम्बन्ध है ? (४) हिन्दी व्याकरण के प्रधानतः कितने विभाग किये जा सकते हैं ? (५) चिह्न-विचार में क्या बतलाया जाता है ? (६) वर्ण-विचार किसे कहते हैं ? (७) शब्द-साधन में क्या बतलाया जाता है ? (८) वाक्य-विन्यास से क्या समझते हैं ?

प्रथम विभाग

वर्ण-विचार

वर्ण या अक्षर

जिस मूल ध्वनि के खण्ड न हो सकें, उसे वर्ण या अक्षर कहते हैं अर्थात् शब्द के उस खंड को वर्ण या अक्षर कहते हैं, जिसका विभाजन नहीं हो सकता। एक उदाहरण लीजिये—'काम' एक शब्द है, जिसमें 'का' और 'म' दो ध्वनियाँ हैं। इन दोनों ध्वनियों के भी खण्ड हो सकते हैं। 'का' के दो खण्ड हैं—(क) क्+आ और (ख) 'म' के भी दो खण्ड हैं -म्+अ। इस प्रकार 'काम' शब्द के सर्वाधिक खण्ड चार हो सकते हैं, अर्थात् चार अखण्ड ध्वनियों से 'काम' शब्द बना है—क्+आ+म्+अ। ये चारो ध्वनियाँ वर्ण या अक्षर हैं।

अक्षरों वा वर्णों की पहचान के लिये जो कल्पित चिह्न निश्चित किये जाते हैं, उन्हें लिपि कहते हैं। हिन्दी भाषा जिस लिपि में लिखी जाती है, वह देवनागरी लिपि कही जाती है।

वर्णों के समुदाय को वर्णमाला कहते हैं। देवनागरी लिपि में जो भाषा लिखी जाती है, उसकी वर्णमाला में ४८ वर्ण हैं—

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ए ऐ ओ औ।

क ख ग घ ङ। च छ ज झ ञ। ट ठ ड ढ ण।

त थ द ध न। प फ ब भ म। य र ल व श ष स ह।

ं (अनुस्वार) और ः (विसर्ग)।

उपर्युक्त ४८ वर्णों में लृ और ॠ का प्रयोग हिन्दी में नहीं होता। इस प्रकार हिन्दी में सिर्फ ४६ वर्ण रह जाते हैं।

अंगरेजी और फारसी भाषाओं के उच्चारण को स्पष्ट करने के लिए क, ख, ग, ज, फ, ड, और ढ —इन सात वर्णों के नीचे बिन्दी लगाकर क़, ख़, ग़, ज़, फ़, ड़ और ढ़ —ये सात वर्ण बनाये जाते हैं जिनमें अन्तिम दो वर्णों का—ड़ और ढ़ का प्रचलन सर्वमान्य है और शेष वर्णों के प्रचलन के बारे में विद्वानों में मतभेद है। वस्तुतः क़, ख़, ग़ और फ़ वर्णों का इस रूप में प्रयोग नहीं होना चाहिये, क्योंकि इससे वर्णों में जटिलता बढ़ती है। साथ ही यह प्रयोग भाषा की निर्बलता का सूचक है। अन्य किसी भी सबल भाषा में ऐसा प्रयोग देखने में नहीं आता।

हिन्दी के कुल वर्ण या अक्षर दो भागों में विभक्त हैं—(क) स्वर और (ख) व्यंजन।

(क) स्वर वर्णों का उच्चारण आप से आप होता है, साथ ही ये व्यञ्जन वर्णों के उच्चारण में सहायक होते हैं। ये ग्यारह हैं—

अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ और औ।

(ख) व्यञ्जन वर्णों का उच्चारण स्वर वर्णों की सहायता से होता है। वे ३३ हैं—

क, ख, ग, घ, ङ। च, छ, ज, झ, ञ। ट, ठ, ड, ढ, ण।

त, थ, द, ध, न। प, फ, ब, भ, म। य, र, ल, व, श, ष, स, ह।

उपर्युक्त व्यञ्जनों को उच्चारित करने के लिये 'अ' युक्त किया जाता है। यदि इन व्यञ्जनों में कोई स्वर नहीं होता तो इनके उच्चारण को स्पष्ट करने के लिये इनके नीचे एक तिरछी रेखा लगा दी जाती है। इस तिरछी रेखा को हिन्दी में हल्-चिह्न कहते हैं; जैसे—क्, प्, च् आदि। संस्कृत में हल् व्यञ्जन को कहा जाता है।

अनुस्वार और विसर्ग भी हिन्दी में व्यञ्जन कहलाते हैं, क्योंकि इनके उच्चारण में भी स्वर सहायक होता है, लेकिन जहाँ अन्य व्यंजनों के बाद में स्वर उच्चरित होता है वहाँ अनुस्वार और विसर्ग ऐसे व्यंजन हैं, जिनके उच्चारण में

स्वर पहले उच्चरित होता है। दूसरी बात यह है, कि अनुस्वार ङ्, म्, ण्, न् और म्—इन पाँच व्यंजनों का रूप धारण करता और विसर्ग प्रायः श्, स्, ष् और र्—इन चार व्यंजनों का रूप धारण करता है। यही कारण है, अनुस्वार और विसर्ग की गणना व्यंजनों में होती है। वस्तुतः ये अयोगवाह कहलाते हैं, क्योंकि इनकी गिनती पहले के वैयाकरणों ने न स्वर में की है, न व्यंजन में।

क्ष, ज्ञ और त्र—ये वर्ण भी व्यंजन कहलाते हैं। परन्तु वस्तुतः ये संयुक्त व्यंजन हैं क्योंकि दो व्यंजनों के संयोग से बने हैं, जैसे—क्+ष=क्ष, ज्+ञ=ज्ञ और त्+र=त्र।

अभ्यास

(१) अक्षर किसे कहते हैं? (२) देवनागरी वर्णमाला के कितने अक्षर हिन्दी में प्रयुक्त होते हैं? (३) स्वर किसे कहते हैं? (४) व्यंजन किसे कहते हैं? (५) क्या अनुस्वार और विसर्ग व्यंजन हैं? यदि हाँ, तो कैसे? (६) क्ष, ज्ञ और त्र किन-किन अक्षरों के संयोग से बने हैं? (७) हल् किसे कहते हैं।

स्वर और उसके भेद

उत्पत्ति के विचार से स्वर के दो भेद हैं—(क) मूल या ह्रस्व स्वर और (ख) सन्धि स्वर।

(क) वे स्वर मूल या ह्रस्व कहलाते हैं, जिनकी उत्पत्ति दूसरे स्वरों से नहीं होती; जैसे—अ, इ, उ और ऋ।

(ख) वे स्वर सन्धि कहलाते हैं जो मूल स्वरों के संयोग से बने हैं; जैसे—आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ और औ।

सन्धि स्वर दो भागों में विभक्त किये जाते हैं—(क) दीर्घ और (ख) संयुक्त।

(क) किसी मूल स्वर को उसी स्वर के साथ मिलाने से जो स्वर बनता है, वह दीर्घ स्वर कहलाता है; जैसे—अ+अ=आ; उ+उ=ऊ; इ+इ=ई।

(ख) भिन्न-भिन्न स्वरों के मेल से जो स्वर बनता है, वह संयुक्त स्वर कहलाता है; जैसे—अ+इ=ए; आ+ए=ऐ; अ+उ=ओ; आ+ओ=औ।

एक ह्रस्व स्वर के उच्चरित होने में जितना समय लगता है, उसके मान या परिमाण को मात्रा कहते हैं। मात्रा का अर्थ काल का मान या परिमाण है। इसलिए जिस स्वर के उच्चारण में एक मात्रा लगती है, उसे एक मात्रिक या लघु स्वर कहते हैं। जिस स्वर के उच्चारण में दो मात्राएं लगाती हैं, उसे गुरु स्वर या द्विमात्रिक कहते हैं। अभिप्राय यह है कि ह्रस्व स्वर एकमात्रिक या लघु कहलाता है और सन्धि स्वर गुरु कहलाता है। गेय कविता या पद्य की रचना में - मात्रिक छन्दों में—मात्रा की गणना प्रधान रूप में होती है।

उपर्युक्त भेदों के सिवा स्वर का एक और भेद है जो संस्कृत में प्रयुक्त होता है और वह 'प्लुत' कहलाता है। हिन्दी मे प्लुत का विचार नहीं होता है। जोर से पुकारने में अंतिम स्वर के उच्चारण मे तीन मात्राएँ लगती हैं, जिन्हें प्लुत कहा जाता है और दीर्घ स्वर के आगे ३ लिखना इसका चिह्न समझा जाता है, जैसे— रे बुधुआ ३।

व्यंजनों के अनेक प्रकार के उच्चारणों को स्पष्ट करने के लिए, जब उनके साथ स्वर का योग होता है तब स्वर का वास्तविक रूप जिस रूप में बदलता है; उसे मात्रा कहते हैं। यह मात्रा काल-मान वाली मात्रा से भिन्न है; जैसे--

आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ और औ।

ा, ि, ी, ु, ू, ृ, े, ै, ो, और ौ।

'अ' के लिए कोई मात्रा निश्चित नहीं है। जब यह किसी व्यंजन के साथ युक्त होता है तब व्यंजन का हल् चिह्न लुप्त हो जाता है; जैसे—प् + अ = प।

आ, ई, ओ और औ की मात्राएं व्यंजन के आगे, इ की मात्रा व्यंजन के पहले, ए और ऐ की मात्राएँ ऊपर और उ, ऊ, और ऋ की मात्राएँ नीचे लगती हैं; जैसे—ला, ली, लो और लौ; लि, ले और लै; तथा लु, लू और लृ।

टिप्पणी—र् के साथ उ और ऊ की मात्राओं का जब योग होता है तब र् का रूप क्रमशः रु और रू होता है।

अभ्यास

(१) स्वर के कितने भेद हैं? (२) सन्धि स्वर के कितने भेद हैं? (३) मात्रा किसे कहते हैं? (४) अ, ऋ, और औ की मात्रा क्या है?

व्यंजन के भेद

उच्चारण के विचार से व्यंजनों के तीन भेद हैं—(क) स्पर्श, (ख) ऊष्म, (ग) अन्तःस्थ ।

(क) जो व्यंजन कण्ठ, तालु आदि स्थानों का स्पर्श कर उच्चरित होते हैं उन्हें स्पर्श व्यंजन कहते हैं। इनके उच्चारण में कण्ठ का द्वार अवरुद्ध होता है। 'क' से लेकर 'म' तक के २५ व्यंजन स्पर्श वर्ण कहलाते हैं। ये पाँच वर्गों में विभक्त हैं और प्रत्येक वर्ग में पाँच वर्ण हैं तथा प्रत्येक वर्ग का नामकरण वर्ग के प्रथम वर्ण के अनुसार किया गया है; जैसे—

(१) क वर्ग—क, ख, ग, घ, ङ ।

(२) च वर्ग—च, छ, ज, झ, ञ ।

(३) ट वर्ग—ट, ठ, ड, ढ, ण ।

(४) त वर्ग—त, थ, द, ध, न ।

(५) प वर्ग—प, फ, ब, भ, म ।

(ख) जिन व्यंजनों के उच्चारण में एक प्रकार के घर्षण के साथ उष्ण वायु निकलती है, उन्हें ऊष्म कहते हैं। इनके उच्चारण में कण्ठ का द्वार किंचित् अवरुद्ध होता है। श, ष, स और ह—ये चार व्यंजन ऊष्म हैं।

(ग) जिन व्यंजनों के उच्चारण में कण्ठ का द्वार कुछ खुला होता है, वे अतःस्थ कहलाते हैं—अर्थात् स्पर्श और ऊष्म व्यंजनों के बीचवाले व्यंजन अन्तःस्थ कहलाते हैं। य, र, ल और व—ये चार वर्ण अन्तःस्थ हैं।

अनुस्वार (ं) की गणना स्पर्श वर्णों में होती है और विसर्ग (:) की गणना ऊष्म वर्णों में।

जिन व्यंजनों के उच्चारण में 'ह' की ध्वनि का किंचित् मिश्रण होता है, उन्हें महाप्राण कहते हैं और शेष वर्ग को अल्पप्राण कहते हैं। प्रत्येक वर्ग के द्वितीय और चतुर्थ वर्णों में 'ह' की ध्वनि समाविष्ट होती है तथा 'ढ़' के उच्चारण में भी 'ह' की ध्वनि विशेष रूप से है। इसलिये ये सभी एवं श, ष, स

और ह वर्ण महाप्राण हैं और शेष सभी व्यंजन अल्पप्राण हैं। सभी स्वर अल्पप्राण हैं। इस विचार से व्यंजनों के भेद हैं—

(१) अल्पप्राण	(२) महाप्राण
क, ग, ङ	ख, घ
च, ज, ञ	छ, झ,
ट, ड, ण,	ठ, ढ, (ढ़)
त, द, न,	थ, ध
प, ब, म, अन्तस्थ	फ, भ, ऊष्म

टिप्पणी—अँगरेजी और फारसी में 'ह' के योग से महाप्राण वर्ण बनते हैं। इन भाषाओं में महाप्राण निर्देशक कोई विशेषण नहीं है; जैसे—

ठ (th' के लिए 'ट' (t' और 'ह' (h) का प्रयोग होता है।

घोष और अघोष-व्यंजन के दो भेद और हैं-(१) (घोष) और (२) अघोष। (१) जिनके उच्चारण में नाद का उपयोग होता है, उन्हें घोष व्यंजन और जिनके उच्चारण में केवल श्वास का उपयोग होता है, उन्हें अघोष व्यंजन कहते हैं। प्रत्येक वर्ग के पहले और दूसरे तथा श, ष, एवं स और ह को अघोष और शेष वर्णों को घोष वर्ण कहते हैं। प्रत्येक वर्ण का निर्देश उसके बाद 'कार' जोड़ने से होता है। जैसे- ठकार, तकार, वकार आदि।

अभ्यास

(१) उच्चारण के विचार से व्यंजनों के कितने भेद हैं? (२) अल्पप्राण और महाप्राण व्यंजनों में क्या भेद है? (३) कौन कौन व्यंजन अल्पप्राण हैं और कौन-कौन महाप्राण? ४) घोष और अघोष किसे कहते हैं? (५) अनुस्वार और विसर्ग स्वर हैं या व्यंजन?

वर्णों का उच्चारण-स्थान

मुख के जिस भाग से जो वर्ण उच्चारित होता है, वह भाग उस वर्ण का उच्चारण-स्थान कहलाता है। इस विचार से सभी वर्णों के ये विभाग हैं—

(१) कण्ठ्य--जो वर्ण कण्ठ से उच्चरित होते हैं, कण्ठ्य वर्ण कहलाते हैं; जैसे—अ, आ, क, ख, ग, घ, ङ, ह और (:)।

(२) तालव्य—जो वर्ण तालु से उच्चरित होते हैं, तालव्य वर्ण कहलाते हैं, जैसे—इ, ई, च, छ, ज, झ, ञ, य और श।

(३) मूर्द्धन्य--जो वर्ण मूर्द्धा से उच्चरित होते हैं, मूर्द्धन्य वर्ण कहलाते हैं। जैसे—ऋ, ॠ, ट, ठ, ड, ढ, ण, र और ष।

(४) दन्त्य—जो वर्ण ऊपरी दाँतों पर जीभ लगाने से उच्चरित होते हैं; दन्त्य वर्ण कहलाते हैं; जैसे—लृ, त, थ, द, ध, न, ल और स।

(५) ओष्ठ्य—जो वर्ण ओठों से उच्चरित होते हैं; ओष्ठ्य वर्ण कहलाते हैं; जैसे--उ, ऊ, प, फ, ब, भ और म।

(६) कण्ठ-तालव्य—जो वर्ण कंठ और तालु दोनों से एक साथ उच्चरित होते हैं, कण्ठ-तालव्य कहलाते हैं; जैसे--ए और ऐ।

(७) कण्ठोष्ठ्य--जो वर्ण कण्ठ और ओठो से उच्चरित होते हैं, वे कण्ठोष्ठ्य वर्ण कहलाते हैं; जैसे--ओ और औ।

(८) दन्तोष्ठ्य--जो वर्ण दन्त और ओठों से उच्चरित होता है वह दन्तोष्ठ्य वर्ण कहलाता है; जैसे--व।

(९) अनुनासिक--कुछ वर्ण ऐसे हैं जो अपने-अपने उच्चारण-स्थान के सिवा नाक से उच्चरित होते हैं वे अनुनासिक वर्ण कहलाते हैं; प्रत्येक वर्ग के पंचम-वर्ण--ङ ञ, ण, न, और म तथा अनुस्वार अनुनासिक वर्ण हैं।

उपर्युक्त अनुनासिक वर्णों के उच्चारण में विशिष्ठ स्थान से श्वास उत्पन्न कर नाक से निकालना होता है। केवल स्पर्श व्यंजनों के प्रत्येक वर्ग के लिए एक-एक अनुनासिक व्यंजन है, अन्तःस्थ और ऊष्म वर्णों के साथ अनुनासिक व्यजन का कार्य.. अनुस्वार से होता है और अनुनासिक व्यंजनों के स्थान पर कभी-कभी अनुस्वार का भी प्रयोग होता है; जैसे, व्यञ्जन-व्यंजन, सामञ्जस्य—सामंजस्य, पङ्क्ति--पंक्ति आदि।

अनुस्वार के आगे यदि कोई अन्तःस्थ वर्ण या ह हो तो उसका उच्चारण 'अं' की भाँति होता है, परन्तु श, ष और स के साथ उसका उच्चारण प्रायः 'न' की ही भाँति होता है; जैसे - संवाद, संसार आदि।

संस्कृत शब्दों के अन्त में जो अनुस्वार आता है वह 'म्' की भाँति उच्चरित होता है; जैसे- दूतं (दूतम्), वरं (वरम्) आदि ।

अनुनासिक स्वर--जिस प्रकार कुछ व्यंजन अपने-अपने उच्चारण स्थान के सिवा मुँह और नाक से उच्चरित होते हैं और अनुनासिक व्यंजन कहलाते हैं, उसी प्रकार जब स्वर भी मुँह और नाक से उच्चरित होते हैं तब अनुनासिक स्वर कहलाते हैं । इस प्रकार उच्चारण के विचार से स्वर के भी दो भेद हैं---

(क) निरनुनासिक और (ख) अनुनासिक ।

(क) जब स्वर के उच्चारण में मुँह से पूरा श्वास निकाला जाय तब निरनुनासिक स्वर कहलाता है और (ख) जब श्वास का कुछ भी अंश नाक से निकाला जाय तब अनुनासिक स्वर कहलाता है। जिस प्रकार अनुनासिक व्यंजनों का चिह्न अनुस्वार है, उसी प्रकार अनुनासिक स्वरों का चिह्न चन्द्रविन्दु (ँ) है; जैसे--चाँद, माँद आदि । वस्तुतः चन्द्रविन्दु स्वतंत्र वर्ण नहीं है ।

अनुनासिक व्यंजन या अनुस्वार और अनुनासिक स्वर या चन्द्रविन्दु के उच्चारण में यही भेद है कि पहले के उच्चारण में श्वास केवल नाक से निकलता है और दूसरे के उच्चारण में मुँह और नाक से एक ही साथ निकलता है तथा एक की ध्वनि तीव्र है और दूसरे की ध्वनि मंद है । दोनों के उच्चारण में पहले स्वर की आवश्यकता होती है;-- हंस, हँसना आदि । जहाँ तक उच्चारण की बात है, अनुस्वार और चन्द्रविन्दु का अंतर स्पष्ट है लेकिन आजकल प्रायः चन्द्रविन्दु की जगह भी अनुस्वार का प्रयोग होता है ।

विसर्ग--(:)--यह कण्ठ्य वर्ण है जिसके उच्चारण में 'ह' के उच्चारण को एक झटका-सा देकर श्वास को मुँह से एकाएक छोड़ा जाता है ।

ड और ढ इन दोनों वर्णों का उच्चारण साधारणतया मूर्द्धा से होता है किन्तु कभी-कभी जीभ का अगला भाग उलट कर मूर्द्धा में लगाने से भी ये उच्चरित होते हैं और इस स्थिति में इनके नीचे एक बिन्दी लगती है; जैसे ड़ और ढ़ । शब्द के मध्य या अन्त में ड और ढ इस रीति से उच्चरित होते हैं; जैसे--नीड, नीड़, सड़क, घोड़ा, चढ़ाव आदि ।

क्ष—यद्यपि यह क्+ष के संयोग से बना है; तथापि इसका 'क्छ' की भाँति उच्चारण होता है।

ज्ञ—संस्कृत के नियमानुसार इसका उच्चारग 'ज्यँ' की भाँति होना चाहिए लेकिन हिन्दी में यह 'ग्यँ' की भाँति उच्चरित होता है।

ज़ और फ़—फारसी और अँगरेजी के शब्दों को उचित रीति से उच्चरित करने के लिए हिन्दी में ज और फ के नीचे बिन्दी लगा दी जाती है, जिससे इनके प्रकृत उच्चारण में अन्तर आ जाता है; जैसे—फ़ानूस, ज़रूरत आदि। इस स्थिति में 'ज' दाँत और तालु से उच्चरित होता है और 'फ' दाँत और ओष्ठ से। वस्तुत: ज और फ के नीचे बिन्दी नहीं लगानी चाहिए क्योंकि यह हिन्दी की प्रकृति के प्रतिकूल है।

महाप्राण व्यंजन—दो महाप्राण व्यंजनों का उच्चारण सम्मिलित रूप में कठिन होता है। यही कारण है, जहाँ ऐसा संयोग होता है, वहाँ पूर्ववर्ण अल्पप्राण ही होता है; जैसे—अच्छा, रक्खा आदि।

'अ' का उच्चारण—(१) हिन्दी के शब्दों में अन्त्य 'अ' प्राय: उच्चरित नहीं होता; जैसे—धन, तन, मन, राम आदि। धन्, तन्, मन्, राम् आदि के रूप में उच्चरित होते हैं। लेकिन यदि अकारान्त शब्दों का अन्त्य अक्षर संयुक्ताक्षर हो अथवा इ, ई, या ऊ, के आगे य हो अथवा यदि एक ही अक्षर का शब्द हो तो अन्त्य अपूर्णत: उच्चरित होता है; जैसे—सत्य, धर्म्म, कर्म्म, कृत्य, प्रिय, राजसूय न, ग आदि।

(२) तीन अक्षरों के दीर्घ स्वरान्त शब्दों में यदि द्वितोय अक्षर अकारान्त हो तो वह प्राय: उच्चरित नहीं होता; जैसे—'देखना' का उच्चारण प्राय: 'देख्ना' के रूप से होता है।

(३ चार अक्षरवाले ह्रस्व स्वरान्त शब्दों में यदि द्वितीय अक्षर अकारान्त हो तो वह प्राय: उच्चरित नहीं होता, जैसे—देवलोक, बलवान्, शिवधाम् आदि। देव्लोक्, बल्वान्, शिव्धाम् आदि के रूप में उच्चरित होते हैं। लेकिन यदि इस स्थिति में द्वितीय अक्षर संयुक्त हो अथवा प्रथम अक्षर कोई उपसर्ग हो तो अपूर्णत: उच्चरित होता है, जैसे—धर्मवीर, विचलित आदि।

(४) चार अक्षरवाले दीर्घ स्वरान्त शब्दों में यदि तृतीय अक्षर अकारान्त हो तो अ पूर्णत: उच्चरित नहीं होता, जैसे—'निकलना' का उच्चारण 'निकल्ना' के रूप में होता है।

(५) शब्दों के आदि अक्षर का अ सदा पूर्णत: उच्चरित होता है, जैसे—गमन, रमण, शमन, सत्य आदि।

अभ्यास

(१) शब्दों में 'अ' कहाँ-कहाँ उच्चरित होता है और कहाँ-कहाँ अनुच्चरित होता है?

(२ दाँत और ओष्ठ से किन अक्षरों का उच्चारण होता है? (३) ड, ड़, ज, फ और ल का उच्चारण-स्थान बतलायें। (४) विसर्ग का उच्चारण-स्थान बतलायें। (५) अनुस्वार और चन्द्रबिन्दु के उच्चारण में क्या अन्तर है?

संयुक्त व्यंजन

संयुक्त व्यंजन—जब दो या तीन व्यंजन वर्णों के मध्य में स्वर नहीं हो तब वे सम्मिलित रूप में लिखे जाते हैं और संयुक्त व्यंजन कहलाते हैं। हिन्दी में तीन से अधिक व्यंजनों का संयोग नहीं होता।

(१) जब दो समान व्यंजनों का संयोग होता है तब वह संयोग द्वित्व कहलाता है; जैसे—सत्ता, महत्ता, आदि।

(२) संयुक्त व्यंजनों में जो व्यंजन प्रथम उच्चरित होता है, वह प्रथम स्थान ग्रहण करता है; जैसे स्थान। यहाँ पहले 'स्' उच्चरित होता है। इसलिए 'स्' का स्थान 'थ' के पूर्व है।

(३) प्राय: सभी संयुक्त व्यंजनों मे जिन व्यंजनों का संयोग होता है, वे व्यंजन किसी-न-किसी रूप में संयुक्त दीखते हैं। लेकिन क्ष, ज्ञ और त्र जिन व्यंजनों के संयोग से बने हैं, उनका संयुक्त रूप नहीं दीखता। इसलिए कई वैयाकरण इन्हें स्वतंत्र व्यंजन समझकर इनको वर्णमाला के अन्त में स्थान देते हैं। वस्तुत: क्+ष=क्ष, ज+ञ=ज्ञ और त+र=त्र होता है।

(४) यदि किसी संयुक्त व्यंजन में रकार के आगे कोई व्यंजन हो तो रकार उस व्यंजन के ऊपर इस रूप में—(ॅ) लिखा जाता है, जिसे रेफ कहते हैं; जैसे—धर्म, कर्म आदि। लेकिन जब रकार किसी व्यंजन के बाद आता है तब यह ( ) या (‸) के रूप में लिखा जाता है; जैसे—राष्ट्र, चक्र आदि।

(५) ङ्, ञ्, ण, न् और म् का संयोग अपने वर्ग के व्यंजनों के साथ होता है और इनके स्थान पर विकल्प से अनुस्वार भी प्रयुक्त होता है। ञ् और ङ का प्रयोग हिन्दी में एकाकी रूप में नहीं होता; जैसे—पङ्ख—पंख; पण्डित—पंडित आदि।

(६) पंचम वर्णों के अन्य वर्गीय व्यंजनों के साथ संयोग होने पर वे अपने रूप में रह जाते हैं—वाङ्मय, सम्राट्, तुम्हें, उन्हें धन्वन्तरि आदि।

(७) प्रायः भूल से हकार से संयुक्त व्यंजन उसके पूर्व लिखे जाते हैं; जैसे—चिह्न—चिन्ह, ब्रह्म—ब्रम्ह।

अभ्यास

(१) संयुक्त व्यंजन किसे कहते हैं? (२) क्ष, ज्ञ और त्र—इन तीनों संयुक्त अक्षरों में किन-किन अक्षरों का योग है? (३) चिह्न और आल्हाद के शुद्ध रूप क्या हैं? (४) रकार के पीछे कोई व्यंजन हो तो दोनों के योग से 'र' का क्या रूप होगा?

स्वराघात

स्वरों के उच्चारण में स्वरों पर जो बल पड़ता है, वह स्वराघात कहलाता है जिसके बारे में ये नियम द्रष्टव्य हैं—

(१) यदि शब्द के मध्य या अन्त में अ हो और पूर्णतः उच्चरित नहीं हो तो पूर्ववर्ती अक्षर पर बल पड़ता है; जैसे, मन, राम आदि के उच्चारण में चूँकि 'न', 'म' आदि 'न्', 'म्' के रूप में उच्चरित होते हैं, इसलिए 'न', 'म' आदि के पूर्ववर्त्ती अक्षर क्रमशः 'म' और 'रा' पर विशेष बल उच्चारण में पड़ता है।

(२) संयुक्त व्यंजनों के पूर्ववर्त्ती अक्षर पर आघात होता है; जैसे–'धक्का' में 'ध' और 'चिन्ता' में 'चि' पर उच्चारण में विशेष बल देना पड़ता है। इसी आघात के कारण छन्दों में मात्रा-गणना के समय संयुक्त व्यंजन के पूर्ववर्त्ती अक्षरों के लघु या ह्रस्व रहने पर भी उनकी गणना गुरु या दीर्घ के समान होती है; जैसे—'चन्द्र' में 'न्द्र' संयुक्त व्यंजन के पूर्ववर्त्ती अक्षर 'च' यद्यपि लघु है तथापि यह गुरु माना जाता है। 'तुम्हारा', 'तुम्हें' आदि के उच्चारण में 'तु' पर विशेष बल नहीं पड़ता है, इसलिए इनकी मात्रा एक ह मान। जाती है, हालाँकि 'तु' के बाद 'म्हा' और 'म्हें' संयुक्त हैं।

(३) विसर्गयुक्त अक्षर पर झटका देकर उच्चारण करना पड़ता है; जैसे—दुःख आदि।

(४) यौगिक शब्दों के मूल शब्द के अक्षरों का गोर ज्यों का त्यों होता है; जैसे—गृहहीन आदि।

(५) जहाँ एक ही शब्द के एक ही रूप से कई अर्थ निकलते हैं, वहाँ अर्थ-भेद केवल स्वराघात से ज्ञात होता है; जैसे—'की'। जब सम्बन्ध कारक 'की' स्त्रीलिंग विभक्ति के अर्थ में प्रयुक्त होता है तब स्वाभाविक रूप में उच्चरित होता है और जब सामान्यभूत स्त्रीलिंग एकवचन के रूप में प्रयुक्त होता है, तब इसके उच्चारण में बल देना पड़ता है।

अभ्यास

(१) स्वराघात किसे कहते हैं? (२) बोलने के समय स्वर को कहाँ-कहाँ तानना पड़ता है? (३) यौगिक शब्दों के उच्चारण में मूल शब्द के अक्षरों की क्या अवस्था रहती है?

'न' और 'ण'

(१) ऋ, र् और ष् के बाद 'न' का रूपान्तर 'ण' में होता है और दोनों के बीच यदि स्वर, कवर्ग, पवर्ग, अनुस्वार, य, व और ह हों तो भी 'न' का

रूपान्तर 'ण' में होता है; जैसे—ऋण, स्वर्ण, तृष्णा, ग्रहण, प्रवण, रामायण, रावण, रण, कृपण आदि ।

(२) 'दुः' या 'दुर्' उपसर्ग के बाद 'न' का रूपान्तर 'ण' में नहीं होता; जैसे दुर्नाम, दुर्नीति ।

(३) 'न' और टवर्ग के योग में 'न' का रूपान्तर 'ण' में होता है; जैसे—कण्टक, कण्ठ, दण्ड ।

(४) कुछ शब्दों में 'ण' स्वाभाविक रूप में होता है; जैसे—वेणु, वेणी, वाण, वणिक, लवण, मणि, फणि, पुण्य, पाणि, तूणीर, चाणक्य, गुण, गणिका, कोण, कल्याण, कण, कंकण ।

टिप्पणी—उपर्युक्त नियम केवल तत्सम शब्दों के लिए हैं ।

'ब' और 'व'

(क) 'ब'—वाले शब्द—ब्राह्मण, बोध, बृहस्पति, बृहत्, बुध, बुद्धि, बुद्ध, वीभत्स, विल्व, वाहु, बलाका, वालक, वाल, वाधा, वहुधा, वहु, बलि, वाल, वधिर, बृद्ध, वन्धन, वन्दी आदि ।

(ख) 'व'—वाले शब्द—सर्व, विधि, वैध, वेद, विलक्षण, विद्या, विमल, रावण, पूर्व, कवि आदि ।

(ग) वैकल्पिक शब्द—बीज—वीज, बिहार—विहार, विन्दु—बिन्दु, विडाल—बिड़ाल, वाह—बाह, वाणिज्य—वाणिज्य, वक—बक, बाण—वाण ।

'श', 'ष' और 'स'

(१) ष का प्रयोग पुष्, रुष्, शिष् धातुओं से बने शब्दों, कुछ उपसर्गों, सन्धि में क, ख, ट, ठ, प, फ के पहले और ऋ, र और ण के साथ होता है; जैसे—निष्फल, पुष्प, धनुष्टंकार, निष्कपट, निषेध, अभिषेक, शिष्ट, पोषण, पुष्ट, रुष्ट, शिष्य आदि ।

(२) श का प्रयोग प्रायः च और छ के पहले होता है; जैसे—निश्छल, निश्चेष्ट आदि ।

(३) श और स का अन्तर निम्नलिखित शब्दों से स्पष्ट होता है —

शंकर (महादेव)—संकर (जारज), अंस (कंधा)—अंश (भाग), अशक्त (बलहीन)—आसक्त (मोहित), शब (रात) – सब (सभी), शान्त (स्थिर)—सान्त (अन्तयुक्त), सूर (सूर्य)—शूर (वीर) आदि ।

अभ्यास

निम्नलिखित शब्दों को शुद्ध करें—

ऋन, रन, कारन, निवारण, धारन, चरन, कर्न कृस्न, तृस्ना, दुर्णाम, दुर्णीति, चानक्य, कोन, निस्फल, निस्चल, पुस्ट, दुस्ट ।

सन्धि

दो अक्षरों के मेल से जो विकार उत्पन्न होता है, उसे सन्धि कहते हैं। संयोग और सन्धि में भेद है। संयोग केवल व्यंजनों में होता है। दो व्यंजनों का जब संयोग होता है तब वे ज्यों के त्यों रहते हैं और उनमें कोई विकार उत्पन्न नहीं होता; जैसे—'त्' और 'न' के संयोग से 'त्न' होता है। लेकिन सन्धि में उच्चारण के नियमानुसार दो अक्षरों के परस्पर मेल से उनके स्थान पर कोई अन्य ही अक्षर उत्पन्न होता है; जैसे –'त्' और 'न' की सन्धि से 'न्न' होता है।

सन्धि संस्कृत व्याकरण का एक प्रधान अंग है। इसलिये सन्धि में हमें संस्कृत के नियमों का पालन करना चाहिये। स्मरण रहे, विजातीय शब्दों में सन्धि नहीं होना चाहिये; जैसे—जिला + अधीश = जिलाधीश। यह प्रयोग ठीक नहीं है। क्योंकि जहाँ 'अधीश' शब्द संस्कृत है, वहाँ 'जिला' शब्द हिन्दी का है। सन्धि में यह आवश्यक है कि दोनों शब्द एक ही जाति के हों, जैसे मण्डल + अधीश = मण्डलाधीश। यहाँ दोनों ही शब्द संस्कृत के हैं। दूसरी बात यह है कि संस्कृत व्याकरण में सन्धि के जितने नियमों का विधान है, हिन्दी व्याकरण में उन नियमों का निर्धारण आवश्यक नहीं है क्योंकि संस्कृत के जो शब्द हिन्दी में प्रयुक्त होते हैं, उन्हीं शब्दों से सम्बन्धित नियमों का विधान आवश्यक है।

सन्धि के तीन भेद हैं—(१) स्वर-सन्धि, (२) व्यंजन-सन्धि और (३) विसर्ग-सन्धि।

(१) स्वर के साथ स्वर के संयोग से जो विकार होता है, उसे स्वर-सन्धि कहते हैं; जैसे—परम + अर्थी = परम् + अ + अ + र्थी = परमार्थी।

(२) व्यंजन के साथ स्वर या व्यंजन के संयोग से जो विकार होता है, उसे व्यंजन-सन्धि कहते हैं; जैसे—दिक् + गज = दिग् + गज = दिग्गज, दिक् + अन्त = दिग् + अन्त = दिगन्त।

(३) विसर्ग के साथ स्वर या व्यंजन के संयोग से जो विकार होता है, उसे विसर्ग-सन्धि कहते हैं, जैसे—मनः + हर = मनोहर।

स्वर-सन्धि

स्वर-सन्धि के पाँच भेद हैं—(१) दीर्घ, (२) गुण, (३) वृद्धि, (४) यण और (५) अयादि।

(१) दीर्घ—जब समान दो स्वर, चाहे ह्रस्व या दीर्घ मिलते हैं, तब दोनों के बदले एक समान दीर्घ स्वर होता है; जैसे—

(क) अ और अ की सन्धि—

अ + अ = आ; सुख + अन्त = सुखान्त; धर्म + अर्थी = धर्मार्थी।

अ + आ = आ; धर्म + आत्मा = धर्मात्मा; रत्न + आगार = रत्नागार।

आ + अ = आ; शिक्षा + अर्थी = शिक्षार्थी; रेखा + अंकन = रेखांकन।

आ + आ = आ; दिवा + आकर = दिवाकर, प्रभा + आकर = प्रभाकर।

(ख) इ और ई की सन्धि—

इ + इ = ई; रवि + इन्द्र = रवीन्द्र; छवि + इन्द्र = छवीन्द्र।

इ + ई = ई; कवि + ईश्वर = कवीश्वर, मुनि + ईश = मुनीश।

ई + इ = ई; मही + इन्द्र = महीन्द्र, शची + इन्द्र = शचीन्द्र।

ई + ई = ई; फणी + ईश्वर = फणीश्वर; नदी + ईश = नदीश।

(ग) उ और ऊ की सन्धि—

उ + उ = ऊ; मधु + उत्सव = मधूत्सव ।

उ + ऊ = ऊ; लघु + ऊर्मि = लघूर्मि ।

ऊ + उ = ऊ; वधू + उत्सव = वधूत्सव ।

ऊ + ऊ = ऊ; भू + ऊर्ध्व = भूर्ध्व ।

(घ) ऋ और ऋ की सन्धि—

मातृ + ऋण = मातॄण । लेकिन 'मातृण' रूप भी प्रचलित है । इससे ज्ञात होता है कि दीर्घ ॠ की आवश्यकता नहीं है । हिन्दी में ऋ के सन्धियुक्त शब्द अत्यल्प हैं ।

(२) गुण—यदि अ या आ के आगे इ या ई हो तो दोनों मिलकर ए; उ या ऊ हो तो दोनों मिलकर ओ और ऋ रहे तो अर् होता है । इस विकार को गुण कहते हैं, जैसे—

अ + इ = ए; अमर + इन्द्र = अमरेन्द्र; नर + इन्द्र = नरेन्द्र ।

अ + ई = ए; अमर + ईश = अमरेश; नर + ईश = नरेश ।

आ + इ = ए; महा + इन्द्र = महेन्द्र; रमा + इन्द्र = रमेन्द्र ।

आ + ई = ए; महा + ईश = महेश; रमा + ईश = रमेश ।

अ + उ = ओ; चन्द्र + उदय = चन्द्रोदय; सूर्य + उदय = सूर्योदय ।

अ + ऊ = ओ; नद + ऊर्मि = नदोर्मि; नीर + ऊर्मि = नीरोर्मि ।

आ + उ = ओ; महा + उदय = महोदय; महा + उच्चारण = महोच्चारण ।

आ + ऊ = ओ; गंगा + ऊर्मि = गंगोर्मि; यमुना = ऊर्मि = यमुनोर्मि ।

अ + ऋ = अर्; सुर + ऋषि = सुरर्षि; देव + ऋषि = देवर्षि ।

आ + ऋ = अर्; महा + ऋषि = महर्षि; दिव्या + ऋतु = दिव्यर्तु ।

अपवाद—प्र उपसर्ग के आगे ऊढ़ और ऊढ़ि रहने पर अ, ऊ के मिलने पर 'औ' वृद्धि होती है न कि 'ओ' गुण । जैसे—प्र + ऊढ़ = प्रौढ़ । प्र + ऊढ़ि = प्रौढ़ि ।

(३) वृद्धि—यदि ह्रस्व अथवा दीर्घ आकार से परे ए, ऐ, ओ अथवा औ हो तो अ, ए या अ, ऐ मिलकर ऐ और अ ओ या अ, औ मिलकर औ होता है; इस विकार को वृद्धि कहते हैं; जैसे—

अ + ए = ऐ; एक + एक = एकैक ।

अ + ऐ = ऐ; विचार + ऐक्य = विचारैक्य ।

आ + ए = ऐ; तथा + एव = तथैव ।

आ + ऐ = ऐ; महा + ऐश्वर्य = महैश्वर्य ।

अ + ओ = औ; जल + ओघ = जलौघ ।

अ + औ = औ; परम + औदार्य = परमौदार्य ।

आ + ओ = औ; महा + ओषधि = महौषधि ।

आ + औ = औ; महा + औदार्य = महौदार्य ।

अपवाद—यदि अ या आ से परे ओष्ठ शब्द हो तो अ या आ से ओष्ठ के मिलने पर औष्ठ नहीं होता है; जैसे–विम्ब + ओष्ठ = बिम्बौष्ठ नहीं बल्कि बिम्बोष्ठ होता है ।

(४) यण्—यदि ह्रस्व अथवा दीर्घ इकार, उकार या ऋकार के बाद कोई भिन्न स्वर हो तो ह्रस्व अथवा दीर्घ इकार, उकार या ऋकार के स्थान पर क्रमश: य्, व् और र् होता है । इस विकार को यण् कहते हैं, जैसे—

(क) इ + अ = य; सम्मति + अर्थ = सम्मत्यर्थ; गति + अवरोध = गत्यवरोध ।

ई + अ = य; नदी + अन्तर = नद्यन्तर; गोपी + अर्थ = गोप्यर्थ ।

इ + आ = या; इति + आदि = इत्यादि; रवि + आलोक = रव्यालोक ।

ई + आ = या; देवी + आगम = देव्यागम; नदी + आगम = नद्यागम ।

इ + उ = यु; प्रति + उपकार = प्रत्युपकार; अभि + उदय = अभ्युदय ।

ई + उ = यु; देवी + युक्त = देव्युक्त; नारी + युक्त = नार्युक्त ।

इ + ऊ = यू; नि + ऊन = न्यून; वि + ऊह = व्यूह ।

ई + ऊ = यू; नदी + ऊर्मि = नद्यूर्मि; वापी + ऊर्मि = वाप्यूर्मि ।

ई या इ + ए = ये; प्रति + एक = प्रत्येक ।

इ + ऐ = यै; अति + ऐश्वर्य = अत्यैश्वर्य; छवि + ऐश्वर्य = छव्यैश्वर्य ।

ई + ऐ = यै; नारी + ऐश्वर्य = नार्यैश्वर्य; देवी + ऐश्वर्य = देव्यैश्वर्य ।

(ख) उ + अ = व; अनु + अय = अन्वय ।

उ + आ = वा; सु + आगत = स्वागत ।

उ + इ = वि; अनु + इत = अन्वित ।

उ + ए = वे; अनु + एषण = अन्वेषण ।

(ग) ऋ + अ = र; पितृ + अनुमति = पित्रनुमति ।

ऋ + आ = रा; मातृ + आनन्द = मात्रानन्द ।

(५) अयादि — यदि ए, ऐ, ओ या औ से परे कोई स्वर हो तो इनकी जगह क्रमशः अय्, आय्, अव्, या आव् होता है । इस विकार को अयादि कहते हैं; जैसे—

ने + अन = न् + ए + अ + न = न् + अय् + अन = नयन ।

गै + अन = ग् + ऐ + अ + न = ग् + आय् + अ + न = गायन ।

गो + ईश = ग् + ओ + ई + श = ग् + अव् + ई + श = गवीश ।

नौ + इक = न् + औ + इ + क = न् + आव् + इ + क = नाविक ।

पो + इत्र = प् + ओ + इ + त्र = प् + अव् + इ + त्र = पवित्र ।

भौ + उक = भ् + औ + उ + क = भ् + आव् + उ + क = भावुक ।

पो + अन = प् + ओ + अ + न = प् + अव् + अ + न = पवन ।

पौ + अक = प् + औ + अ + क = प् + आव् + अ + क = पावक ।

टिप्पणी—यदि ए या ओ से परे अ हो तो अ का लोप होता है और उसकी जगह लुप्त अकार (ऽ) का चिह्न होता है; जैसे—ते + अपि = तेऽपि । यह नियम संस्कृत व्याकरण में ही प्रचलित है, हिन्दी व्याकरण में इसका प्रचलन अधिक नहीं है । किन्तु, मनोऽधिकरण, मनोऽभिलाष, मनोऽनुकूल आदि प्रयोग चलते हैं ।

अभ्यास

(१) सन्धि करें—युग + अन्त । कुश + आसन । विद्या + अभ्यास । रेखा + अंश । चंचला + आगार । कवि + ईश्वर । महा + इन्द्र । विधु + उदय । लघु + ऊर्मि । सिन्धु + ऊर्मि । रमा + इन्द्र । हिम + ऋतु । प्र + ऊढ़ । परम + औदार्य । महा + औषधि । देवी + आराधना । सखी + ऐश्वर्य ।

(२) सन्धि - विच्छेद करें—पावन, गवीश, नयन, नाविक, मन्वन्तर, देव्युचित, देव्यर्चना, प्रत्युपकार, सम्मत्यर्थ, गत्यवरोध, न्यून, प्रत्येक ।

(३) सन्धि किसे कहते हैं ?

व्यंजन-संधि

(१) यदि किसी वर्ग के प्रथम वर्ण के बाद कोई अनुनासिक वर्ण हो तो प्रथम वर्ण की जगह उसी वर्ग का अनुनासिक वर्ण होता है; जैसे—

वाक् + मय = वाङ् + मय = वाङ्मय ।
चित् + मय = चिन् + मय = चिन्मय ।
अप् + मय = अम् + मय = अम्मय ।
षट् + मास = षण् + मास = षण्मास ।
तत् + मय = तन् + मय = तन्मय ।

(२) यदि क्, च्, ट्, या प् के बाद घोष, अन्तःस्थ या स्वर वर्ण हो तो क्, च्, ट्, या प् की जगह क्रमशः ग्, ज्, ड् या ब् होता है; जैसे—

दिक् + गज = दिग् + गज = दिग्गज ।
अच् + अन्त = अज् + अन्त = अजन्त ।
षट् + दर्शन = षड् + दर्शन; षट् + रिपु = षड्रिपु ।
अप् + ज = अब् + ज = अब्ज; प्अ + द = अब् + द = अब्द ।

(३ यदि त् के बाद ग, घ, द, ध, ब, भ, य, र, व, अथवा स्वर वर्ण हो तो त् की जगह द् होता है; जैसे—

जगत् + ईश = जगद् + ईश = जगदीश ।
सत् + गति = सद् + गति = सद्गति ।
उत् + घाटन = उद्घाटन ।
उत् + दण्ड = उद्दण्ड ।
पत् + धर = पद्धर ।
भगवत् + भजन = भगवद् + भजन = भगवद्भजन ।
तत् + रूप = तद् + रूप = तद्रूप ।
उत् + अय = उद् + अय = उदय ।
भविष्यत् + वाणी = भविष्यत्वाणी ।

(४) यदि छ के पहले ह्रस्व स्वर हो तो छ की जगह च्छ होता है और यदि दीर्घ स्वर हो तो विकल्प से होता है; जैसे—

तरु + छाया = तरुच्छाया; परि + छेद = परिच्छेद ।
लक्ष्मी + छाया = लक्ष्मीच्छाया या लक्ष्मीछाया ।

५. (क) यदि त् या द्, के बाद च या छ हो तो त् या द् च् में, ज या झ हो तो ज् में, ट या ठ हो तो ट् में और ड या ढ हो तो ड् में बदलता है; जैसे–

शरत् + चन्द्र = शरच्चन्द्र । शरद् + छवि = शरच्छवि ।

विपद् + जाल = विपज्जाल ।

सत् + जन = सज्जन ।

तत् + टीका = तट्टीका ।

उत् + डीन = उड्डीन ।

(ख) यदि त् या द् के बाद ल हो तो त या द् की जगह ल् होता है; जैसे– उत् + लंघन = उल्लंघन; तत् + लीन = तल्लीन ।

सत् + लाभ = सल्लाभ; विद्युत् + लेखा = विद्युल्लेखा ।

(ग) यदि त् या द् के बाद श हो तो त् या द् के स्थान पर च् होता है और श के स्थान पर छ होता है; जैसे–

उत् + शिष्ट = उच्छिष्ट; श्रीमत् + शंकर = श्रीमच्छंकर ।

श्रीमत् + शरच्चन्द्र = श्रीमच्छरच्चन्द्र; सत् + शास्त्र = सच्छास्त्र ।

(घ) यदि त् या द् के बाद ह हो तो त या द् के स्थान पर द् होता है और ह के स्थान पर ध होता है; जैसे–

उत् + हार = उद्धार; तत् + हित = तद्धित ।

उत् + हरण = उद्धरण; महत् + हेम = महद्धेम ।

(६) यदि म् के बाद अन्तःस्थ या ऊष्म वर्णों के सिवा कोई अन्य वर्ण हो तो म् के स्थान पर विकल्प से अनुस्वार या उसी वर्ण का अनुनासिक वर्ण होता है; जैसे –

अहम् + कार = अहंकार या अहङ्कार ।

सम् + गम = संगम या सङ्गम । सम् + चय = संचय, सञ्चय ।

सम् + कल्प = संकल्प या सङ्कल्प । सम् + ताप = संताप, सन्ताप ।

सम + पूर्ण = संपूर्ण या सम्पूर्ण ।

(७) यदि म् के बाद अन्तःस्थ या ऊष्म वर्ण हो तो म् अनुस्वार में बदलता है; जैसे - सम् + वाद = संवाद; सम् + योग = संयोग ।

सम्+यम=संयम। सम्+हार=संहार। सम्+शय=संशय। सम्+सार=संसार।

टिप्पणी—अब कुछ नये लेखक संवाद की जगह 'सम्वाद' लिखने लग पड़े हैं, जो सर्वथा गलत है।

(८) यदि ऋ, र या ष के बाद न हो और इनके मध्य में कोई स्वर या कवर्ग या पवर्ग या अनुस्वार या य या व या ह हो तो न की जगह ण होता है; जैसे—

भूष्+अन=भूषण, राम+अयन=रामायण।

प्र+मान=प्रमाण, परि+नाम=परिणाम।

परि+मान=परिमाण, चान्द्र=अयन=चान्द्रायण।

(९) यदि किसी शब्द में स हो और उसके पूर्व अ या आ के सिवा कोई भिन्न स्वर हो तो स के स्थान पर ष होता है; जैसे—

वि+सम=विषम, अभि+सेक=अभिषेक।

सु+समा=सुषमा, वि+साद=विषाद।

अभ्यास

(१) सन्धि-विच्छेद करें--दिग्गज, वागीश्वर, अजन्त, षडानन, षड्रिपु, अब्ज, अब्द, वाङ्मय, षण्मास, अम्मय, जगन्निर्माता, जगन्नाथ, सदिच्छा, जगदीश्वर, उद्गम, जगद्धर्म, तद्रूप, उच्चारण, शरच्चन्द्र, वृहच्छत्र, विपज्जाल, तल्लीन, श्रीमच्छंकर, सच्छास्त्र, उद्धरण, महात्मा, तृष्णा।

विसर्ग-सन्धि

१. यदि विसर्ग के पहले इ या उ हो और आगे क, ख, प या फ हो तो विसर्ग ष् में बदलता है। लेकिन विसर्ग के पहले यदि इ या उ के सिवा कोई भिन्न स्वर हो तो आगे क, ख, प और फ के होने पर भी विसर्ग ज्यों का त्यों रहता है; जैसे—

निः+काम=निष्काम; निः+कण्टक=निष्कण्टक।

निः+पंक=निष्पंक; निः+फल=निष्फल।

दुः+प्रकृति=दुष्प्रकृति; दुः+पाप=दुष्पाप।

अन्तः+पुर=अन्तःपुर; रजः+कण=रजःकण।

अपवाद (क) नमः+कार = नमस्कार। (ख) दुः+ख = दुःख।
(ग) पुरः+कृत = पुरस्कृत। (घ) मनः+काम = मनस्काम।

टिप्पणी—कुछ लोग 'मनोकामना' का प्रयोग करते हैं। यह सन्धि-नियम से गलत है, इसका शुद्ध रूप 'मनस्कामना' है।

(२) यदि विसर्ग के बाद च या छ हो तो विसर्ग की जगह श्, ट या ठ, हो तो ष् और त या थ हो, तो स् होता है, जैसे

निः+चय = निश्चय; निः+छल = निश्छल।
धनुः+टङ्कार = धनुष्टङ्कार, निः+तार = निस्तार।

(३) यदि विसर्ग के बाद, श, ष, स हो तो विसर्ग क्रमशः श्, ष् या स् में बदलता है अथवा ज्यों का त्यों रहता है; जैसे–

दुः+शासन = दुश्शासन या दुःशासन।
दुः+साहस = दुस्साहस या दुःसाहस।
बहिः+षट् = बहिष्षट् या बहिःषट्।

(४) यदि विसर्ग के पहले अ हो और आगे किसी वर्ग का तृतीय, चतुर्थ, पंचम या य, र, ल, व या ह हो तो विसर्ग ओ में बदलता है। लेकिन यदि विसर्ग के पहले अ और आगे भी अ हो तो विसर्ग ओ में बदलता है तथा विसर्ग के आगे अ का रूप का लुप्ताकार (ऽ) होता है; जैसे–

मनः+रम = मनोरम; मनः+हर = मनोहर।
मनः+भव = मनोभव; मनः+ज = मनोज।
सरः+ज = सरोज; उरः+ज = उरोज।
मनः+योग = मनोयोग; मनः+रथ = मनोरथ।
मनः+नयन = मनोनयन; मनः+वांछित = मनोवांछित।
मनः+अभिलाष = मनोऽभिलाष; मनः+अनुसार = मनोऽनुसार।

(५) यदि विसर्ग के पहले अ या आ के सिवा कोई भिन्न स्वर हो और आगे कोई घोष-वर्ण हो तो विसर्ग र् में बदल जाता है; जैसे–

निः+गुण = निर्गुण; बहिः+मुख = बहिर्मुख।
निः+आश = निराश; निः+धन = निर्धन।
निः+बल = निर्बल; निः+मल = निर्मल।
निः+आधार = निराधार; निः+आकार = निराकार।
निः+उपाय = निरुपाय; दुः+उपयोग = दुरुपयोग।

निः + अर्थक = निरर्थक; निः + विकार = निर्विकार ।
निः + आनन्द = निरानन्द; निः + ईश्वर = निरीश्वर ।

(६) यदि विसर्ग के बदले र् प्रयुक्त हो और र् के बाद र हो तो पहला र लुप्त हो जाता है और उसके पूर्व का ह्रस्व स्वर दीर्घ हो जाता है, जैसे–

निः या निर् + राग = निराग; निः या निर् + रस = नीरस ।
निः या निर् + रन्ध्र = नीरन्ध्र; पुनः + रचना = पुनारचना ।
अन्तः या अन्तर् + राष्ट्रीय = अन्ताराष्ट्रीय ।

टिप्पणी– कुछ लेखक 'अन्ताराष्ट्रीय' लिखते हैं और कुछ 'अन्तर्राष्ट्रीय' । नियमतः पहला रूप शुद्ध है । अब कुछ व्यक्ति 'अन्तर राष्ट्रीय' लिखने लगे हैं । जिसमें 'र' पूरा सस्वर होता है, यह 'अन्तर' शब्द अन्यार्थक है ।

(७) यदि अकार के आगे विसर्ग हो और उसके आगे अ के सिवा कोई और स्वर हो तो विसर्ग लुप्त होता है, जैसे - अतः + एव = अतएव ।

(८) कभी-कभी विसर्ग के स्थान पर स का भी प्रयोग होता है । इसलिए विसर्ग सन्धि का चौथा नियम स् के साथ भी लगता है; जैसे–

अधस् + गति = अधः + गति = अधोगति ।
मनस् + योग = मनः + योग = मनोयोग ।
निस् + गुण = निः + गुण = निर्गुण ।

(९) अन्त्य र् के स्थान पर भी विसर्ग होता है । यदि र् के आगे अघोषवर्ण हो तो विसर्ग में कोई विकार नहीं होता और घोष वर्ण हो तो र् ज्यों का त्यों रहता है, जैसे—

पुनर् + जन्म = पुनर्जन्म; पुनर + उक्ति = पुनरुक्ति ।
अन्तर् + करण = अन्तःकरण; अन्तर् + पुर = अन्तःपुर ।
प्रातर् + काल = प्रातःकाल; अन्तर् + कामना = अन्तःकामना ।

अभ्यास

१. सन्धि-विच्छेद करें –पुनर्जन्म, अन्तःपुर, यशोदा, निर्गुण, वहिर्मुख, अतएव, पुनारचना, निरोग, नीरस, निर्दय, निराश, मनोयोग, दुष्कर्म, दुष्कर, अन्तश्चक्षु, निश्छल और निष्पाप ।

२. इनकी शुद्ध सन्धियाँ बनायें–नीर्गुण, नीर्धन, दूस्तर, अन्तःकरन, नअन, उपरोक्त, दुरावस्था, भपन यग्य, प्रतिछाया, गिरिन्द्र, कविन्द्र, रविन्द्र, जगरनाथ, परुपकार, आकृस्ट, विसम, गन्यावरोध सम्वाद, सदगति, संधार, सतटीका, सन्यास ।

द्वितीय विभाग

शब्द-साधन

शब्द-विचार

शब्द-साधन—व्याकरण के जिस विभाग में शब्दों की अवस्था, रूपान्तर, निर्माण, व्युत्पत्ति आदि के नियमों का निरूपण होता है, उसे शब्द-साधन कहते हैं।

शब्द—कानों से जो ध्वनि सुनाई पड़ती है, उसे शब्द कहते हैं। शब्द दो तरह के होते हैं—ध्वन्यात्मक और वर्णात्मक। ध्वन्यात्मक शब्द ध्वनिप्रधान होते हैं यानी जिन शब्दों के अक्षर स्पष्ट रूप में सुनाई न पड़ें, उन्हें ध्वन्यात्मक कहते हैं और वर्णात्मक शब्द वर्ण-प्रधान होते हैं यानी जिन शब्दों के अक्षर स्पष्ट रूप में सुनाई पड़ें, उन्हें वर्णात्मक कहते हैं।

भाषा में ध्वन्यात्मक शब्दों का कोई खास महत्त्व नहीं होता, इसलिये इसमें केवल वर्णात्मक शब्दों की विवेचना होती है। यही कारण है, व्याकरण में 'शब्द' का अभिप्राय केवल वर्णात्मक शब्द से होता है। ऐसे शब्दों के दो भेद हैं—(क) सार्थक और (ख) निरर्थक। जिन शब्दों का कुछ अर्थ होता है उन्हें सार्थक कहते हैं; जैसे— अरविन्द, अमरेश, कमल, रवीन्द्र, अनिल आदि। जिन शब्दों का अर्थ नहीं होता, उन्हें निरर्थक कहते हैं; जैसे—खर्र, भर्र, हर्र, हाँय आदि। कभी-कभी निरर्थक शब्दों का भी प्रयोग सार्थक शब्द के समान होता है। इस स्थिति में निरर्थक शब्द सार्थक हो जाते हैं; जैसे—अरे श्याम, कुछ पान-वान खिलाओगे या नहीं ? क्या अल्ल-बल्ल बकते हो ?

शब्द-भण्डार—शब्द भाषा का एक प्रधान आधार है क्योंकि मनुष्य अपने मनोगत भावों को भाषा के द्वारा व्यक्त कर सकता है, जिसमें शब्दों का ही उपयोग होता है अथवा यों कहा जाय कि संसार के सभी प्राणियों, वस्तुओं, धर्मों और उनके सभी तरह के सम्बन्धों को प्रकट करने के लिये शब्दों की उपयोगिता से

इन्कार नहीं किया जा सकता। यही कारण है, व्याकरण में शब्द एक प्रमुख विषय के रूप में मान्य है। जिस भाषा का शब्द भण्डार जितना ही विस्तृत और समृद्ध होता है, वह भाषा उतनी ही सर्वाङ्गीण, सुन्दर और आदरणीय होती है और जिस भाषा का शब्द-भण्डार अल्प होता है, उस भाषा में संसार के विभिन्न क्षेत्र के ज्ञान-विज्ञान, पदार्थों और उनके बारे में अपने विचारों की स्पष्ट अभिव्यक्ति करने में अत्यन्त कठिनाई का अनुभव करना पड़ता है। अभिप्राय यह है कि जो भाषा सार्थक ध्वनि को शब्द का रूप देने के लिये अपने साधन से सम्पन्न है, वह भाषा दीर्घजीवी होगी। वस्तुतः सजीव भाषा नदी की भाँति प्रवाहित होती है। जिस प्रकार प्रवहमान नदी अपनी वेगवती धारा में सहायक नदियों के जल को आत्मसात् कर लेती है, उसी प्रकार सजीव भाषा अन्य भाषाओं के शब्दों को पचा डालती है। हमारी हिन्दी एक सजीव भाषा है, इसलिये इसमें अनेक प्रकार के शब्द प्रयुक्त होते हैं।

व्युत्पत्ति के अनुसार शब्द के प्रधानतः चार भेद हैं :—

(क) तत्सम, (ख) तद्भव, (ग) देशज, और (घ) विदेशज।

(क) संस्कृत के जो शब्द अपने वास्तविक रूप में हिन्दी में प्रयुक्त होते हैं, वे तत्सम कहलाते हैं, जैसे—अग्नि, वायु, देव, पवन, समीरण आदि।

(ख) संस्कृत के जो शब्द अपने विकृत रूप में हिन्दी में प्रयुक्त होते हैं, वे तद्भव कहलाते हैं; जैसे—आग (तत्सम—अग्नि), खेत (तत्सम—क्षेत्र), हाथ (तत्सम—हस्त) आदि।

(ग) देशज शब्द वे हैं जिनका मूल संस्कृत में नहीं है और जो ग्रामीण तथा प्रान्तीय भाषाओं से आकर हिन्दी में प्रयुक्त होते हैं; जैसे—

१. प्राकृत के शब्द - पेट, बाप, ऊँघना, कोट आदि।

२. प्रान्तीय भाषाओं के शब्द—चालू, लागू (मराठी) आदि।

३. ग्रामीण शब्द—डोंगी, डाभ, खटखट आदि।

४. अनुकरणवाचक शब्द—टर्रटर्राहट, खड़खड़ाहट, भनभनाहट आदि।

(घ) विदेशी भाषाओं के जो शब्द हिन्दी में प्रयुक्त होते हैं, विदेशज कहलाते हैं; जैसे—

१. अरबी के शब्द—नकल, माफ, फकीर, गरीब आदि।

२. फारसी के शब्द—खरीद, दस्तावेज, बन्दोबस्त आदि।

३. अँगरेजी के शब्द—कलक्टर, रेल, टिकट, सिगनल, स्टेशन, पेन्सिल आदि।

४. पुर्तगीज के शब्द—कमरा, गिरजा, आलमारी, बोतल आदि।

५. तुर्की के शब्द—तोप।

यहाँ कतिपय तत्सम, प्राकृत और अपभ्रंश शब्द दिये जाते हैं।

संस्कृत	प्राकृत	अपभ्रंश
मृत्यु	मिच्चु	मीच
पक्व	पक्कु	पका
कीटक	कीडौ, किडा	कीड़ा
प्रेक्षण	पेक्खण	पेखणा (पंजाबी)
शय्या	सेज्जा	सेज
गर्भिणी	गब्भिणी	गाभिन
सूर्य	सुज्ज	सूरज
दण्ड	डण्ड	डंडा
मक्षिका	मक्खिआ	मक्खी
निष्ठुर	णिट्ठुर	निठुर
मक्षिका	मच्छिआ	माछी
दृष्टि	दिट्ठी	दीठ
पुस्तक	पोत्थिआ	पोथी
मध्य	मज्झ	माँझ
प्रस्तर	पत्थर	पाथर
मृत	मिओ	मुआ

संस्कृत	प्राकृत	अपभ्रंश
दंष्ट्रा	दाढ़ा	डाढ़, दाढ़
नृत्य	नच्च	नाच
भगिणी	भइणी, बहिणी	बहन
वृक्ष	रूक्ख	रूख
षष्ठि	सट्ठि	साठ
जामातृक	जमाउअ	जमाई
सप्तति	सत्तरि	सत्तर
मधूक	महुअ	महुआ
अशीति	असीइ	अस्सी
ईक्षु	इक्खु	ऊख
नवति	नव्वए	नव्वे
पृथिवि	पुहवी	पुहमी
शत	सत	सौ
चलन्ति	चलन्ति	चलें
लक्ष	लक्ख	लाख
चलथ	चलह	चलो
अर्बुद	अब्बुअ	अरव
कोऽपि	कोवि	कोई
चलामः	चलामो	चलें
आत्मन्	अप्पाण	आप
राजन्	राए	राय
चलन्तु	चलन्तु	चलें
राजदूत	राअउत	राउत
एतादृश	एअरिस	ऐसा
क्षत्रिय	खत्तिअ	खत्री

संस्कृत	प्राकृत	अपभ्रंश
कृत	करिअ, किअ	किया
स्थित	ठाइ, थाइ	था
वर्तते	वट्टइ	बाटै
पंचाशत	पंचासा, पण्णासा	पचास
पुष्कर	पोक्खड़	पोखर
चत्वारिंशत	चत्तालीसा	चालीस
तीक्ष्ण	तिक्खअ	तीखा
त्रिंशत	तीसआ, तीसा	तीस
अक्षि	अक्खि	आँख
विंशति	वीसइ	बीस
स्कन्ध	कन्ध	कन्धा
एकादश	एआरह	ग्यारह
शून्य	सुण्ण	सूना
त्रीणि	तिणि	तीन
कर्ण	करण	कान
एक	एओ, एक्क	एक
रश्मि	रस्सि	रास, रस्सी
	सुन्नआर	सोनार
जन्म	जम्म	जनम
दुग्ध	दुद्ध	दूध
सर्व	सव्व	सब
गुह्य	गुज्झ	गुह
क्षेत्र	खेत्त	खेत
अद्य	अज्ज	आज
हस्त	हत्थ	हाथ
बन्ध्या	बंभझा	बाँझ
जिह्वा	जिब्भा	जीभ, जी

संस्कृत	प्राकृत	अपभ्रंश
संध्या	संझा	साँझ
स्तन	थण	थन
अग्नि	अग्गि	आग
कन्दुक	गेन्दुअ	गेन्द
अर्क	अक्क	आक
लग्न	लग्ग	लगन
अस्थि	अट्ठी	हड्डी, आँठी
त्रुट्	टुट्ट	टूट
अँगुली	अंगुरी	उंगली
मुद्ग	मुग्ग	मूँग
अन्य	अण्ण	आन
मस्तक	मत्थअ	माथा
अश्रु	अंस्सू	आँसू
मक्षण	मक्खन	मक्खन
कर्म	कम्म	काम
कार्य	कज्ज	काज
निम्ब	निम्म	नीम
आम्र	अम्म, अमिओ	आम
कैवर्त्त	केवट्टओ	केवट
कुंभकार	कुंभआरो	कुम्हार
कुंचिका	कुंजिआ	कुंजी
कृष्ण	कान्ह	कन्हैया
श्मशान	मशान	मसान
श्यष्टिका	लट्ठिया	लाठी
कुक्षि	कोक्खि	कोख
कपर्दिका	कवड्डिआ	कौड़ी
हरिद्रा	हलिद्दिआ	हल्दी
पर्यङ्क	पल्यंक	पलंग

संस्कृत	प्राकृत	अपभ्रंश
कीट	कीड़अ	कीड़ा
कर्त्तन	कट्टण	काटना
रात्रि	रत्ति	रात
काष्ठ	कट्ठ	काठ
कर्पूर	कप्पूर	कपूर
कर्त्तरिका	कट्टरिआ	कटारी
कूर्चिका	कुच्चिआ	कूची
कदम्ब	कदम्म	कदम
सूत्र	सुत्त	सूत
पुत्र	पुत्त	पूत
शलाका	सलाइआ	सलाई
हीरक	हीरअ	हीरा
गंभीर	गहीर	गहरा
प्रक्षालन	पक्खालण	पखारन
वाटिका	वाड़िआ	वाड़ी
घोटक	घोडअ	घोड़ा
हस्तिन्	हत्थि	हाथी
बधू	वहू	वहू
आखेटिक	अहेरिअ	अहेरी
वर्ध	वड्ढ	वढ़ाना
पीठिका	पीड़िआ	पीढ़ा
खटिका	खडिया	खड़िया
स्फोट	फोड	फोड़ना
वृद्ध	बुड्ढअ	बूढ़ा
आर्यिका	आयिआ	आजी
कर्नाटिका	कण्णड़िया	कनाड़ी

टिप्पणी – यहाँ अपभ्रंश का अर्थ कुछ शती पूर्व प्रचलित भाषा-विशेष नहीं है बल्कि शब्दों के अपभ्रंश या तद्भव रूप है ।

अरबी, फारसी, अँगरेजी आदि के शब्द भी तत्सम और तद्भव दोनों रूपों में प्रयुक्त होते हैं; जैसे—

तत्सम	तद्भव	तत्सम	तद्भव
दारोगा	दरोगा	उम्र	उमर
मैजिस्ट्रेट	मजिस्टर	हास्पिटल	अस्पताल
गर्दन	गरदन	पैसिंजर	पसिंजर
फिक्र	फिकर	जिक्र	जिकर
बर्दाश्त	बरदाश्त	दर्ख्वास्त	दरखास्त
सिगनल	सिंगल	लैन्टर्न	लालटेन

शब्दांश, वाक्य और वाक्यांश—अक्षरों के मेल से शब्द बनते हैं; जैसे—ग और ज के मेल से गज और जग दो शब्द बन सकते हैं। कोई सार्थक अक्षर भी शब्द के रूप में प्रयुक्त हो सकता है; जैसे—ग गमन करने वाले के अर्थ में। भाषा में ऐसी वर्णात्मक ध्वनियाँ भी हैं जो स्वयं सार्थक नहीं होतीं परन्तु जब अन्य सार्थक शब्दों के साथ संयुक्त होती हैं, तब सार्थक होती हैं। ऐसी परतंत्र ध्वनियाँ शब्दांश कहलाती हैं, जैसे—वि, प्र, नि, ता, त्व आदि।

जो शब्दांश किसी शब्द के आरंभ में संयुक्त होता है, उपसर्ग कहलाता है; जैसे—वि + कास, विकास = प्र + बल = प्रबल, नि + दान = निदान। यहाँ 'वि', 'प्र' और 'नि' उपसर्ग हैं क्योंकि ये 'कास', 'बल' और 'दान' शब्दों के आरंभ में क्रमशः संयुक्त हुए हैं।

जो शब्दांश किसी शब्द के अन्त में संयुक्त होता है प्रत्यय कहलाता है; जैसे मनुष्य + ता = मनुष्यता, पुरुष + त्व = पुरुषत्व। यहाँ 'ता' और त्व' प्रत्यय हैं क्योंकि ये 'मनुष्य' और 'पुरुष' शब्दों के अन्त में क्रमशः संयुक्त हुए हैं।

शब्दांशों के संयोग से मूल शब्दों के रूप में अन्तर होता है, जिसे रूपान्तर कहते हैं।

वाक्य—किसी पूर्ण विचार को व्यक्त करने के लिये हमें एक ही समय में कई शब्द लगातार बोलने पड़ते हैं, क्योंकि एक समय में एक शब्द से पूर्ण विचार की अभिव्यक्ति नहीं होती। एक पूर्ण विचार व्यक्त करने वाले योग्य शब्दों के समूह को वाक्य कहते हैं; जैसे—'अमरेश बहुत चंचल बालक है।'

वाक्यांश--परस्पर सम्बन्धित दो या अधिक शब्दों को, जिनसे किसी पूर्ण-विचार की अभिव्यक्ति नहीं होती, वाक्यांश कहते हैं; जैसे--अँधेरी रात में।

शब्दों के भेद---रूपान्तर के अनुसार सार्थक शब्दों के दो भेद हैं--

(१) विकारी और (२) अविकारी।

(१) जो शब्द लिंग, वचन, कारक आदि के कारण रूपान्तरित या विकृत नहीं होते, अविकारी या अव्यय कहलाते हैं और जिनमें लिंग, वचन, कारक आदि के कारण विकार हो जाता है, वे विकारी होते हैं। विकारी शब्दों के चार भेद हैं।

(क) संज्ञा---किसी वस्तु या व्यक्ति के नाम को संज्ञा कहते हैं; जैसे—गाय, हिमालय, अरविन्द, अमरेश आदि।

(ख) सर्वनाम—जिस शब्द का प्रयोग संज्ञा के बदले में हो, उसे सर्वनाम कहते हैं, जैसे—यह, वह, मैं आदि।

(ग) विशेषण—जो शब्द संज्ञा की विशेषता या गुण प्रकट करते हैं, उन्हें विशेषण कहते हैं जैसे-- कोमल, मधुर, लाल, हरा आदि।

(घ) क्रिया—जिन शब्दों से कोई काम होने या करने का भाव समझा जाय, उन्हें क्रिया कहते हैं; जैसे—सोना, पीना उठना आदि।

विकारी शब्दों की भाँति अविकारी शब्दों के भी चार भेद हैं—

(१) क्रिया-विशेषण—जो शब्द क्रिया की विशेषता प्रकट करते हैं, क्रिया-विशेषण कहलाते हैं, जैसे--धीरे-धीरे आदि।

(२) सम्बन्ध-बोधक--जो शब्द सम्बन्ध बतलाते हैं, सम्बन्धक-वोधक कहलाते हैं; जैसे---किन्तु, परन्तु आदि।

(३) समुच्चय-बोधक---जो शब्द दो वाक्यों या शब्दों का परस्पर अन्वय बतलाते हैं, समुच्चय-बोधक कहलाते हैं; जैसे—और, तथा, एवं, या आदि।

(४) विस्मयादि-बोधक—जिन शब्दों से हर्ष, शोक, आश्चर्य, क्षोभ, दुःख, विषाद आदि मनोविकार व्यक्त होते हैं, उन्हें विस्मयादि-बोधक कहते हैं; जैसे--क्या खूब! वाह! अरे बाप! आदि।

व्युत्पत्ति--एक शब्द से अन्य नवीन शब्द गढ़ने की प्रक्रिया व्युत्पत्ति कहलाती

है, जैसे---'व्याकरण' शब्द की व्युत्पत्ति है, वि+आ+करण। इस व्युत्पत्ति के विचार से सार्थक शब्द दो भागों में विभक्त हैं—(क) रूढ़ और (ख) यौगिक, लेकिन संज्ञा शब्द तीन भागों में विभक्त हैं—(क) रूढ़, (ख) यौगिक और (ग) योगरूढ़।

जिस शब्द के खण्डों का अर्थ न हो, वह रूढ़ कहलाता है; जैसे—राम, घर, मेघ आदि। इन शब्दों रा+म, घ+र, मे+घ में किसी भी खण्ड का कोई अर्थ नहीं होता।

जिस शब्द के खण्डों का अर्थ हो उसे यौगिक कहते हैं। इस तरह के शब्द उपसर्ग, प्रत्यय और दूसरे शब्दों के संयोग से निर्मित होते हैं, जैसे---खग, पाठशाला, कलानिकेतन, हंस-हर्म्य आदि। इन शब्दों में ख+ग, पाठ+शाला, कला+निकेतन, हंस + हर्म्य सभी खण्ड सार्थक हैं।

जो संज्ञा शब्द अपनी व्युत्पत्ति के अर्थ का त्याग कर किसी विशेष अर्थ में रूढ़ हो जाता है उसे योगरूढ़ कहते हैं, जैसे---खग, नीरज आदि, जिनका सामान्य अर्थ है आकाश में गमन करने वाला' 'जल में उत्पन्न होने वाला' आदि, लेकिन ये पक्षी, कमल आदि के अर्थ में रूढ़ हो गये हैं।

अभ्यास

(१) व्युत्पत्ति के अनुसार शब्द के कितने भेद हैं ? उदाहरण सहित समझाइये।

(२) हिन्दी में किन-किन भाषाओं के शब्द प्रयुक्त होते हैं ? उदाहरण सहित लिखिये।

(३) शब्दों के कितने भेद हैं ? उदाहरण सहित समझाइये।

(४) विकारी शब्द किसे कहते हैं ?

(५) अविकारी शब्द किसे कहते हैं ?

(६) विकारी शब्द के कितने भेद हैं ? उदाहरण सहित लिखें।

(७) अविकारी ,, ,, ,, ,, ,,

(८) व्युत्पत्ति से आप क्या समझते हैं ?

(९) व्युत्पत्ति के विचार से सार्थक शब्दों के कितने भेद होते हैं ? उदाहरण सहित लिखें।

विकारी शब्द

(१) संज्ञा

संज्ञा—उस विकारी शब्द को संज्ञा कहते हैं, जिससे किसी स्थान, वस्तु या व्यक्ति का नाम प्रकट हो; जैसे--पटना, चाँदी, पीतल, दूध, अमरेश आदि। यह स्मरण रखना चाहिए कि संज्ञा शब्द का प्रयोग वस्तु या व्यक्ति के लिए नहीं बल्कि वस्तु या व्यक्ति के नाम के लिए होता है।

अर्थ के विचार से संज्ञा-भेद—अर्थ के विचार से संज्ञा के प्रधानतः दो भेद हैं--(क) पदार्थवाचक और (ख) भाववाचक।

(क) संसार में स्पृश्य या अस्पृस्य, दृश्य या अदृश्य जितने पदार्थ हैं, उन्हें किसी न किसी संज्ञा या नाम से अलंकृत किया गया है। अतः स्पष्ट होता है कि जिस संज्ञा से पदार्थ और पदार्थ-समूह का बोध हो, उसे पदार्थवाचक संज्ञा कहते हैं। जैसे—सूर्य, हिमालय, नरक, मनु, घोड़ा, कागज, कलम आदि।

(ख) जिस संज्ञा से पदार्थ के धर्म का बोध हो अर्थात् पदार्थ के गुण, दशा या व्यापार का नाम सूचित हो उस संज्ञा को भाववाचक संज्ञा कहते हैं। जैसे--नम्रता, दक्षता, कोमलता, मिठास, सुन्दरता आदि।

पदार्थवाचक संज्ञा के चार भेद माने गये हैं--(क) जिस संज्ञा से किसी विशेष वस्तु या व्यक्ति का बोध होता है, उसे व्यक्तिवाचक कहते हैं। (ख) जिस संज्ञा से पदार्थों की जाति का बोध होता है, उसे जातिवाचक कहते हैं। (ग) जिस संज्ञा से किन्हीं वस्तुओं या व्यक्तियों के समूह का बोध होता है, उसे समूहवाचक कहते हैं। (घ) जिस संज्ञा से किसी द्रव्य का बोध होता है, उसे द्रव्यवाचक कहते हैं।

पदार्थवाचक संज्ञा के उपर्युक्त चार भेद अँगरेजी व्याकरण के आधार पर माने गये हैं, ऐसा कुछ विद्वानों का मत है। क्योंकि हिन्दी व्याकरण में प्रायः दो भेदों का उल्लेख है—(क) जातिवाचक और (ख) व्यक्तिवाचक।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि अर्थ के विचार से संज्ञा के पाँच भेद हैं—

पदार्थवाचक
- (१) व्यक्तिवाचक
- (२) जातिवाचक
- (३) समूहवाचक
- (४) द्रव्यवाचक
- (५) भाववाचक

जिस संज्ञा से किसी एक ही प्राणी या पदार्थ का नाम सूचित होता है, उसे व्यक्तिवाचक संज्ञा कहते हैं। जैसे—अमरेश, पटना, गंगा, हिमालय आदि। इनमें 'अमरेश', 'पटना', 'गंगा', 'हिमालय, ऐसी संज्ञाएँ हैं जो किसी एक ही (विशेष) प्राणी या पदार्थ का नाम सूचित करती हैं। "अमरेश" एक ही (विशेष) पुरुष का नाम है, "पटना" एक ही (विशेष) नगर का नाम है, "गंगा" एकही (विशेष) नदी का नाम है और "हिमालय" एकही (विशेष) पहाड़ का नाम है।

जातिवाचक--जिस संज्ञा से किसी जाति का बोध हो, उसे जातिवाचक कहते हैं, जैसे--फूल, चिराग, नदी, पहाड़ आदि। 'फूल' कहने से किसी एक ही फूल का बोध नहीं होता बल्कि सम्पूर्ण फूलों की जाति का बोध होता है। इसी प्रकार चिराग, नदी, पहाड़ आदि कहने से किसी एक ही चिराग, नदी, पहाड़ आदि का बोध नहीं होता बल्कि सम्पूर्ण चिरागों, नदियों, पहाड़ों आदि का बोध होता है। इसलिए फूल, चिराग, नदी, पहाड़ आदि जातिवाचक संज्ञाएँ हैं।

समूहवाचक—जिस संज्ञा से बहुत पदार्थों या व्यक्तियों के समूह का बोध होता है, उसे समूहवाचक कहते हैं; जैसे—सभा, गुच्छा, वर्ग, समिति, दल, फौज आदि। 'सभा' कहने से सभ्य मनुष्यों के समूह का बोध होता है, 'गुच्छा' कहने से फलों आदि के समूह का बोध होता है, 'वर्ग' कहने से विद्यार्थियों के समूह का बोध होता है, 'समिति' कहने से व्यक्तियों के समूह का बोध होता है, 'दल' कहने से व्यक्तियों के समूह का बोध होता है और 'फौज' कहने से सैनिकों के समूह का बोध होता है। इसलिए सभा, गुच्छा, वर्ग, समिति, दल, फौज आदि समूहवाचक संज्ञाएँ हैं।

द्रव्यवाचक—जिस संज्ञा से किसी द्रव्य का बोध हो, उसे द्रव्यवाचक कहते हैं, जैसे—पानी, घी, दही, तेल, सोना, चाँदी, लोहा आदि।

टिप्पणी—समूहवाचक और द्रव्यवाचक संज्ञाएँ जातिवाचक संज्ञा के अन्तर्गत आ सकती हैं, इसलिये समूहवाचक और द्रव्यवाचक संज्ञाओं की गणना जातिवाचक संज्ञा के भेदों में की जा सकती है।

भाववाचक—जिस संज्ञा से पदार्थ या व्यक्ति में पाये जाने वाले किसी धर्म—अवस्था, स्वभाव, गुण, व्यापार, भावना आदि का बोध हो, उसे भाववाचक कहते हैं, जैसे—

(१) **अवस्थाबोधक**—परतंत्रता, बचपन, यौवन, बुढ़ापा आदि।

२. **स्वभावबोधक या गुण-बोधक**—सुन्दरता, मधुरता, कोमलता, बल, बुद्धि, चतुरता, विवेक आदि।

३. **व्यापारबोधक**—लिखाई, छपाई, चाल, दौड़, पेशा आदि।

४. **भावनाबोधक**—आशा, डर, प्रसन्नता, शोक, खेद, दुःख आदि। प्रत्येक पदार्थ या वस्तु में कोई-न-कोई धर्म होता है; जैसे—चीनी में मिठास, मधु में तरलता, अग्नि में उष्णता, जल में शीतलता, स्वर्ण में भारीपन, बूढ़े में बुढ़ापा, कुमारी में कौमार्य, युवती में यौवन, स्त्री में स्त्रीत्व आदि। यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक पदार्थ या वस्तु या व्यक्ति में एक ही धर्म हो बल्कि एक से अधिक धर्म भी होते हैं; जैसे—चीनी में मिठास, भारीपन आदि; मधु में तरलता, मिठास, भारीपन आदि; अग्नि में उष्णता, चमक, जलन आदि; जल में शीतलता, बहाव, भारीपन आदि; स्वर्ण में चमक, भारीपन आदि; बूढ़े में बुढ़ापा, दुर्बलता आदि; कुमारी में कौमार्य, कोमलता, चंचलता आदि; युवती में यौवन, सुन्दरता, कोमलता, गंभीरता आदि; स्त्री में स्त्रीत्व, कोमलता, दुर्बलता आदि; एक धर्म कई पदार्थों या व्यक्तियों में भी हो सकता है; जैसे—मिठास चीनी और मधु दोनों में होती है; चमक आग और स्वर्ण दोनों में है और अन्य वस्तुओं में भी।

भाववाचक संज्ञा तीन प्रकार से बनती है—

१. विशेषण से; जैसे—अरुण-अरुणिमा, कोमल-कोमलता, कठोर-कठोरता, लम्बा-लम्बाई, मधुर-माधुर्य, सुकुमार-सौकुमार्य आदि।

२. क्रिया से; जैसे—मारना-मार, खेलना-खेल, मरना-मरण, जलना-जलन, दौड़ना-दौड़, घबराना-घबराहट, बनना-बनावट, चुनना-चुनाव, बहना-बहाव, सजना-सजाव आदि ।

३. जातिवाचक संज्ञा से; जैसे—मनुष्य-मनुष्यता, पशु-पशुता, पुरुष-पुरुषत्व, मानव-मानवता आदि ।

टिप्पणी—संस्कृत के नियम के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति में भी अलग-अलग धर्म, स्वभाव, गुण या विशेषता होती है और व्यक्तिवाचक संज्ञा से भी भाववाचक संज्ञा बनती है; जैसे—राम-रामत्व, कृष्ण—कृष्णत्व ।

जब किसी व्यक्तिवाचक संज्ञा से एक ही नाम के कई व्यक्तियों का बोध हो या जब व्यक्तिवाचक संज्ञा का प्रयोग किसी व्यक्ति के असाधारण धर्म का बोध कराने लिये हो, तब व्यक्तिवाचक संज्ञा जातिवाचक संज्ञा हो जाती है; जैसे—इस वर्ग में तीन 'अरविन्द' हैं । कालिदास भारत के 'शेक्सपियर' हैं । आरसी प्रसाद सिंह हिन्दी के 'कीटस्' हैं । रामधारी सिंह 'दिनकर' हिन्दी के 'नजरुल इस्लाम' हैं । आल्प्स यूरोप का 'हिमालय' है ।

उपर्युक्त वाक्यों में अरविन्द, शेक्सपियर, कीटस्, नजरुल इस्लाम और हिमालय का जो—व्यक्तिवाचक संज्ञाएँ हैं—प्रयोग जातिवाचक संज्ञाओं के रूप में हुआ है ।

जब द्रव्यवाचक संज्ञाओं से उनके विभिन्न भेद या उनके भाग या उन द्रव्यों से बनी वस्तुओं का बोध होता है, तब वे द्रव्यवाचक संज्ञाएँ जातिवाचक हो जाती हैं, जैसे—गंगा, सरस्वती और यमुना नदियों के 'जल' त्रिवेणी-तट पर विभिन्न रंगों के दीखते हैं । बाजार में विभिन्न प्रकार के 'मधु' बिकते हैं । विभिन्न प्रकार की 'शराबें' बिकती हैं । यहाँ जल, मधु और शराबें जातिवाचक संज्ञाएँ हैं ।

जिस प्रकार व्यक्तिवाचक संज्ञाएँ सदा एकवचन में प्रयुक्त होती हैं, उसी प्रकार भाववाचक, समूहवाचक और द्रव्यवाचक संज्ञा भी सदा एकवचन में प्रयुक्त होती हैं; जैसे—स्त्रियों की सुन्दरता, छात्रों की प्रतिभा, सभी प्रकार का सोना और किसानों की सभा आदि । किन्तु जातिवाचक होने पर इनका प्रयोग बहुवचन

में भी होता है; जैसे—प्रकृति के क्षेत्र में विभिन्न प्रकार की 'सुन्दरताओं' के दर्शन होते हैं। पानीपत के मैदान में तीन 'लड़ाइयाँ' हुई थीं। उसकी 'आशाओं' पर पानी फिर गया। दोनों 'सेनाओं' में घनघोर लड़ाई हुई। यहाँ 'सुन्दरताओं', 'लड़ाइयाँ', 'आशाओं' और 'सेनाओं' शब्दों का प्रयोग जातिवाचक संज्ञाओं के रूप में हुआ है।

कतिपय जातिवाचक और समूहवाचक तथा उपमानवाचक संज्ञाएँ हैं, जिनका प्रयोग व्यक्तिवाचक संज्ञाओं की भाँति होता है; जैसे—दक्षिण (दक्षिण भारत), पुरी (जगन्नाथ पुरी), गोस्वामी (तुलसीदास), देवी (दुर्गा), भारतेन्दु (हरिश्चन्द्र), दाउ (बलदेव), मुरलीधर (कृष्ण), धर्मराज (युधिष्ठिर), काँग्रेस (अखिल भारतीय काँग्रेस), सितारे हिन्द (राजा शिव प्रसाद), पार्लमेन्ट (इंगलैंड की व्यवस्थापिका सभा), द्विवेदी जी (आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी), शुक्ल जी (पण्डित रामचन्द्र शुक्ल), बृहत्-त्रयी (प्रसाद, पन्त और निराला), पन्त (सुमित्रा नन्दन पन्त), बिहार केसरी (डा० श्री कृष्ण सिंह), देशरत्न (डा० राजेन्द्र प्रसाद), बिहार-विभूति (डा० अनुग्रह नारायण सिंह) आदि।

अभ्यास

(१) अर्थ के विचार से संज्ञा के कितने भेद हैं? उदाहरण सहित लिखें।
(२) भाववाचक संज्ञाएँ कैसे बनती हैं? उदाहरण सहित लिखें।
(३) चार भाववाचक संज्ञाओं का प्रयोग जातिवाचक के समान करें।
(४) चार समूहवाचक संज्ञाओं का प्रयोग जातिवाचक के समान करें।
(५) चार व्यक्तिवाचक संज्ञाओं का प्रयोग जातिवाचक के समान करें।
(६) चार जातिवाचक संज्ञाओं का प्रयोग व्यक्तिवाचक के समान करें।

संज्ञाओं का रूपान्तर

लिंग

अर्थ को अलग-अलग बतलाने के लिए शब्दों में जो विकार होता है, उसे शब्दों का रूपान्तर कहते हैं। संज्ञाओं का रूपान्तर लिंग, वचन और कारक के कारण होता है।

हिन्दी में दो लिंग माने जाते हैं—(१) स्त्रीलिंग और (२) पुल्लिग। स्त्री जातिबोधक शब्दों को स्त्रीलिंग कहते हैं और पुरुष जातिबोधक शब्दों को पुल्लिग तथा जो शब्द न स्त्री जातिबोधक हैं, न पुरुष जातिवाचक—उन्हें संस्कृत, अंगरेजी आदि भाषाओं में क्लीवलिंग कहते हैं; परन्तु हिन्दी में ऐसे संदिग्ध शब्द कुछ स्त्रीलिंग में प्रयुक्त होते हैं और कुछ पुल्लिग में। यही कारण है, संस्कृत, अंगरेजी आदि भाषाओं का लिंग प्रकरण हिन्दी के लिंग-प्रकरण की अपेक्षा अधिक सरल है और हिन्दी का लिंग विचार एक विशेष महत्वपूर्ण विषय माना जाता है। वस्तुतः इसके बारे में विद्वानों में भी मतभेद होता है और व्याकरण में भी अपवादरहित नियमों का निर्धारण नहीं है। इसके सिवा ऐसे भी शब्द हैं जो संस्कृत, उर्दू आदि भाषाओं में स्त्रीलिंग माने जाते हैं और हिन्दी में पुल्लिग तथा जो संस्कृत, उर्दू आदि भाषाओं में पुल्लिग माने जाते हैं, वे हिन्दी में स्त्रीलिंग प्रयुक्त होते हैं, जैसे—

(१) देवता, तारा आदि शब्द संस्कृत में स्त्रीलिंग में प्रयुक्त होते हैं और हिन्दी में पुल्लिग में—(क) देवता स्वर्ग में रहता है। (ख) तारा डूबता है। कवि श्री माखनलाल चतुर्वेदी 'एक भारतीय आत्मा' ने 'देवता' का प्रयोग स्त्रीलिंग में किया है—

आती है 'स्वातन्त्र्य-देवता'।

उसके चरण धुलाने में।

यह सही है कि 'महाजनो येन गतः स पन्थाः' के अनुसार महापुरुष के पथ का अनुसरण करना उचित है लेकिन जहाँ अधिकतर विद्वानों के एकमत के खिलाफ किसी एक विद्वान् का मत भिन्न है, वहाँ अधिकतर विद्वानों के एकमत को ही ग्रहण करना चाहिए। इस विचार के अनुसार कहा जा सकता है कि हिन्दी में देवता का प्रयोग पुल्लिग में ही करना चाहिए, स्त्रीलिंग में नहीं।

(या) उर्दू में 'चर्चा' और 'कलम' का प्रयोग पुल्लिग में होता है और हिन्दी में ये दोनों शब्द स्त्रीलिंग के रूप में मान्य हैं—(क) उसकी प्रायः चर्चा होती रहती है। (ख) मेरी कलम टूट गयी। महामहोपाध्याय पण्डित रामा-

वतार शर्मा के योग्य पुत्र प्रोफेसर श्री नलिन विलोचन शर्मा ने 'चर्चा' का प्रयोग पुल्लिग में किया है—"और फिर भी उनके गीतों का संग्रह "अर्चना" जो अभी हाल में प्रकाशित हुआ है और जिसका चर्चा उतना भी नहीं हुआ, जितना रद्दी से रद्दी पुस्तकों का होता रहता है ।"

(३) सन्तान, विधि, महिमा, आत्मा, अग्नि, विनय, विजय, कुशल, देह आदि संस्कृत में पुल्लिग हैं, पर हिन्दी में स्त्रीलिंग में प्रयुक्त होते हैं।

कुछ शब्द ऐसे भी हैं जो संस्कृत, उर्दू आदि भाषाओं में जिस लिंग में प्रयुक्त होते हैं हिन्दी में भी उसी लिंग में व्यवहृत होते हैं; जैसे—

(१) वायु, पवन, समीर, समाज आदि शब्द संस्कृत और हिन्दी दोनों पुल्लिग में प्रयुक्त होते हैं।

(२) शिकायत, दौलत, तिजारत आदि शब्द उर्दू और हिन्दी दोनों में स्त्रीलिंग में प्रयुक्त होते हैं।

कुछ शब्द ऐसे हैं जो विभिन्न अर्थों में विभिन्न लिंगों में प्रयुक्त होते हैं; जैसे :—

(१) विधि—विधाता के अर्थ में पुल्लिग और रीति के अर्थ में स्त्रीलिंग।

(२) हार—माला के अर्थ में पुल्लिग और पराजय के अर्थ में स्त्रीलिंग।

(३) माल—कच्चे अन्न के अर्थ में पुल्लिग और माला के अर्थ में स्त्रीलिंग।

(४) ताल—पोखर के अर्थ में पुल्लिग और लय या तान के अर्थ में स्त्रीलिंग।

(५) लय—नाश के अर्थ में पुल्लिग और तान के अर्थ में स्त्रीलिंग।

पुल्लिग शब्द

(१) जिन शब्दों के अन्त में 'आव' हो तो वे पुल्लिग होते हैं, जैसे–बहाव, बढ़ाव, उतराव, चुनाव, सजाव आदि।

(२) जिन शब्दों के अन्त में 'त्व' हो वे पुल्लिग होते हैं; जैसे—मनुष्यत्व, पुरुषत्व, महत्व, सत्व, सभापतित्व, प्रतिनिधित्व आदि ।

(३) जिन शब्दों के अन्त में 'पन' हो वे पुल्लिग होते हैं; जैसे——लड़कपन, बचपन, भोलापन, पागलपन आदि ।

(४) जिन शब्दों के अन्त में 'पा' हो वे पुल्लिग होते हैं; जैसे—बुढ़ापा, अपनापा आदि ।

(५) जिन शब्दों के अन्त में 'य' हो और 'य' के पूर्व हलन्त वर्ण हो तो वे पुल्लिग होते हैं, जैसे-सत्य, सौन्दर्य, माधुर्य, सामर्थ्य, स्वास्थ्य, आधिक्य आदि ।

(६) ये प्राणि वाचक शब्द पुल्लिग हैं, जैसे——पंछी, पक्षी, जीव, प्राणी, लाल, बाज, गरुड़, सारस, बैंग, गिद्ध, काग, चीलर, तीतर आदि ।

(७) ये शब्द उभय लिंग हैं; परन्तु पुल्लिग के रूप में प्रयुक्त होते हैं; जैसे—शत्रु, मित्र, दम्पति, परिवार, कुतरू, पठरू, बछरू, आदि ।

(८) ये अन्नवाची या फलवाची शब्द पुल्लिग हैं; जैसे—मटर, चना, उर्द, गेहूँ, गन्ना, धनिया, तिल, नीबू आदि ।

(९) संस्कृत के पुल्लिग और नपुंसक लिंग के शब्द प्राय: पुल्लिग में प्रयुक्त होते हैं ।

अपवाद——जय, देह, सन्तान, शपथ, विधि, ऋतु, तान, लय, मृत्यु, वस्तु, पुस्तक, औषधि, उपाधि, आय, विजय, विनय, तरंग, कुशल, अग्नि आदि स्त्रीलिंग में प्रयुक्त होते हैं ।

(१०) कुछ अकारान्त और आकारान्त शब्द पुल्लिग हैं; जैसे——दाँत, कान, केश, बाल, मुँह, कीचड़, पहिया, हाथ, माथा, सिर, मस्तक, पैर, नख, अँगूठा आदि ।

अपवाद—— क) आँच, बाँह, आँख, नाक, साँस, नस, लहर, सड़क, राह, ओस, बूँद, उसाँस, आह, कराह, ईंट, भौंह, मूँछ, उँगली, कमर, जाँघ, पीठ आदि स्त्रीलिंग हैं ।

(ख) इया प्रत्ययान्त ऊनवाचक या न्यूनतासूचक शब्द स्त्रीलिंग हैं, जैसे—डिबिया, खटिया, पुड़िया आदि।

(११) उर्दू के जिन शब्दों के अन्त में ब या आब या श हो वे प्रायः पुल्लिग हैं; जैसे—हिसाब, गुलाब, जुलाब, खिजाब, कबाब, जवाब, नसीब, ताश, जोश, गोश, होश, ख्वाब, मतलब आदि।

अपवाद—किताब, तलब, शब, दाब, तरकीब, किमख्वाब, सुरखाब, मिहराब, शराब आदि स्त्रीलिंग शब्द हैं।

(१२) पहाड़ों, ग्रहों, दिनों, महीनों, नगों, धातुओं और देशों के नाम प्रायः पुल्लिग हैं, जैसे—हिमालय, हिमगिरि, चन्द्र, सूर्य, गुरु, शुक्र, सोम, मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शनि, चैत, सप्ताह, हीरा, मोती, सोना, जापान, इंगलैंड, भारतवर्ष, अमेरिका, आस्ट्रेलिया, चीन, बर्मा आदि।

अपवाद—(क) चाँदी, पीतल और मणि स्त्रीलिंग हैं।

(ख) देशों में टर्की को स्त्रीलिंग माना जाता है। ब्रिटेन का रूप जब 'बरतानिया' होता है तब स्त्रीलिंग माना जाता है। भारत के अन्त में जब माता शब्द जोड़ा जाता है, तब भारतमाता का प्रयोग स्त्रीलिंग में होता है।

(१३) संस्कृत के जिन शब्दों के अन्त में त्र हो वे पुल्लिग हैं, जैसे—चित्र, मित्र, क्षेत्र, पात्र, नेत्र, गोत्र, चरित्र, लवित्र, खनित्र आदि।

स्त्रीलिंग

(१) जिन शब्दों के अन्त में 'आई' प्रत्यय हो वे स्त्रीलिंग होते हैं; जैसे—लम्बाई, चौड़ाई, लड़ाई, पढ़ाई, लिखाई, छपाई, अवाई आदि।

(२) जिन शब्दों के अन्त में 'ता' प्रत्यय हो वे स्त्रीलिंग होते हैं; जैसे—शत्रुता, मित्रता, मधुरता, पशुता, मनुष्यता, सज्जनता, कटुता, क्षमता, सबलता, निर्बलता, राजनीतिज्ञता, कुटनीतिज्ञता, महत्ता, सत्ता, मानवता आदि।

(३) जिन शब्दों के अन्त में 'हट' या 'वट' प्रत्यय हो वे स्त्रीलिंग होते हैं; जैसे—चिकनाहट, सजावट, मिलावट, लिखावट, घबराहट, अकुलाहट आदि।

(४) जिन शब्दों के अन्त में 'न' प्रत्यय हो वे प्रायः स्त्रीलिंग होते हैं; जैसे—जलन, तड़पन।

अपवाद—चाल-चलन का प्रयोग पुंल्लिंग में होता है।

(५) वर्णमाला के अक्षरों में केवल तीन अक्षर इ, ई और ऋ स्त्रीलिंग हैं (और शेष सभी अक्षर पुंल्लिंग हैं)।

(६) कुछ प्राणिवाचक शब्द स्त्रीलिंग हैं; जैसे—उड़ीस, चील, कोयल, बटेर, मैना, श्यामा, चिड़िया, जोंक, कचबचिया, तूती, मुनिया, सारिका, बुलबुल आदि।

अपवाद—कोकिल पुंल्लिंग है, जिसका स्त्रीलिंग कोकिला है।

(७) कुछ अन्नवाचक और फलवाची शब्द स्त्रीलिंग हैं; जैसे—मूङ्ग, मसूर, अरहर, गाजर, दाल आदि।

(८) संस्कृत के स्त्रीलिंग शब्द हिन्दी में भी स्त्रीलिंग हैं; जैसे-दया, माया, प्रकृति, आशा, कृपा, क्षमा, करुणा आदि।

(९) अरबी के जिन शब्दों के अन्त में 'आ' या 'ता' या 'फ' या 'अ' या 'ई' या 'ल' हो, वे प्रायः स्त्रीलिंग होते हैं; जैसे—दगा, सजा, हवा, खता, वला, दुआ, रजा, कजा, वफा, तमन्ना, रसीद, तरकीब, तकदीर, तदबीर, कमीज, दुनिया, तफसील, फसल आदि।

अपवाद—इलाज, तावीज आदि पुंल्लिंग हैं।

(१०) जिन शब्दों के अन्त में 'ई' या 'त' या 'आस' या 'इश' हो, वे प्रायः स्त्रीलिंग में प्रयुक्त होते हैं; जैसे—चिट्ठी, रोटी, साड़ी, धोती, बोटी, छत, रात, बात, नौबत, प्यास, नालिश, मिठास, उसाँस, कोशिश, पुरशिश, ख्वाहिश आदि।

अपवाद—दही, घी, मोती, हाथी, पानी, भात, दाँत, गीत, सूत, भूत, प्रेत, शर्बत, बन्दोवस्त, दस्त, दस्तखत, निकास, विकास, इजलास, उच्छ्वास, निवास, वास, हास, श्वास आदि पुंल्लिंग हैं।

(११) तिथियों, नक्षत्रों और नदियों के नाम प्रायः स्त्रीलिंग होते हैं; जैसे—द्वितीया, तृतीया, पंचमी, तीज, अश्विनी, भरणी, रोहिणी, कृतिका, गंगा, यमुना, गण्डक, नील आदि।

अपवाद—(क) पुष्य, पुनर्वसु, हस्त, मूल, पूर्वाषाढ़, उत्तराषाढ़ और श्रवणा ये नक्षत्र पुल्लिंग हैं।

(ख) सिन्धु, ब्रह्मपुत्र और सोन का प्रयोग पुल्लिंग में होता है और ये नद कहलाते हैं।

यौगिक शब्दों का लिंग-निर्णय

यौगिक शब्दों या समस्त पदों का लिंग-निर्णय उनके अन्तिम खण्ड के अनुसार होता है; जैसे—माता-पिता, कृपा-सागर, गंगा-सागर, इच्छानुसार, आदेशानुसार आदि शब्द पुल्लिंग हैं और जयश्री, वसन्तश्री, वसन्त-छवि, हेमलता, स्वर्ण-लता, अश्रु-धारा आदि शब्द स्त्रीलिंग हैं।

हिन्दी में प्रयुक्त अँगरेजी के कुछ तत्सम या तद्भव शब्द स्त्रीलिंग हैं; जैसे—पुलिस, मिलिटरी, लॉटरी, लारी, रेल, ट्रेन, फीस, एसेम्बली, काउन्सिल, काँग्रेस, मिल, रिपोर्ट, पार्टी, लिस्ट, नोटिश, कमिटी, बोतल, इंजन, डेस्क, टेबिल, पेन्सिल, अपील, लालटेन, गवर्नमेन्ट, कान्फ्रेंस आदि।

सभा, पत्रिका, पुस्तक और स्थान के नामों का लिंग-निर्णय बहुधा उनके रूप के अनुसार होता है; जैसे—'अखिल भारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन', 'महामंडल', 'नयाजीवन', 'ज्ञानोदय', 'आजाद हिन्द', 'देश', 'उत्तर बिहार', 'वीर बालक', 'चाँद', 'प्रताप', 'हिमालय', 'विशाल भारत', 'नया समाज', 'पाटल', 'साहित्य', आगरा, राजपुताना आदि पुल्लिंग हैं और 'हिन्दू महासभा', 'मर्यादा', 'शिक्षा', 'जागृति', 'रामायण', 'गीता', 'कुरान', 'दिल्ली' आदि स्त्रीलिंग हैं।

पुल्लिंग से स्त्रीलिंग बनाने के नियम

पुल्लिंग से स्त्रीलिंग बनाने के लिए हिन्दी में निम्नलिखित प्रत्यय प्रयुक्त होते हैं—

(१) 'ई' प्रत्यय

(क) प्राणिवाचक आकारान्त पुल्लिंग शब्दों के अन्त्य स्वर की जगह 'ई' का प्रयोग कर स्त्रीलिंग बनाये जाते हैं; जैसे—

घोड़ा	घोड़ी	पुतला	पुतली
बकरा	बकरी	बेटा	बेटी (पतोहू)
लड़का	लड़की	गधा	गधी

(ख) सम्बन्धवाचक शब्द—

दादा	दादी	काका	काकी
चाचा	चाची	नाना	नानी
साला	साली	मामा	मामी (ममानी)

(ग) मनुष्य के सिवा तीन अक्षरवाले प्राणिवाचक अकारान्तर शब्द—

कूकर	कूकरी	मयूर	मयूरी
हिरन	हिरनी	मेढ़क	मेढ़की
तीतर	तीतरी	कबूतर	कबूतरी

(घ) संस्कृत के व्यंजनान्त शब्द—

मूल संस्कृत	हिन्दी पुल्लिग	स्त्रीलिंग
श्रीमत्	श्रीमान्	श्रीमती
भगवत	भगवान्	भगवती
युवन्	युवा	युवती
महत	महान्	महती
विद्वस्	विद्वान्	विदुषी
राजन्	राजा	राज्ञी
विधात	विधाता	विधात्री
हितकारिन्	हितकारी	हितकारिणी

(ङ) संस्कृत के कुछ अकारान्त शब्द—

पुत्र	पुत्री	षष्ठ	षष्ठी
नद	नदी	पंचम	पंचमी
नर	नारी	देव	देवी

(२) 'इया' प्रत्यय

(क) उपेक्षा या प्रेम के कारण कभी-कभी 'इया' प्रत्यय के योग से पुल्लिग से स्त्रीलिंग बनाये जाते हैं और यदि अन्त्याक्षर संयुक्त हो तो प्रथम व्यंजन लुप्त होता है; जैसे—

कुत्ता	कुतिया	बूढ़ा	बुढ़िया
मठ	मठिया	बेटा	बिटिया
लोटा	लुटिया	डिब्बा	डिबिया

(ख) कभी-कभी लघुता सूचित करने के लिए अप्राणिवाचक अकारान्त या आकारान्त शब्दों को 'ई' या 'इया' प्रत्यय के योग से पुल्लिग से स्त्रीलिंग बनाते हैं; जैसे—

रस्सा	रस्सी	डोरा	डोरी
घण्टा	घण्टी	प्याला	प्याली
लग्गा	लग्गी	बाछा	बाछी (बछिया)

(३) 'इन' प्रत्यय

(क) कुछ वर्णवाचक और व्यापारवाचक शब्दों के अन्त में 'इन' प्रत्यय के योग से पुल्लिग से स्त्रीलिंग बनाये जाते हैं; जैसे—

लुहार	लुहारिन	चमार	चमारिन
तेली	तेलिन	ग्वाला	ग्वालिन

(ख) मनुष्य के सिवा कुछ अन्य प्राणिवाचक शब्द—

बाघ	बाघिन	साँप	साँपिन
नाग	नागिन	भिखारी	भिखारिन

(४) 'अनी' प्रत्यय

(क) 'नी' प्रत्यय के योग से कुछ शब्द पुल्लिग से स्त्रीलिंग बनाये जाते हैं; जैसे—

हाथी	हथिनी	ऊँट	ऊँटनी
सर्प	सर्पिणी	मोर	मोरनी

(ख) कुछ अँगरेजी के शब्द—

डाक्टर	डाक्टरनी	मास्टर	मास्टरनी

(५) 'आनी' प्रत्यय

कुछ उपनामवाची और देवतावाची शब्द 'आनी' प्रत्यय के योग से पुल्लिग से स्त्रीलिंग बनाये जाते हैं; जैसे—

खत्री	खत्राणी	क्षत्रिय	क्षत्राणी
देवर	देवरानी	जेठ	जेठानी
मेहतर	मेहतरानी	चौधरी	चौधरानी
भव	भवानी	इन्द्र	इन्द्राणी

(६) 'आइन' प्रत्यय

कुछ उपनामवाची शब्द 'आइन' प्रत्यय के योग से पुल्लिग से स्त्रीलिंग बनाये जाते हैं; जैसे—

ठाकुर	ठकुराइन	दूबे	दुबाइन
लाला	लालाइन	ओझा	ओझाइन
पाठक	पाठकाइन	मिसिर	मिसिराइन

(७) 'आ' प्रत्यय

संस्कृत और अरबी के कुछ शब्द 'आ' प्रत्यय के योग से पुल्लिग से स्त्रीलिंग बनाये जाते हैं; जैसे—

(क) संस्कृत शब्द—

पाठक	पाठिका	गायक	गायिका
कोकिल	कोकिला	शूद्र	शूद्रा
छात्र	छात्रा	विशारद	विशारदा
सुत	सुता	बाल	बाला
बालक	बालिका	प्रियतम	प्रियतमा
नायक	नायिका	कुमार	कुमारिका

(ख) अरबी शब्द—

साहब	साहबा	वालिद	वालिदा

अनियमित रीति से

कुछ पुल्लिग शब्दों के स्त्रीलिंग रूप अनियमित रीति से बनाये जाते हैं; जैसे—

दामाद	बेटी	मियाँ	बीबी
साहब	मेम	नर	मादा
साला	सरहज (साली)	ससुर	सास
भाई	बहन, भाभी, भौजाई	बेटा	बहू, पतोहू
पुत्र	कन्या, पतोहू	मर्द	औरत
पुरुष	स्त्री	पति	पत्नी
पिता	माता	साँढ़, बैल	गाय
राजा	रानी	महाराज	महारानी

टिप्पणी—(१) आजकल अँगरेजी भाषा के अनुकरण पर हिन्दी में भी विवाहित महिलाओं के नामों के साथ कभी-कभी पुरुषों के उपनामों का उपयोग होता है; जैसे—श्रीमती कमला नेहरू (श्रीमान् जवाहरलाल नेहरू की पत्नी, । कभी-कभी महिलाओं के नामों के साथ उपनाम का स्त्रीलिंग रूप भी प्रयुक्त होता है; जैसे—श्रीमती कमला देवी चौधरानी । कभी-कभी उपाधियों का स्त्रीलिंग रूप भी प्रयुक्त होता है; जैसे—श्रीमती शकुन्तला 'विशारदा' । आजकल पुरुषवाचक नाम के पहले 'श्रीमती' लिखकर पुरुष की पत्नी के अर्थ का बोध कराया जाता है; जैसे—श्रीमती अनुग्रह नारायण सिंह (अनुग्रह नारायण सिंह की पत्नी) ।

(२) एकलिंग प्राणिवाचक शब्दों में पुरुष या स्त्री जाति का विभेद करने के के लिए उनके पूर्व 'पुरुष' या 'स्त्री' और मानवेतर प्राणिवाचक शब्दों के पूर्व क्रमशः 'नर' और 'मादा' का प्रयोग किया जाता है; जैसे—पुरुष-सदस्य, स्त्री-सदस्य, पुरुष-छात्र, स्त्री-छात्र, नर-कपोत, मादा-कपोत; नर-भेड़िया, मादा-भेड़िया आदि ।

(३) कुछ स्त्री-प्रत्ययान्त अथवा स्त्रीलिंग शब्दों का प्रयोग अर्थ की दृष्टि से केवल स्त्रियों के लिए होता है । इनके पुंल्लिग शब्द नहीं हैं; जैसे—गर्भवती, सौत, सुहागिन, अहिवाती, धाय, सती, वेश्या, इत्यादि ।

(४) कुछ शब्दों के स्त्रीलिंग रूप भिन्न अर्थों में भिन्न होते हैं; जैसे—क्षत्रिय—क्षत्रियी (क्षत्रिय की पत्नी), क्षत्रिया या क्षत्रियाणी (क्षत्रिय जाति की नारी) ।

(५) कुछ स्त्रीलिंग शब्दों में प्रत्यय जोड़कर स्त्रीलिंग से पुंल्लिग बनाये जाते हैं; जैसे—

भैंस	भैंसा	भेड़	भेड़ा
बहन	बहनोई	ननद	ननदोई
जीजी	जीजा		

प्रयोग में आने वाले कुछ पुंल्लिग शब्द

अनाज, अफसाना, अँधियाला, असर, अन्दाज, अर्सा, अक्ल, अमल, अखबार, अजुमन, अगूर, अंजीर, आँसू, आना. आबदस्त आबदाना, आबनूस, कलाम, कबाब, कबूतर, कफ, कपूर, कतरा, कद, कान, काम, किनारा, कीड़ा,

कूजा, कुशल, खटमल, खत, खाना, खीरा, गान, ग्राम, गिरोह, गुस्सा, गुब्बारा, गोश्त, घी, चर्खा, चंगुल, चाम, चन्दा, चढ़ाव, चश्मा, चिराग, चीलर, छुटकारा, जहाज, जहर, जल्सा, जख्म, जजिया, जादू, जर्दा, जालिम, जनाजा, जिगर, जूलूस, जी, झंझट, तरीका, तरकश, तमस्सुक, तखमीन, तबादला, तकाजा, तीर, तारा, दर्शन, दमा, दस्तूर, दस्ताना, दस्त, दरिया, दमामा, दखल, दरवाजा, द्वार, दामन, दीपक, दंगा, धनीयाँ, धाम, नक्शा, नाम, निकास, नीम, नूर, पहिया, पर्दा, पनीर, पाखाना, पैसा, पक्षी, प्राण, फसाद, फतवा, फजल, फानूस, बटेर, बुर्का, बरामदा, बुढ़ापा, बोझ, बयान, भस्म, भात, मान, माशा, माली, मोती, यत्न, यमन, रंग, रुपया, राज, लबादा, लंगर, लगाना, वसीका, विनय, शहद, शलवार, शक्कर, शिकार, सबूत, सफर, सदमा, सन्दूक, सलाम, सिलसिला, सूत, सूजन, सोना, हज, हफ्ता, हक, हकूक, हाजमा, हाल, हीला, हुक्म, हुस्न, हैजा, हौज, हौआ, क्षेत्र ।

प्रयोग में आनेवाले कुछ स्त्रीलिंग शब्द

आय, आफत, आस्तीन, आवाज, आमद, आतिश, अमानत, अदावत, अदा, अक्सीर, अफवाह, अकड़, औकात, औसत, औलाद, आँख, आन, इबादत, उपेक्षा, उम्मीद, उरद, ऐंठ, कसम, कदर, कब्र, कलम, कजा, कमायत, कालीन, किरीच, कीमत, किताब, किरया, कोशिश, कोयल, कौम, कांग्रेस, कान्फरेन्स, खबर, खरीद, खाल, ख्वाहिश, खान, खाज, खातिर, खुशामद, खुराफात, खोरिश, खीर, गंध, गर्दन, गफलत, गर्द, गनीमत, गजल, गागर, गेंद, घास, घूस, चमक, चटक, चाट, चाल, चीज, चील, चिट, चौखट, जंग, जगह, जलन, जर्मन, जाना, जागीर, जायदाद, जाजिम, जूँ, जेब, जोंब, जाँघ, झील, टीस, टीमटाम, डाक, तहरीर, तनखाह, तलाश, तहवील, तस्वीर, तर्ज, तदवीर, तफसील, तकरार, तलवार, तालीम, तारीफ, तारीख, तातील, तीतर, थाह, दर, दरकार, दरखास्त, दलील, दाद, दाख, दावत, दाल, दिक्कत, दीवार, दुम, दूकान, देह, देन, दोज, धूप, नमाज, नस्ल, नब्ज, नजीर, नजर, नकल, नाक, नाल, नालिश, नियामत, पनाह, परवरिश, प्यास, पाठशाला, पिस्तौल, पीठ, पुकार, फसल, फाँक, फिक्र, फौज, बगल, बगावत, बख्शीश, बाँह, बारूद,

बुनियाद, भनक, भूल, भूख, भेंट, भेंड़, मंजिल, मसजिद, महक, मसनद, माला, माया, मियाद, मीनार, मुराद, मुलाकात, मुश्क, महताव, मूँछ, मेज, मेहराव, मौज, रकम, रसद, रस्म, रशीद, राख, राय, राहत, रीड़, रियायत, रूह, रेत, रेह, रेलपेल, रोकथाम, लपक, लचक, लगाम, लपेट, लाश, लालटेन, लाज, लहर, लानत, लीक, लूट, वयस, वायु, विधि, विजय, वृष्टि, वृत्ति, वारिश, शर्म, शक्ल, शमशीर, शराब, शरम, शान, शाम, शान्ति, शपथ, शामत, सहन, सनद, सतह, सरकार, सभा, संतान, सड़क, सलाह, साख, साजिश, साध, साँझ, साँस, सीमा, सीख, सिफारिश, साँठ-गाँठ, सुलह, सुधि, सूची, सूचि, सेहत, सौगन्ध, सुगंध, हद, हँसी, हलचल, हड़ताल, हामी, हाँक, हिमाकत, हुकूमत, हेंकड़ी ।

अभ्यास

(१) हिन्दी में कितने लिंग हैं ?

(२) पुल्लिग से स्त्रीलिंग बनाने के कौन-कौन साधारण नियम हैं ?

(३) पाँच तकारान्त पुल्लिग शब्दों को बतायें ।

(४) निम्नलिखित शब्दों का लिंग-निर्णय करें—

आग, बाग, राग, भाग, तीर, पीर, खीर, क्षीर, भीड़, आस, वास, हास, कास, ग्रास, श्वास, साँस, पाश, चाल, ताल, काल, खाल, गाल, बाल, उबाल, ज्वाल, खेल, नाच, आँच, धुल, मूल, फूल, बबूल, कूल, तार, खार, सार, पुकार, हुंकार, टंकार, सितार, मँझधार, प्यार ।

वचन

हिन्दी में दो वचन हैं—(क) एकवचन और (ख) बहुवचन । जिससे एक का बोध हो उसे एकवचन और जिससे अनेक का बोध हो उसे बहुवचन

कहते हैं; जैसे—लड़का आता है। लड़के आते हैं। यहाँ 'लड़का' एकवचन है और 'लड़के' बहुवचन है।

प्राय. जातिवाचक एकवचन संज्ञा में 'ए', 'एँ' 'ओं', 'यों' और 'याँ' जोड़कर बहुवचन् बनाये जाते हैं, जिसके नियम आगे बतलाये जायेंगे। व्यक्तिवाचक, भाववाचक तथा द्रव्यवाचक संज्ञाओं का बहुवचन नहीं होता।

यदि व्यक्तिवाचक, समूहवाचक, भाववाचक और द्रव्यवाचक संज्ञाएँ बहुवचन रूप में प्रयुक्त होती हैं, तो वे जातिवाचक संज्ञाएँ मानी जाती हैं; जैसे—

(क) अरविन्द आठवें वर्ग की परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ। यहाँ 'अरविन्द' का प्रयोग व्यक्तिवाचक संज्ञा के रूप में हुआ है।

(ख) नवें वर्ग में दो अरविन्द पढ़ते हैं। यहाँ 'अरविन्द' का प्रयोग जातिवाचक संज्ञा के रूप में हुआ है।

कहीं-कहीं जातिवाचक शब्दों के आगे समूहवाचक शब्द जोड़कर भी बहुवचन बनाया जाता है। वे शब्द हैं—लोग, गण, वर्ग, जाति, वृन्द, सब, समुदाय आदि। जैसे—हमलोग-बंधुजन, सज्जनवृन्द, श्रोतागण, हमसब, निम्नवर्ग, नारी-जाति आदि। कुछ ऐसे शब्द हैं जो सदा बहुवचन में प्रयुक्त होते हैं; जैसे—दर्शन, प्राण, आँसू, होठ, दाँत आदि।

कारक

कारक—संज्ञा या सर्वनाम का वह रूप जो भिन्न-भिन्न प्रकार से वाक्य में प्रयुक्त हो, अपने सम्बन्ध को किसी दूसरे शब्द के साथ प्रकाशित करे और ऐसा करने में क्रिया की उत्पत्ति में सहायक हो, वह कारक कहलाता है। दूसरे शब्दों में यों कहा जा सकता है कि संज्ञा या सर्वनाम जब भिन्न-भिन्न प्रकार से वाक्य में प्रयुक्त हो कर अपने सम्बन्ध को किसी अन्य शब्द के साथ प्रकाशित करता है और क्रिया की उत्पत्ति में सहायक होता है, तब उस संज्ञा या सर्वनाम के रूप को कारक कहते हैं;—जैसे अरविन्द ने पानी पीया। यहाँ 'पीया' क्रिया की उत्पत्ति में 'अरविन्द ने' और पानी' ये दोनों संज्ञाएँ सहायक हैं, जिन्हें कारक कहेंगे।

कारक को सूचित करने के लिए संज्ञा या सर्वनाम के आगे जो प्रत्यय या चिह्न प्रयुक्त होता है, उसे विभक्ति कहते हैं; जैसे—अरविन्द ने पानी पिया। यहाँ 'ने' विभक्ति है। विभक्ति युक्त शब्द को पद कहते हैं; जैसे—अरविन्द ने।

हिन्दी में कारक के आठ भेद हैं—कर्त्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान, सम्बन्ध, अधिकरण और सम्बोधन। संस्कृत के वैयाकरण सम्बन्ध और सम्बोधन को कारक की श्रेणी में परिगणित नहीं करते, क्योंकि क्रिया के साथ इन दोनों का सीधा सम्बन्ध नहीं होता जिसका अनुसरण हिन्दी के भी कुछ वैयाकरण करते हैं और कारक के छः भेद ही मानते हैं।

(१) कर्त्ता—संज्ञा या सर्वनाम का वह रूप जो काम करे, कर्त्ता कहलाता है। इसके चिह्न 'ने', 'से' और शून्य हैं; जैसे—

(क) अरविन्द ने आम खाया।

(ख) अरविंद से आम खाया गया।

(ग) अरविंद आम खाता है।

उपर्युक्त वाक्यों में 'अरविंद ने', 'अरविंद से' और 'अरविंद' कर्त्ता कारक हैं।

(२) कर्म—संज्ञा या सर्वनाम का वह रूप जिस पर क्रिया के व्यापार का फल या प्रभाव पड़ता है, कर्म कहलाता है। इसके चिह्न 'को' और शून्य हैं; जैसे—

(क) अरविन्द अमरेश को बुलाता है।

(ख) अरविन्द पुस्तक पढ़ता है।

उपर्युक्त वाक्यों में 'अमरेश को' और 'पुस्तक' कर्मकारक हैं।

(३) करण—संज्ञा या सर्वनाम का वह रूप, जिसके द्वारा काम होना सूचित हो, करण कहलाता है। इसके चिह्न 'से' और 'के द्वारा' हैं; जैसे—

(क) अरविन्द छुरी से कलम बनाता है।

(ख) अरविन्द ने अमरेश के द्वारा पत्र डाकखाने में गिरवा दिया।

उपर्युक्त वाक्यों में 'छुरी से' और 'अमरेश के द्वारा' करण कारक हैं।

(४) सम्प्रदान—संज्ञा या सर्वनाम का वह रूप, जिसके लिये कर्त्ता काम करता है, सम्प्रदान कहलाता है। इसके चिह्न 'को', 'के लिए' हैं, किन्तु सम्प्रदान कारक 'के निमित्त', 'के हितार्थ', 'के अर्थ', 'के वास्ते' आदि से भी अभिव्यक्त होता है, लेकिन ये विभक्ति-चिह्न नहीं हैं; जैसे—

(क) दानी व्यक्ति याचक को धन देता है।

(ख) अमरेश ने कमलकुमारी के लिए एक कलम खरीदी।

(ग) यह सम्पूर्ण व्यवस्था सरस्वती-पूजा के निमित्त हो रही है।

उपर्युक्त वाक्यों में 'याचक को', 'कमलकुमारी के लिए' और 'सरस्वती-पूजा के निमित्त' सम्प्रदान कारक हैं।

(५) अपादान—संज्ञा या सर्वनाम का वह रूप, जिससे वियुक्त स्थान की स्थिति सूचित हो, क्रिया का पूर्व लगाव ज्ञात हो, अपादान कहलाता है। इसका चिह्न 'से' है; जैसे—

(क) पुल से कई आदमी गिर पड़े। (ख) पेड़ से पत्ते गिरे।

उपर्युक्त वाक्यों में 'पुल से' और 'पेड़ से' अपादान कारक है।

(६) सम्बन्ध—संज्ञा या सर्वनाम का वह रूप, जिससे किसी का सम्बन्ध सूचित होना पाया जाय, सम्बन्ध कहलाता है। इसके चिह्न 'का', 'की', 'के', 'रा', 'रे', 'री', 'ना', 'ने' और 'नो' हैं; जैसे—

(क) राम का बैल आता है।

(ख) राम के बैल आते हैं।

(ग) राम की गाय आती है।

(घ) मेरा बैल आता है।

(७) अधिकरण—संज्ञा या सर्वनाम के उस रूप को, जिससे क्रिया के आधार का बोध हो, अधिकरण कहते हैं। इसके चिह्न 'में', 'पै', 'पर' और 'ऊपर' हैं; जैसे—

(क) अमरेश खेत में टहलता है।

(ख) अरविन्द घर की छत पर बैठा है।

(८) सम्बोधन—संज्ञा का वह रूप है, जिससे किसी को पुकारना या सचेत करना सूचित होता है, सम्बोधन कहलाता है। इसका क्रिया के साथ कोई सीधा सम्बन्ध नहीं होता है। इसका चिह्न कोई नहीं है। किन्तु हे, अरी, अरे, री, रे, अहो आदि अव्ययों को शब्द के पूर्व में लगाकर इसे बतलाते हैं। जैसे—

(क) अरे मोहन, तुम कहाँ गये थे ?

(ख) रे मोहन इधर आओ।

सम्बोधन कारक की विभक्तियाँ प्रारम्भ में ही प्रयुक्त होती हैं।

टिप्पणी—कारक के विषय में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए कारक प्रकरण देखिये।

अभ्यास

(१) इन शब्दों का लिंग-निर्णय वाक्यों के द्वारा करें—होश, दाँत, दर्शन, चावल, ओठ, आँसू।

(२) कारक किसे कहते हैं ? (३) सम्प्रदान और अपादान में क्या भेद है, उदाहरण-सहित समझाइये। (४) एक ऐसा वाक्य बनायें, जिसमें सात कारकों का प्रयोग हो।

संज्ञा के रूप

वचन और कारक के सम्बन्ध की स्पष्टता के लिये संज्ञा के रूप में परिवर्त्तन होता है। इस रूप-परिवर्त्तन के कारण संज्ञा के दो भेद हैं—(क) विकृत और (ख) अविकृत।

जिन स्वरान्त संज्ञा का अन्त्य स्वर कारकादि के कारण परिवर्तित होता है, वह संज्ञा विकृत कहलाती है; जैसे—'घोड़ा' का रूप बहुवचन में 'घोड़े' में बदलता है। जिस स्वरान्त संज्ञा का अन्त्य स्वर कारकादि के कारण परिवर्तित नहीं होता, वह संज्ञा अविकृत कहलाती है; जैसे—'राजा' का रूप बहुवचन में भी 'राजा' ही होता है।

विकृत संज्ञा का प्रयोग	अविकृत संज्ञा का प्रयोग
एकवचन—घोड़ा चरता है।	एकवचन—राजा आता है।
बहुवचन—घोड़े चरते हैं।	बहुवचन—राजा आते हैं।

श्री एस० एस० केलौग, एम० ए० ने अपने व्याकरण-ग्रन्थ में, जिसका नाम 'ए ग्रामर ऑफ दि हिन्दी लेंग्वेज़' है, निम्नलिखित नियमों का निर्धारण कर यह बतलाया है कि किन-किन स्थितियों में संज्ञा का रूप अविकृत होता है—

(१) प्राय: अधिकतर तद्भव, पुल्लिग और आकारान्त संज्ञाओं के एकवचन में जब कारक के चिह्न या विभक्तियाँ जोड़ी जाती हैं, तब अन्त्य स्वर 'ए' में बदलता है और यदि अन्त्य स्वर 'आँ' हो तो 'एँ' में बदलता है। इनके सिवा सभी पुल्लिग या स्त्रीलिंग संज्ञाएं एकवचन में अविकृत रूप में होती हैं; जैसे—

(क) तद्भव, पुल्लिग और आकारान्त विकृत संज्ञाएँ—कुत्ता—कुत्तों ने; लड़का—लड़के ने; घोड़ा—घोड़े ने; ताँबा—ताँबे में; बनिया—बनिये ने; पहिया—पहिये में; भेड़िया—भेड़िये ने; धुआँ—धुएँ में; कुआँ—कुएँ में।

(ख) अविकृत तद्भव संज्ञाएँ—माली—माली ने; घर—घर में; लड़की—लड़की ने; रात—रात में; बालक—बालक ने।

(ग) आकारान्त तत्सम (संस्कृत) पुल्लिग अविकृत सज्ञाएँ—राजा, माता, पिता, आत्मा, चन्द्रमा, वेधा, विधाता आदि।

टिप्पणी—(क) संस्कृत के ऋकारान्त, अन् प्रत्ययान्त और स्‌कारान्त शब्द हिन्दी में आकारान्त शब्द के रूप में प्रयुक्त होते हैं, जैसे—राजन्—राजा, मातृ—माता, पितृ—पिता, आत्मन्—आत्मा, चन्द्रमस्—चन्द्रमा, वेधस्—वेधा, विधातृ—विधाता आदि।

(ख) सम्बन्धसूचक अधिकतर आकारान्त संज्ञाएँ एकवचन में अविकृत होती हैं; जैसे—मामा, नाना, दादा, बाबा, लाला, चाचा आदि। 'बाप—दादा' एकवचन में वैकल्पिक रूप में विकृत होता है।

(ग) फारसी की कुछ हकारांत संज्ञाओं का अन्त्य 'ह' 'ए' में बदलता है; जैसे—बन्द.—बन्दे।

(घ) कभी-कभी सम्बोधन कारक के एकवचन में विकृत तद्भव पुल्लिग संज्ञाओं का रूप भी अविकृत होता है; जैसे—हे बेटा, (हे बेटे) आदि।

(ङ) कुछ स्थानवाचक आकारांत शब्द अविकृत हैं; जैसे—गया, एशिया, अफ्रिका, अमेरिका, आस्ट्रेलिया आदि। कुछ स्थानवाचक आकारांत शब्द विकृत हैं; जैसे—पटना, दरभंगा, छपरा, कलकत्ता, आगरा, राजपुताना आदि।

टिप्पणी—हमारी समझ में स्थानवाचक जो शब्द संस्कृत, अरबी-फ़ारसी या अँगरेजी के तत्सम रूप में प्रयुक्त होते हैं, उन्हें अविकृत समझा जाना चाहिए और जो तद्भव रूप में प्रयुक्त होते हैं, उन्हें विकृत समझा जाना चाहिए।

(२) प्रथम नियम के अनुसार जो पुल्लिग संज्ञाएँ विभक्ति-सहित एकवचन में भी ज्यों की त्यों विकृतावस्था में होती हैं और जो विभक्ति-सहित एकवचन में विकृत नहीं होती हैं, विभक्तिरहित बहुवचन में भी ज्यों की त्यों रह जाती हैं, जैसे—

एकवचन	विभक्ति-सहित एकवचन	विभक्ति-रहित बहुवचन
घोड़ा	घोड़े में	घोड़े
पैसा	पैसे में	पैसे
महीना	महीने में	महीने
रुपया	रुपये में	रुपये
घर	घर में	घर
योद्धा	योद्धा ने	योद्धा
राजा	राजा ने	राजा
भाई	भाई ने	भाई

(३) सभी इकरान्त या ईकारान्त स्त्रीलिंग संज्ञाओं के अन्त में 'याँ' और शेष स्त्रीलिंग संज्ञाओं के अन्त में 'एँ' जोड़कर विभक्ति-रहित बहुवचन रूप बनाये जाते हैं; जैसे—

एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
लड़की	लड़कियाँ	रीति	रीतियाँ
विधि	विधियाँ	भित्ति	भित्तियाँ
लता	लताएँ	खता	खताएँ
बला	बलाएँ	सदा	सदाएँ
बात	बातें	रात	रातें
भेड़	भेड़ें	वस्तु	वस्तुएँ
ऋतु	ऋतुएँ	कला	कलाएँ

टिप्पणी—(क) अकारान्त एकवचन स्त्रीलिंग संज्ञाओं का अन्त्य 'अ' विभक्ति-रहित बहुवचन में 'एँ' हो जाता है—'एँ' की जगह 'यें' का भी प्रयोग होता है; जैसे:- छत–छतें, घटा–घटाएँ (घटायें), ऋचा–ऋचाएँ (ऋचायें) आदि ।

(ख) 'याँ' के पूर्व यदि दीर्घ स्वर हो तो वह ह्रस्व में बदलता है; जैसे—डाली—डालियाँ, प्याली—प्यालियाँ आदि ।

(ग) ऊनवाचक स्त्रीलिंग संज्ञाओं के अन्त में यदि 'इया' हो तो विभक्ति-रहित बहुवचन बनाने में, उनमें केवल चन्द्रविन्दु जोड़ा जाता है; जैसे—चिड़िया—चिड़ियाँ, बुढ़िया—बुढ़ियाँ आदि ।

(४) स्त्रीलिंग और पुल्लिग दोनों संज्ञाओं का विभक्ति-सहित बहुवचन का प्रत्यय 'ओं' है और केवल सम्बोधन कारक में अनुस्वार का लोप होता है ।

टिप्पणी—(क) विकृत संज्ञाओं में 'ओ' अन्त्य स्वर में मिलाया जाता है; जैसे—लड़कों ने आदि ।

(ख यदि ईकारान्त संज्ञाएँ हों, तो वे इकारान्त होकर 'ओ' के बदले 'यों' से मिलती हैं; जैसे—लड़कियों ने आदि ।

(ग) यदि ऊकारान्त संज्ञाएँ हों तो उकारान्त होकर 'ओं' से मिलती हैं; जैसे—हिन्दू—हिन्दुओं ने आदि ।

(घ) ओकारान्त शब्दों के अन्त में केवल अनुस्वार प्रयुक्त होता है और अनुस्वार सहित ओ या आकारान्त शब्दों में कोई विकार नहीं होता ।

(ङ. अन्य स्थितियों में 'ओं' ज्यों-का-त्यों एकवचन संज्ञाओं के अन्त में जोड़ा जाता है ।

टिप्पणी—(क) कुछ लेखक 'देवता', 'राजा', 'आत्मा', 'महाराजा' आदि शब्दों का प्रयोग विकृत संज्ञाओं की भाँति विभक्ति सहित बहुवचन में 'देवतों', 'राजों', 'आत्मों', 'महाराजों', आदि के रूप में करते हैं, लेकिन वस्तुत: 'देवता', 'राजा', 'आत्मा', 'महाराजा' आदि अविकृत संज्ञाएँ हैं और विभक्ति-सहित बहुवचन में इनका रूप 'देवताओं', 'राजाओं' 'आत्माओं', 'महाराजाओं' आदि होना चाहिए ।

(ख) 'तारा' संस्कृत का शब्द है जिसका प्रयोग भी अविकृत संज्ञा की भाँति विभक्ति-सहित बहुवचन में 'ताराओं' के रूप में करना चाहिए लेकिन विकृत और एकार्थ बोधक 'सितारा' के वजन पर लोग प्राय: तारों का प्रयोग भी करते हैं।

(ग) 'रोम', 'गाँव', 'नाव', 'दाव', 'पाँव' आदि का विभक्ति-सहित बहुवचन रूप एक वैयाकरण ने क्रमश: 'रोओं', 'गाँओं', 'नाओं', 'दाओं', 'पाँओं' आदि लिखा है, लेकिन इनकी जगह 'रोमों', 'गाँवों', 'नावों', 'दावों', 'पाँवों', आदि का प्रयोग ही अधिक प्रचलित है।

(घ) कुछ वैयाकरणों ने 'चिड़िया' और 'बुढ़िया' शब्दों का प्रयोग विभक्ति सहित एकवचन में 'चिड़िये ने' और 'बुढ़िये ने' के रूप में किया है। इसी प्रकार इन शब्दों के विभक्ति-रहित बहुवचन रूप 'चिड़ियें' और 'बुढ़ियें' भी मान्य हैं।

रूपावली

(१) पुल्लिंग शब्द

अकारान्त पुलिंग 'बालक' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	बालक, बालक ने	बालक, बालकों ने
कर्म	बालक को	बालकों को
करण	बालक से	बालकों से
सम्प्रदान	बालक के लिये	बालकों के लिये
अपादान	बालक से	बालकों से
सम्बन्ध	बालक का, की, के	बालकों का, की, के
अधिकरण	बालक में, पर	बालकों में, पर
सम्बोधन	हे बालक,	हे बालको,

टिप्पणी—सभी पुल्लिंग अकारान्त शब्दों के रूप इसी प्रकार के होते हैं।

आकारान्त विकृत पुल्लिग 'घोड़ा' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	घोड़ा, घोड़े ने	घोड़े, घोड़ों ने
कर्म	घोड़े को	घोड़े, घोड़ों को
करण	घोड़े से	घोड़ों से
सम्प्रदान	घोड़े के लिये	घोड़ों के लिये
अपादान	घोड़े से	घोड़ों से
सम्बन्ध	घोड़े का, की, के	घोड़ों का, की, के
अधिकरण	घोड़े में, पर	घोड़े में, पर
सम्बोधन	हे घोड़े,	हे घोड़ो,

टिप्पणी—सभी पुल्लिग आकारान्त विकृत शब्दों के रूप इसी प्रकार के होते हैं।

अविकृत आकारान्त पुल्लिग 'विधाता' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	विधाता, विधाता ने	विधाता, विधाताओं ने
कर्म	विधाता को	विधाताओं को
करण	विधाता से	विधाताओं से
सम्प्रदान	विधाता के लिये	विधाताओं के लिये
अपादान	विधाता से	विधाताओं से
सम्बन्ध	विधाता का, की, के	विधाताओं का, की, के
अधिकरण	विधाता में, पर	विधाताओं में, पर
सम्बोधन	हे विधाता,	हे विधाताओं,

टिप्पणी—सभी अविकृत आकारान्त पुल्लिग शब्दों के रूप इसी प्रकार के होते हैं।

इकारांत पुल्लिंग 'कवि' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	कवि, कवि ने	कवि, कवियों ने
कर्म	कवि को	कवियों को
करण	कवि से	कवियों से
सम्प्रदान	कवि के लिये	कवियों के लिये
अपादान	कवि से	कवियों से
सम्बन्ध	कवि का की, के	कवियों का, की, के
अधिकरण	कवि में, पर	कवियों में, पर
सम्बोधन	हे कवि	हे कवियो,

ईकारांत पुल्लिंग 'मोती' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	मोती, मोती ने	मोती, मोतियों ने
कर्म	मोती को	मोतियों को
करण	मोती से	मोतियों से
सम्प्रदान	मोती के लिये	मोतियों के लिये
अपादान	मोती से	मोतियों से
सम्बन्ध	मोती का, की, के	मोतियों का, की, के
अधिकरण	मोती में, पर	मोतियों में, पर
सम्बोधन	हे मोती,	हे मोतियो,

उकारान्त पुल्लिंग 'गुरु' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	गुरु गुरु ने	गुरु, गुरुओं ने
कर्म	गुरु को	गुरुओं को
करण	गुरु से	गुरुओं से
सम्प्रदान	गुरु के लिये	गुरुओं के लिये

कारक	एकवचन	बहुवचन
अपादान	गुरु से	गुरुओं से
सम्बन्ध	गुरु का, की, के	गुरुओं का, की, के
अधिकरण	गुरु में, पर	गुरुओं में, पर
सम्बोधन	हे गुरु,	हे गुरुओ,

ऊकारान्त पुल्लिग 'हिन्दू' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	हिन्दू, हिन्दू ने	हिन्दू, हिन्दुओं ने
कर्म	हिन्दू को	हिन्दुओं को
करण	हिन्दू से	हिन्दुओं से
सम्प्रदान	हिन्दू के लिये	हिन्दूओं के लिये
अपादान	हिन्दू से	हिन्दुओं से
सम्बन्ध	हिन्दू का, की, के	हिन्दुओं का, की, के
अधिकरण	हिन्दू में, पर	हिन्दुओं में, पर
सम्बोधन	हे हिन्दू,	हे हिन्दुओ,

एकारान्त पुल्लिग 'चौबे' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	चौबे, चौबे ने	चौबे, चौबेओं ने
कर्म	चौबे को	चौबेओं को
करण	चौबे से	चौबेओं से
सम्प्रदान	चौबे के लिये	चौबेओं के लिये
अपादान	चौबे से	चौबेओं से
सम्बन्ध	चौबे का, की, के	चौबेओं का, की, के
अधिकरण	चौबे में, पर	चौबेओं में, पर
सम्बोधन	हे चौबे,	हे चौबेओ,

ओकारान्त पुल्लिंग 'कोदो' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	कोदो, कोदो ने	कोदो, कोदों ने
कर्म	कोदो को	कोदों को
करण	कोदो से	कोदों से
सम्प्रदान	कोदो के लिये	कोदों के लिये
अपादान	कोदो से	कोदों से
सम्बन्ध	कोदो का, की, के	कोदों का, की, के
अधिकरण	कोदो में, पर	कोदों में, पर
सम्बोधन	हे कोदो,	हे कोदो,

औकारान्त पुल्लिंग 'जौ' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	जौ, जौ ने	जौ, जौओं ने
कर्म	जौ को	जौओं को
करण	जौ से	जौओं से
सम्प्रदान	जौ के लिये	जौओं के लिये
अपादान	जौ से	जौओं से
सम्बन्ध	जौ का, की, के	जौओं का, की, के
अधिकरण	जौ में, पर	जौओं में, पर
सम्बोधन	हे जौ,	हे जौओ,

(२) स्त्रीलिंग शब्द

अकारान्त स्त्रीलिंग 'किरण' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	किरण, किरण ने	किरणें, किरणों ने
कर्म	किरण को	किरणों को
करण	किरण से	किरणों से

कारक	एकवचन	बहुवचन
सम्प्रदान	किरण के लिये	किरणों के लिये
अपादान	किरण से	किरणों से
सम्वन्ध	किरण का, की, के	किरणों का, की, के
अधिकरण	किरण में, पर	किरणों में, पर
सम्वोधन	हे किरण,	हे किरणो,

आकारान्त स्त्रीलिंग 'चिड़िया' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	चिड़िया, चिड़िया ने	चिड़ियें, चिड़ियों ने
कर्म	चिड़िया को	चिड़ियों को
करण	चिड़िया से	चिड़ियों से
सम्प्रदान	चिड़िया के लिये	चिड़ियों वे लिये
अपादान	चिड़िया से	चिड़ियों से
सम्वन्ध	चिड़िया का, की, के	चिड़ियों का, की, के
अधिकरण	चिड़िया में, पर	चिड़ियों में, पर
सम्वोधन	हे चिड़िया,	हे चिड़ियो,

आकारान्त स्त्रीलिंग तत्सम् 'कोकिला' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	कोकिला, कोकिला ने	कोकिलाएँ, कोकिलाओं ने
कर्म	कोकिला को	कोकिलाओं को
करण	कोकिला से	कोकिलाओं से
सम्प्रदान	कोकिला के लिये	कोकिलाओं के लिये
अपादान	कोकिला से	कोकिलाओं से
सम्वन्ध	कोकिला का, की, के	कोकिलाओं का, की, के
अधिकरण	कोकिला में, पर	कोकिलाओं में, पर
सम्वोधन	हे कोकिला,	हे कोकिलाओ,

इकारान्त स्त्रीलिंग 'छवि' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	छवि, छवि ने	छवियाँ, छवियों ने
कर्म	छवि को	छवियों को
करण	छवि से	छवियों से
सम्प्रदान	छवि के लिये	छवियों के लिये
अपादान	छवि से	छवियों से
सम्बन्ध	छवि का, की, के	छवियों का, की, के
अधिकरण	छवि में, पर	छवियों में, पर
सम्बोधन	हे छवि,	हे छवियो,

ईकारान्त स्त्रीलिंग 'व्याली' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	व्याली, व्याली ने	व्यालियाँ, व्यालियों ने
कर्म	व्याली को	व्यालियों को
करण	व्याली से	व्यालियों से
सम्प्रदान	व्याली के लिये	व्यालियों के लिये
अपादान	व्याली से	व्यालियों से
सम्बन्ध	व्याली का, की, के	व्यालियों का, की, के
अधिकरण	व्याली में, पर	व्यालियों में, पर
सम्बोधन	हे व्याली,	हे व्यालियो,

उकारान्त स्त्रीलिंग 'धेनु' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	धेनु, धेनु ने	धेनुएँ, धेनुओं ने
कर्म	धेनु को	धेनुओं को
करण	धेनु से	धेनुओं से

कारक	एकवचन	बहुवचन
सम्प्रदान	धेनु के लिये	धेनुओं के लिये
अपादान	धेनु से	धेनुओं से
सम्बन्ध	धेनु का, की, के	धेनुओं का, की, के
अधिकरण	धेनु में, पर	धेनूओं में, पर
सम्बोधन	हे धेनु	हे धेनुओ,

ऊकारान्त स्त्रीलिंग 'बधू' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	बधू, बधू ने	बधुएँ, बधुओं ने
कर्म	बधू को	बधुओं को
करण	बधू से	बधुओं से
सम्प्रदान	बधू के लिये	बधुओं के लिये
अपादान	बधू से	बधुओं से
सम्बन्ध	बधू का, की, के	बधुओं का, की, के
अधिकरण	बधू में, पर	बधुओं में, पर
सम्बोधन	हे बधू.	हे बधुओ,

औकारान्त स्त्रीलिंग 'गौ' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	गौ, गौ ने	गौएँ, गौओं ने
कर्म	गौ को	गौओं को
करण	गौ से	गौओं से
सम्प्रदान	गौ के लिये	गौओं के लिये
अपादान	गौ से	गौओं से
सम्बन्ध	गौ का, की, के	गौओं का, की, के
अधिकरण	गौ में, पर	गौओं में, पर
सम्बोधन	हे गौ,	हे गौओ,

अनुस्वारयुक्त ओकारान्त स्त्रीलिंग 'सरसों' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	सरसों सरसों ने	एकवचन के ही समान बहुवचन होते हैं।
कर्म	सरसों को	
करण	सरसों से	
सम्प्रदान	सरसों के लिये	
अपादान	सरसों से	
सम्बन्ध	सरसों का, की, के	
अधिकरण	सरसों में, पर	
सम्बोधन	हे सरसों,	

टिप्पणी— संस्कृत संज्ञाओं के मूल सम्बोधन कारक का एकवचन रूप भी हिन्दी भाषा में कहीं-कहीं प्रयुक्त होता है; जैसे—

(क) व्यंजन संज्ञाएँ—राजन्, श्रीमान्, भगवान्, महात्मन्, आदि।

(ख) इकारान्त संज्ञाएँ—मुने, सीतापते, हरे आदि।

(ग) ईकारान्त संज्ञाएँ—पुत्रि, देवि, जननि आदि।

(घ) उकारान्त संज्ञाएँ—बन्धो, प्रभो, गुरो आदि।

(ङ) आकारान्त संज्ञाएँ—गंगे, यमुने, सीते, सुनयने आदि।

अभ्यास

(१) निम्नलिखित वाक्यों को शुद्ध करें :—

(क) राम ने मोहन को कलकत्ता के पता से तीन पत्र भेजा था। (ख) राम की कई पुस्तक आगरा में छूट गयं। (ग) कुल बालिका भाग गयी। (घ) बिहार के सब गाँव का हालत एक समान है। (ङ) पाँच बुढ़िये ने चार चिड़िये को पकड़े थे। (च) बाग में दस लता खिली है।

(२) आकारान्त संज्ञा शब्दों के रूप किन स्थितियों में एकारान्त होते हैं, उदाहरण सहित लिखें।

सर्वनाम

वह विकारी शब्द सर्वनाम कहलाता है जो पूर्वापर सम्बन्ध से किसी भी संज्ञा के बदले उपभोग में आता है; जैसे मैं बोलनेवाला), तू सुननेवाला), यह (निकटवर्ती वस्तु), वह (दूरवर्ती वस्तु) आदि।

हिन्दी में सर्वनामों की संख्या ग्यारह है--मैं, तू, आप, यह, वह, सो, जो, कोई, कुछ, कौन और क्या।

सर्वनाम के प्रयोग से वाक्य में मँजाव आता है, सुन्दरता आती है और भद्दापन दूर होता है। एक उदाहरण लें--राममूर्ति इस युग के भीम हैं। राममूर्ति हाथी को अपनी छाती पर चढ़ा लेते हैं। राममूर्ति ने ब्रह्मचर्य से इतनी शक्ति की प्राप्ति की है।

उपर्युक्त तीनों वाक्यों में 'राममूर्ति' का प्रयोग कई बार हुआ है, जिससे वाक्यों में भद्दापन आ गया है। यदि सर्वनामों का प्रयोग किया जाय तो भद्दापन दूर हो जायगा और वाक्यों में मँजाव आ जायगा तथा सुन्दरता बढ़ जायगी; जैसे—राममूर्ति इस युग के भीम हैं, 'वे' हाथी को अपनी छाती पर चढ़ा लेते हैं। 'उन्होंने' ब्रह्मचर्य से इतनी शक्ति की प्राप्ति की है।

प्रयोग के अनुसार सर्वनामों के छः भेद हैं—

(१) पुरुषवाचक—मैं, तू और आप (आदर सूचक)।
(२) निजवाचक—आप।
(३) निश्चयवाचक--यह, वह और सो।
(४) सम्बन्धवाचक—जो।
(५) प्रश्नवाचक--कौन और क्या।
(६) अनिश्चयवाचक—कोई और कुछ।

वक्ता की दृष्टि से सारे संसार के तीन विभाग किये जाते हैं---(क) वक्ता, (ख) श्रोता और (ग) कथा-विषय यानी वक्ता और श्रोता के सिवा संसार की सारी वस्तुएँ। प्रकारान्तर से यों कहा जा सकता है कि सम्पूर्ण सृष्टि के तीन रूप हैं—बोलनेवाला, सुननेवाला और जिसके बारे में बोला या सुना जाय। ये तीन

रूप व्याकरण के अनुसार पुरुष कहलाते हैं, जिन्हें क्रमशः उत्तम पुरुष, मध्यम पुरुष और अन्य पुरुष कहते हैं। उन तीनों पुरुषों में चूँकि उत्तम पुरुष और मध्यम पुरुष का अर्थ निश्चित होता है, इसलिए ये दोनों प्रधान हैं। अन्य पुरुष का अर्थ अनिश्चित होता है, इसलिए इसमें सारे संसार का अर्थ समाविष्ट होता है। अभिप्राय यह है कि उत्तम पुरुष 'मैं' और मध्यम पुरुष 'तू' के अतिरिक्त सभी सर्वनाम और संज्ञाएँ अन्य पुरुष के अन्तर्गत आती हैं। अनिश्चित वस्तु-समूह को संक्षेप में प्रकट करने के लिए अन्य पुरुष के उदाहरण के रूप में 'वह' सर्वनाम का प्रयोग किया जा सकता है।

संक्षेप में सर्वनामों के तीनों पुरुषों के उदाहरण ये हैं—

१. उत्तम पुरुष—मैं।

२. मध्यम पुरुष—तू और और आप (आदरसूचक)।

३. अन्य पुरुष—यह, वह, आप (आदर सूचक), सो, जो, कौन, क्या, कोई और कुछ।

(१) 'मैं' उत्तम पुरुष एकवचन है, जिसका प्रयोग इन अवस्थाओं में होता है—

(क) जब बोलने वाला अपने सम्बन्ध में ही कुछ विधान करता है; तब वह इस सर्वनाम का प्रयोग करता; जैसे—'मैं' पटना जाऊँगा।

(ख) बड़े व्यक्तियों के साथ बोलने में या देवता से प्रार्थना करने में; जैसे—महोदय, मैं प्रणाम करता हूँ।

(ग) नारी बहुधा अपने लिये 'मैं' का प्रयोग करती है; जैसे—आज मैंने ऐसे बुरे-बुरे सपने देखे हैं कि जब से सोके उठी हूँ, कलेजा काँप रहा है।

(२) 'हम' उत्तम पुरुष बहुवचन है, जिसका अर्थ संज्ञा के बहुवचन के अर्थ से भिन्न है। इसका अर्थ यही है कि बोलने वाला अपने साथियों की ओर से प्रतिनिधि के रूप में अपनी और उनकी राय एक साथ व्यक्त करता है।

(क) सम्पादक और लेखक अपने लिए बहुधा उत्तम पुरुष बहुवचन का प्रयोग करते हैं; जैसे—

(१) अपने पिछले सम्पादकीय लेख में हम इस बात की चर्चा कर चुके हैं।
(२) इस बात का विवरण अगले प्रकरण में मिलेगा, इसलिये यहाँ हम नहीं लिखते।

(ख) उच्चाधिकारी और राजा-महाराजा; अपनी आज्ञाओं में उत्तम पुरुष 'हम' का प्रयोग करते हैं; जैसे—इसलिए अब हम इश्तहार देते हैं। हमने अपना फैसला सुना दिया।

(ग) अपने देश, कुटुम्ब या मानव-जाति के बारे में कुछ कहते हुए प्रत्येक व्यक्ति उत्तम पुरुष के रूप में 'हम' का प्रयोग करता है; जैसे—

(१) हम वन-वासियों ने ऐसे आभूषण कभी न देखे थे।

(२) हवा के बिना हम पल भर भी नहीं जी सकते।

(घ) कभी-कभी क्रोध या अभिमान में यह प्रयोग सामने आता है; जैसे—"हम आधी दक्षिणा लेकर क्या करें"—विश्वामित्र।

(ङ) कभी-कभी एक ही पुरुष के लिए क्रमशः व्यक्ति और प्रतिनिधि के अर्थ में एक ही वाक्य में 'मैं' और 'हम' प्रयुक्त होते हैं; जैसे—मैं चाहता हूँ कि हमारे देश में सुख-शांति की वर्षा हो और हम सब दिन-दूनी रात चौगुनी उन्नति करें।

(च) 'हम' से बहुत्व का बोध कराने के लिये बहुधा 'लोग' शब्द का प्रयोग किया जाता है; जैसे—"आर्य, हम लोग तो क्षत्रिय हैं, हम दो बातें कहाँ से जानें।"

—हरिश्चन्द्र

(३) 'तू' मध्यम पुरुष एकवचन है जिसके प्रयोग से निरादर या हल्कापन व्यक्त होता है, इसलिए एक व्यक्ति के लिए भी 'तू' की जगह बहुधा तुम प्रयुक्त होता है। 'तू' का प्रयोग इन अवस्थाओं में होता है—

(क) देवता से प्रार्थना करने में, जैसे—

'देव' तू दयालु, दीन हौं, तू दानि, हौं भिखारी।'—सूरदास

(ख) छोटे बच्चों या शिष्यों के लिए प्यार में; जैसे—

अरे हठीला बालक, तू क्यों रोता है?

(ग) अभिन्न मित्र के लिए; जैसे—मित्र, ऐसा तू क्यों कहता है?

(घ) तिरस्कार या क्रोध में किसी से; जैसे—तू मेरे सामने से चला जा, मैं तुझे देखना नहीं चाहता।

(४) 'तुम' मध्यम पुरुष बहुवचन है, जिसका प्रयोग एक व्यक्ति के लिए भी होता है। बहुत्व-बोध के लिए इसके साथ 'लोग' जोड़ा जाता है; जैसे—तुम लोग कहाँ खेल रहे थे ?

'तुम' का प्रयोग इन अवस्थाओं में होता है—

(क) तिरस्कार और क्रोध के सिवा सभी अर्थों में तू' की जगह 'तुम' प्रयुक्त होता है; जैसे—राम, तुम खाना खाओ।

(ख) आदर के लिए 'तुम' की जगह 'आप' प्रयुक्त होता है; जैसे—आप कहाँ से आते है ?

(५) 'वह' अन्य पुरुष एकवचन है, जिसका प्रयोग इन अवस्थाओं में होता है—

(क) किसी एक प्राणी, पदार्थ या धर्म के बारे में बोलने के लिए; जैसे—

१. निस्संदेह हरिश्चन्द्र महाशय हैं। उसके आशय बहुत उदार हैं। (नारद)

२. वह मूर्ख है।

(ख) बड़े व्यक्तियों के प्रति तिरस्कार दिखाने के लिए; जैसे--वह (श्रीकृष्ण) तो गँवार ग्वाल है।

(६) 'वे' अन्य पुरुष बहुवचन है। इसकी जगह 'वह' का प्रयोग भी होता है जो अनुचित है। 'वे' का प्रयोग इन अवस्थाओं में होता है--

(क) एक से अधिक प्राणियों, पदार्थों या धर्मों के बारे में बोलने के लिए; जैसे--राम और श्याम पढ़ते हैं। वे खेलते नहीं।

(ख) एक ही व्यक्ति के बारे में आदर प्रकट करने के लिए; जैसे--

वे (कालिदास) मानव प्रकृति के विश्लेषण में सिद्धहस्त थे।

(७) 'आप' ('तुम' या 'तू' के बदले) मध्यम या अन्य पुरुष बहुवचन है। पुरुष वाचक 'आप' प्रयोग में निजवाचक 'आप' से भिन्न है और इसका प्रयोग मध्यम पुरुष और अन्य पुरुष बहुवचन में आदर के लिए होता है--

(क) अपने पद से उच्चतर पद पर प्रतिष्ठित व्यक्ति के लिए 'तुम' की जगह 'आप' का प्रयोग शिष्ट समझा जाता है; जैसे--

'भला, आपने इसकी शान्ति का भी कुछ उपाय किया है ?'

(ख) समान और अपने पद से कुछ निम्न पद के व्यक्ति के लिए 'तू' के स्थान पर बहुधा 'आप' बोलने का प्रचलन है; जैसे—

'भला आप उदार वा महाशय किसे कहते हैं ?'

(ग) आदर के साथ बहुत्व के बोध के लिए 'आप' के साथ बहुधा 'लोग' शब्द का प्रयोग होता है; जैसे—

'आप लोग मेरे सिर-आँखों पर हैं।'

(घ) अधिक आदर प्रकट करने के लिए उच्च अधिकारियों के प्रति 'श्रीमान्', 'महाराज', 'महाशय', 'महोदय', 'सरकार', 'हूजूर' आदि शब्दों का प्रयोग होता है; जैसे—

'श्रीमान् की क्या आज्ञा है ?'

नारियों के प्रति अतिशय आदर प्रकट करने के लिए 'श्रीमती', 'महाशया', 'महोदया', 'देवी' आदि शब्दों का प्रयोग होता है; जैसे—

'देवीजी का क्या आदेश है ?'

(ङ) अन्य पुरुष में आदर के लिए 'वे' की जगह कभी-कभी 'आप' प्रयुक्त होता है। अन्य पुरुष 'आप' के साथ क्रिया अन्य पुरुष बहुवचन में प्रयुक्त होती है।

(८) अप्रधान पुरुषवाचक सर्वनामों के ये भेद हैं—

(क) निजवाचक— आप।

(ख) निश्चयवाचक—यह, वह और सो।

(ग) अनिश्चयवाचक– कोई और कुछ।

(घ) सम्बन्धवाचक—जो।

(९) निजवाचक 'आप' प्रयोग के अनुसार पुरुषवाचक 'आप' से भिन्न है। पुरुषवाचक 'आप' यद्यपि एक का वाचक होता है तथापि सदा बहुवचन में प्रयुक्त होता है पर निजवाचक 'आप' एक ही रूप से दोनों वचनों में प्रयुक्त होता है। पुरुषवाचक 'आप' केवल मध्य और अन्य पुरुष में प्रयुक्त होता है पर निजवाचक 'आप' तीनों पुरुषों में प्रयुक्त होता है। आदरसूचक 'आप' वाक्य में अकेला प्रयुक्त होता है परन्तु निजवाचक 'आप' दूसरे सर्वनामों के सम्बन्ध से प्रयुक्त होता है।

निजवाचक 'आप' इन अवस्थाओं में प्रयुक्त होता है—(क) किसी संज्ञा या सर्वनाम के अवधारण के लिए; जैसे—

मैं आप वहाँ से आया हूँ।

(ख) दूसरे व्यक्ति के निराकरण के लिए; जैसे—श्री रामलखन पोद्दार ने डाक्टर श्री शिवनन्दन प्रसाद को विदा किया और आप गाँव जाने का विचार करने लगे।

(ग) अवधारण के अर्थ में 'आप' के साथ कभी-कभी 'ही' प्रयुक्त होता है; जैसे—मैं आप ही आता था।

(घ) कभी-कभी 'आप' के साथ इसका रूप 'अपना' जोड़ा जाता है; जैसे—क्या मैं अपने को भूल जाऊँ ?

(ङ) 'आप' के स्थान पर या इनके साथ बहुधा 'खुद', 'स्वयं' या 'स्वतः' का प्रयोग होता है परन्तु 'खुद', 'स्वयं' और 'स्वतः' हिन्दी में अव्यय हैं और ये बहुधा क्रियाविशेषण की भाँति प्रयुक्त होते हैं। इसलिये आदरसूचक 'आप' के साथ इन अव्ययों में किसी एक का प्रयोग होना चाहिये अन्यथा द्विरुक्ति का निवारण न होगा; जैसे—

१. आप स्वयं यह बात समझ सकते हैं।

२. आप खुद यह बात जानते हैं।

(च) 'आप ही', 'अपने आप', 'आप से आप' और 'आप ही आप' का अर्थ 'मन से' या 'स्वभाव से' है और इसका प्रयोग क्रियाविशेषण वाक्यांशों की भाँति होता है।

(१०) जो सर्वनाम वक्ता के पास या दूर की किसी निश्चित वस्तु का बोधक होता है, वह निश्चयवाचक सर्वनाम कहलाता है। इसकी संख्या तीन है—यह, वह और सो।

(११) 'यह' एकवचन है जो इन अवस्थाओं में प्रयुक्त होता है—(क) पास की किसी वस्तु के बारे में बोलने के लिए; जैसे—यह चित्र भगवान् बुद्ध का है।

(ख) पहले कही हुई संज्ञा या संज्ञा-वाक्यांश के बदले; जैसे—

१. विशाखा मेरी भगिनि होती है, फिर यह मेरा स्नेह क्यों न पावे ?

२. सत्य-धर्म पालन क्या हँसी-खेल है ! यह आप ऐसे महात्माओं का ही काम है।

(ग) पहले कहे हुए वाक्य के स्थान में; जैसे—मुझे आप की बात के लिए तनिक भी दुःख नहीं है। इसके सिवा मुझे इस समय आप की कुछ सेवा करनी चाहिये थी।

(घ) पीछे आने वाले वाक्य के स्थान में; जैसे—मैं यह चाहता हूँ कि संघ की बैठक प्रत्येक सप्ताह हो।

(ङ) कभी-कभी 'यह' क्रियाविशेषण के समान प्रयुक्त होता है और इस रूप में इसका अर्थ 'अभी' या 'अब' होता है; जैसे - साहब, यह मैं आया।

(१२) 'यह' का बहुवचन 'ये' है। इसका प्रयोग बहुत्व और आदर के लिए होता है; जैसे -- ये वे हैं हैं जिनसे इन्द्र और वामन भगवान् उत्पन्न हुए।

आदर के लिए 'ये' की जगह 'आप' का प्रयोग बोलने में ही होता है और आदर-पात्र की ओर हाथ से संकेत किया जाता है।

(१३) 'वह' का बहुवचन 'वे' है।

हिन्दी में कोई विशेष अन्य पुरुष सर्वनाम नहीं है। इसके बदले दूरवर्त्ती निश्चयवाचक 'वह' आता है, जिसका प्रयोग अन्य पुरुष के विवेचन में बतलाया गया है। पहले कही हुई दो वस्तुओं में पहली के लिये 'वह' और दूसरी के लिए 'यह' प्रयुक्त होता है; जैसे—

"कनक-कनक तैं सौ गुनी, मादकता अधिकाय।
वह खाये बौरात नर, यह पाये बौराय॥" —बिहारीलाल

(१४) 'सो' सर्वनाम बहुधा सम्बन्ध वाचक सर्वनाम 'जो' के साथ दोनों वचनों में प्रयुक्त होता है, जिसका अर्थ संज्ञा के वचन के अनुसार 'वह' या 'वे' होता है; जैसे—जिसकी चिन्ता आप करते हैं सो (वह) कभी न हुआ होगा।

(क) 'वह' या 'वे' की भाँति 'सो' न अलग वाक्य में प्रयुक्त होता है न 'जो' के पूर्व प्रयुक्त होता है, पर कविता में इस नियम का उल्लंघन प्रायः होता है; जैसे—

'सो ताको सागर जहाँ जाकी प्यास बुझाय।' —बिहारी लाल

(ख) कभी-कभी 'सो' समुच्चयबोधक के समान प्रयुक्त होता है और इस रूप से इसका अर्थ 'इसलिए' या 'तब' होता है; जैसे—

तूने कभी उसका नाम स्मरण नहीं किया, सो क्या तू भी मेरे समान ही भूल गया ?

(१५) जो सर्वनाम किसी विशेष वस्तु का बोधक नहीं होता, उसे अनिश्चयवाचक सर्वनाम कहते हैं। अनिश्चयवाचक सर्वनामों की संख्या दो है—कोई और कुछ ? 'कोई' पुरुष के लिए प्रयुक्त होता है और 'कुछ' पदार्थ वा धर्म के लिए प्रयुक्त होता है।

(१६) 'कोई' का प्रयोग एकवचन में बहुधा इन अर्थों में होता है—

(क) किसी अज्ञात पुरुष या बड़े जन्तु के लिए; जैसे—ऐसा न हो कि कोई मुझे मिल जाये।

(ख) अनेक ज्ञात पुरुषों में किसी अनिश्चित पुरुष के लिए; जैसे—

रघुबंशिन महँ जहँ कोउ होई।
तेहि समाज अस कहहिं न कोई॥

(ग) 'कोई' के साथ 'सब' और 'हर' विशेषण प्रयुक्त होते हैं। 'सब कोई' का अर्थ 'सब लोग' और 'हर कोई' का अर्थ 'हर आदमी' होता है; जैसे—यह कार्य हर कोई नहीं कर सकता।

(घ) अधिक अनिश्चय में 'कोई' के साथ 'एक' जोड़ा जाता है; जैसे—विमल कोई एक बात कहता है।

(ङ) किसी ज्ञात पुरुष के सिवा दूसरे अज्ञात पुरुष का बोध कराने के लिए 'कोई' के साथ 'और' या 'दूसरा' जोड़ा जाता है; जैसे—

यही रहस्य कोई और न जाने।

(च) आदर और बहुत्व-बोध के लिए भी 'कोई' प्रयुक्त होता है और पिछले अर्थ में 'कोई' की बहुधा द्विरुक्ति होती है; जैसे—

क्या तुम्हारे घर 'कोई' आये थे ? कोई-कोई कहते हैं कि यह बात सत्य है।

(छ) कोई-कोई—इन दुहरे शब्दों से विचित्रता का बोध होता है; जैसे—कोई कहता है कि यह चोर है, कोई कहता है कि यह साधु है।

(ज) संख्यावाचक विशेषण के पूर्व 'कोई' परिमाण वाचक क्रियाविशेषण की भाँति प्रयुक्त होता है जिसका अर्थ 'लगभग' होता है; जैसे—इस ग्रन्थ में कोई ५०० पृष्ठ हैं।

(१६) 'कुछ' का रूपान्तर नहीं होता। यह बहुधा विशेषण की भाँति प्रयुक्त होता है। जब यह सर्वनाम के रूप में प्रयुक्त होता है तब इन अर्थों में—

(क) किसी अज्ञात पदार्थ या धर्म के लिए; जैसे -

दूध में कुछ मिला हुआ है।

(ख) छोटे जन्तु या पदार्थ के लिए; जैसे—नदी की धारा में कुछ बहता जाता है।

(ग) कभी-कभी 'कुछ' परिमाण वाचक क्रियाविशेषण की भाँति प्रयुक्त होता है और इस अर्थ में इसकी द्विरुक्ति होती है; जैसे—

बाढ़ का पानी कुछ घटा है। इसका चेहरा उसके चेहरे से कुछ-कुछ मिलता-जुलता है।

(ङ) तिरस्कार, आनन्द या आश्चर्य के अर्थ में भी 'कुछ' क्रियाविशेषण की भाँति प्रयुक्त होता है;—जैसे इसकी बात कुछ न पूछो।

(च) किसी ज्ञात पदार्थ या धर्म के सिवा दूसरे अज्ञात पदार्थ या धर्म का बोध कराने के लिए 'कुछ' के साथ 'और' जोड़ा जाता है, जैसे—तुम्हारे मन में कुछ और ही है।

(छ) विपरीतता या भिन्नता का बोध कराने के लिए 'कुछ का कुछ' प्रयुक्त होता है; जैसे—आपने कुछ का कुछ कर दिया।

(ज) जब 'सब' के साथ 'कुछ' प्रयुक्त होता है तब 'सब पदार्थ या धर्म' इसका अर्थ होता है और जब 'बहुत' के साथ 'कुछ' प्रयुक्त होता है तब 'बहुत से पदार्थ या धर्म' का सूचक बन जाता है; जैसे—

'मैं सब कुछ समझता हूँ।'

(झ) कुछ-कुछ—इन सब दुहरे शब्दों में विचित्रता का बोध होता है; जैसे—तुम कुछ कहते हो और वह कुछ।

(ञ) कुछ-कुछ—ये दुहरे शब्द कभी-कभी समुच्चयबोधक के समान प्रयुक्त होकर दो वाक्यों को संयुक्त करते हैं; जैसे—कुछ मैं कहूँ, कुछ तुम कहो।

(१७) सम्बन्धवाचक सर्वनाम 'जो' दोनों वचनों में प्रयुक्त होता है।

(क) 'जो', 'सो' या 'वह' के साथ नित्य सम्बन्धित होता है। 'सो' या 'वह' निश्चयवाचक सर्वनाम है पर जब यह सम्बन्धवाचक सर्वनाम के साथ प्रयुक्त होता है तब नित्य-सम्बन्धी सर्वनाम कहलाता है। जैसे–जो यह विश्वास करता है वह अमर होता है।

(ख) सम्बन्धवाचक और नित्य सम्बन्धी सर्वनाम एक ही संज्ञा के बदले प्रयुक्त होते हैं। संज्ञा का रूप बहुधा पहले वाक्य में प्रदर्शित होता है और सम्बन्धवाचक सर्वनाम दूसरे वाक्य में प्रयुक्त होता है; जैसे—श्याम का बड़ा पुत्र जिसका नाम मोहन है, परीक्षा में सफल रहा।

(ग) जिस संज्ञा के बदले सम्बन्धवाचक और नित्य-सम्बन्धी सर्वनाम प्रयुक्त होते हैं, उसके अर्थ की स्पष्टता के लिए दोनों सर्वनामों में कोई बहुधा विशेषण की भाँति प्रयुक्त होता है; जैसे—

'जिस हरिश्चन्द्र ने उदय से अन्त तक की पृथ्वी के लिए धर्म न छोड़ा, उनका धर्म आधे गज कपड़े के वास्ते मत छुड़ाओ।'

(घ) नित्य-सम्बन्धी 'सो' की जगह 'वह' के प्रयोग का प्रचलन है और कभी-कभी 'वह' की जगह 'ऐसा', 'सब' और 'कौन' रूप भी प्रयुक्त होते हैं; जैसे–दुनिया में ऐसा कोई पदार्थ नहीं है, जो पुरुषार्थी मनुष्य के लिए अलभ्य हो।

(ङ) कभी-कभी सम्बन्धवाचक सर्वनाम पहले वाक्य में अकेला प्रयुक्त होता है और उसकी संज्ञा दूसरे वाक्य में बहुधा 'ऐसा' या 'वह' के साथ प्रयुक्त होता है; जैसे—जिसने कभी क्रोध नहीं किया, ऐसे राजा युधिष्ठिर ने यह कार्य किया।

(च) कभी-कभी 'जो' एक वाक्य के बदले, बहुधा उसके बाद, प्रयुक्त होता है; जैसे—तेजी से दौड़ो जिससे शीघ्र घर पहुँच सको।

(छ) आदर और बहुत्व-बोध के लिए भी 'जो' प्रयुक्त होता है; जैसे—ये आश्चर्यजनक कार्य उन मनुष्यों ने किये हैं जो पुरुष सिंह कहे जाते हैं।

(ज) 'जो' के साथ फारसी का सम्बन्धवाचक सर्वनाम 'कि' भी प्रयुक्त होता है जिसका उपयोग अब प्रायः नहीं होता; जैसे--राजा हरिश्चन्द्र अद्भुत दानी हो गये हैं कि जिनकी कीर्त्ति संसार में अमर है।

(झ) कभी-कभी सम्बन्धवाचक या नित्य-सम्बन्धी सर्वनाम लुप्त होता है; जैसे—जो यह देखेगा, आपको कोसेगा।

(ञ) समूह के अर्थ में सम्बन्धवाचक और नित्य-सम्बन्धी सर्वनामों की द्विरुक्ति भी होती है; जैसे--जो-जो कहियेगा, होगा।

(ट) 'यदि' या 'कि' के अर्थ में 'जो' कभी-कभी समुच्चयबोधक की भाँति प्रयुक्त होता है; जैसे—क्या हुआ जो आप वहाँ नहीं गये ?

(ठ) 'ज' के साथ अनिश्चयवाचक सर्वनाम भी प्रयुक्त होते हैं। 'कोई' और कुछ के अर्थों में जो भेद है, वही भेद 'जो कोई' और 'जो कुछ' में भी है; जैसे—जो कोई यह कहेगा, झूठ कहेगा। तुम जो कुछ कहते हो, गलत कहते हो।

(१८) जिन सर्वनामों का प्रयोग प्रश्न करने के लिए होता है, उन्हें प्रश्न-वाचक सर्वनाम कहते हैं। ये दो हैं--कौन और क्या ?

'कोई' और 'कुछ' में जो भेद है वही भेद 'कौन' और 'क्या' में है। 'कौन' प्राणियों के लिए और विशेषकर मनुष्यों के लिए प्रयुक्त होता है और 'क्या' क्षुद्र प्राणी, पदार्थ या धर्म के लिए; जैसे, महात्मन् आप कौन हैं और क्या चाहते हैं ?

(१९) 'कौन' का प्रयोग इन अर्थों में होता है--

(क) किसी पदार्थ का लक्षण जानने के लिए; जैसे--तुम्हें कौन आत्म-सुख प्राप्त है ?

(ख) किसी वस्तु के प्रति तिरस्कार या अनादर व्यक्त करने में, जैसे—तुम्हीं बताओ, वहाँ मेरा कौन काम कर आए ?

(ग) विस्मय के अर्थ में 'क्या' बहुधा क्रिया-विशेषण की भाँति प्रयुक्त होता है; जैसे—अरविन्द दौड़ा क्या है, उड़कर आया है।

(घ) धमकी में; जैसे--तुम क्या करते हो ?

(ङ) किसी वस्तु की स्थिति बतलाने में; जैसे--मैं क्या हो गया हूँ और क्या होऊँगा ।

(च) कभी-कभी 'क्या' विस्मयादिबोधक की भाँति प्रयुक्त होता है; जैसे—

(१) प्रश्न करने के लिए--क्या श्याम काशी गया ?

(२) विस्मय बोध कराने के लिए—क्या तुम्हें चिड़िया नहीं दीखती ?

(छ) अशक्यता के अर्थ में 'क्या' क्रिया-विशेषण होता है; जैसे—वे मुझे क्या मारेंगे ?

(ज) निश्चय कराने में भी 'क्या' क्रिया-विशेषण की भाँति प्रयुक्त होता है; जिसका अर्थ 'अवश्य' या 'बेशक' होता है;--मैं यह क्या खाता हूँ ।

(झ) क्या-क्या - ये दुहरे शब्द समुच्चयबोधक की भाँति प्रयुक्त होते हैं; जैसे—क्या वृद्ध, क्या युवक, क्या बालक और क्या नारी, सब कृष्ण की बाँसुरी की तान से मुग्ध होते थे ।

(ञ) दिशान्तर सूचित करने के लिए 'क्या-से-क्या' प्रयुक्त होता है; जैसे—आप क्या-से-क्या हो गये आज !

(२०) पुरुषवाचक, निजवाचक और निश्चयवाचक सर्वनामों में अवधारण के लिए 'ई', 'ही' या 'हीं' प्रत्यय जोड़े जाते हैं; जैसे--तुम = तुम्हीं; वह = वही; यह = यही; मैं = मैं ही; तू = तूहीं; हम = हमीं; आप = आपही ।

(क) अनिश्चयवाचक सर्वनामों में 'भी' अव्यय जोड़े जाते हैं; जैसे--कोई भी, कुछ भी ।

(२१) 'यह', 'वह', 'सो', 'जो' और 'कौन' के रूप 'इस', 'उस', 'तिस' 'जिस' और 'किस' के अन्त्य 'स' की जगह 'तना' के प्रयोग से परिमाणवाचक विशेषण और 'इ' को 'ऐ' तथा 'उ' का 'वै' करके 'सा' के प्रयोग से गुणवाचक विशेषण बनते हैं; जैसे—

(सार्वनामिक विशेषणों की उत्पत्ति)

सर्वनाम	रूप	परिमाणवाचक विशेषण	गुणवाचक विशेषण
यह	इस	इतना	ऐसा
वह	उस	उतना	वैसा
सो	तिस	तितना	तैसा
जो	जिस	जितना	जैसा
कौन	किस	कितना	कैसा

अभ्यास

(१) सर्वनाम किसे कहते हैं ? (२) सर्वनाम के कितने भेद हैं ? प्रत्येक का एक-एक उदाहरण लिखें । (३) 'हम' का प्रयोग कहाँ-कहाँ होता है ?

सर्वनाम का रूपान्तर

संज्ञाओं की भाँति सर्वनामों में वचन और कारक होते हैं परन्तु लिंग के कारण इनका रूप नहीं बदलता ।

विभक्तिरहित कर्त्ताकारक के बहुवचनों में पुरुषवाचक (मैं और तू) और निश्चयवाचक (यह और वह) सर्वनामों के सिवा शेष सर्वनामों का रूपान्तर नहीं होता; जैसे—

एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
मैं	हम	आप	आप
तू	तुम	जो	जो
यह	ये	कौन	कौन
वह	वे	क्या	क्या
सो	सो	कुछ	कुछ

विभक्ति के योग से अधिकतर सर्वनाम दोनों वचनों में विकृत रूप में प्रयुक्त होते हैं। 'कोई' और निजवाचक 'आप' की कारक-रचना केवल एकवचन में होती है। 'क्या' और 'कुछ' का रूपान्तर नहीं होता और ये केवल विभक्ति रहित कर्त्ता और कर्म में प्रयुक्त होते हैं।

'आप', 'कोई', 'क्या' और 'कुछ' के अतिरिक्त शेष सर्वनामों के कर्म और सम्प्रदान कारकों में 'को' के सिवा एक और विभक्ति (एकवचन में 'ए' और बहुवचन में 'एँ') प्रयुक्त होती है।

पुरुषवाचक सर्वनामों में सम्बन्धकारक की 'का, की, के' विभक्तियों के स्थान पर 'रा, री, रे' और निजवाचक सर्वनाम में 'ना, नी, ने' प्रयुक्त होते हैं।

सर्वनाम में सम्बोधन कारक नहीं होता; क्योंकि नाम या उपनाम कह कर ही किसी को पुकारा या सम्बोधित किया जाता है।

पुरुषवाचक सर्वनामों की कारक-रचना इस प्रकार होती है।

उत्तम पुरुष 'मैं'

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	मैं, मैं ने	हम, हमने
कर्म	मुझे, मुझको	हमें, हमको
करण	मुझ से	हम से
सम्प्रदान	मुझे, मुझको	हमें, हम को
अपादान	मुझ से	हम से
सम्बन्ध	मेरा, मेरी, मेरे	हमारा, हमारी, हमारे
अधिकरण	मुझ में, पर	हम में, पर

मध्यम पुरुष 'तू'

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	तू, तू ने	तुम, तुम ने
कर्म	तुझे, तुझ को	तुम्हें, तुम को
करण	तुझ से	तुम से

कारक	एकवचन	बहुवचन
सम्प्रदान	तुझे, तुझ को	तुम्हें, तुम को
अपादान	तुझ से	तुम से
सम्बन्ध	तेरा, तेरी, तेरे	तुम्हारा, तुम्हारी, तुम्हारे
अधिकरण	तुझ में, पर	तुम में, पर

पुरुषवाचक सर्वनामों की कारक-रचना में कर्त्ता और सम्बोधन के सिवा शेष कारकों के एकवचन में 'मैं' का विकृत रूप 'मुझ' और 'तू' का विकृत रूप 'तुझ' होता है। सम्बन्ध कारक के दोनों वचनों में 'मैं' का विकृत रूप क्रमशः 'मे' और 'हमा', और 'तू' का 'ते' और 'तुम्हा' होता है, दोनों वचनों में सम्बन्ध कारक की 'रा, री, रे' विभक्तियाँ प्रयुक्त होती हैं। विभक्ति-सहित कर्त्ता के दोनों वचनों में और सम्बन्ध कारक के अतिरिक्त शेष कारकों के बहुवचन में दोनों का रूप अविकृत होता है।

पुरुषवाचक सर्वनामों के विभक्ति-रहित कर्त्ता के एकवचन और सम्बन्ध कारक के सिवा शेष कारकों में अवधारण के लिए एकवचन में 'ई' और बहुवचन में 'ई' या 'हीं' लगाया जाता है; जैसे—मुझी को, तुझी को, तुम्हीं को आदि।

कविता में 'मेरा' और 'तेरा' के स्थान पर संस्कृत की षष्ठी के रूप में क्रमश. 'मम' और 'तव' भी प्रयुक्त होते हैं।

निजवाचक 'आप' की कारक-रचना केवल एकवचन में होती है; परन्तु एकवचन रूप बहुवचन की संज्ञा या सर्वनाम के साथ भी प्रयुक्त होते हैं। इसका विकृत रूप 'अपना' है जो सम्बन्ध कारक में प्रयुक्त होता है और जो 'आप' में, सम्बन्धकारक की 'ना' विभक्ति जोड़ने से बना है। इसके साथ 'ने' विभक्ति का प्रयोग नहीं होता; परन्तु दूसरी विभक्तियों के योग से इसका रूप हिन्दी आकारान्त संज्ञा के समान 'अपने' होता है। कर्त्ता और सम्बन्ध कारक के सिवा शेष कारकों में विकल्प से 'आप' के साथ विभक्तियों का प्रयोग होता है।

निजवाचक 'आप'

कारक	एकवचन
कर्त्ता	आप
कर्म	अपने को, आप को
करण	अपने से, आप से
सम्प्रदान	अपने को, आप को
अपादान	अपने से, आप से
सम्बन्ध	अपना, ने, नी
अधिकरण	अपने में, आप में

(क) कभी-कभी 'अपना' और 'आप' सम्बन्ध-कारक के सिवा शेष कारकों में संयुक्त रूप में प्रयुक्त होते हैं; जैसे—अपने आप में, अपने-आप से, अपने आप को, अपने-आप आदि।

(ख) 'आप' शब्द का एक रूप 'आपस' है, जिसका प्रयोग संज्ञा के समान भी होता है; जैसे—तुम्हारे आपस में मेल नहीं है।

(ग) 'अपना' का प्रयोग जब संज्ञा की भाँति निज व्यक्तियों के अर्थ में होता है तब इसकी कारक-रचना हिन्दी आकारान्त संज्ञा की भाँति दोनों वचनों में होती है; जैसे—बात पराये की मत पूछो।

हमें हाय, अपनों का भय है। —'द्विज'

(घ) कभी-कभी 'अपना' के स्थान पर 'निज' (सर्वनाम) का सम्बन्ध कारक प्रयुक्त होता है और कभी-कभी दोनों रूप संयुक्त होकर प्रयुक्त होते हैं; जैसे—निज का कपड़ा।

'आप' शब्द आदरसूचक भी है; परन्तु यह केवल अन्य पुरुष के बहुवचन में प्रयुक्त होता है। इस अर्थ में इसकी कारक-रचना निजवाचक 'आप' से भिन्न होता है। विभक्ति के पूर्व आदर सूचक 'आप' विकृत नहीं होता। चूँकि यह आदरार्थ बहुवचन में प्रयुक्त होता है, इसलिए बहुत्व का बोध कराने के लिए इसके साथ 'लोग' या 'सब' प्रयुक्त होता है। इसके साथ 'ने' विभक्ति प्रयुक्त

होती है और सम्बन्ध कारक में 'का, की, के' विभक्तियाँ प्रयुक्त होती हैं। इसके कर्म और सम्प्रदान कारकों में दुहरे रूप नहीं होते।

आदर सूचक 'आप'

कारक	एकवचन	बहुवचन (संख्या)
कर्त्ता	आप, आप ने	आपलोग, आपलोगों ने
कर्म	आप को	आप लोगों को
करण	आप से	आपलोगों से
सम्प्रदान	आप को	आपलोगों को
अपादान	आप से	आपलोगों से
सम्बन्ध	आपका, के, की	आपलोगों का, के, की
अधिकरण	आप में, पर	आपलोगों में, पर

निश्चयवाचक सर्वनामों के दोनों वचनों की कारक-रचना में विकृत रूप प्रयुक्त होते हैं। एकवचन में 'यह' का विकृत रूप 'इस' है; 'वह' का 'उस' है और 'सो' का 'तिस' है और बहुवचन में क्रमशः 'इन', 'उन' और 'तिन' रूप होते हैं। इनके विभक्ति सहित बहुवचन कर्त्ता के अन्त्य 'न' में विकल्प से 'हों' संयुक्त होता है और कर्म तथा सम्प्रदान कारकों के बहुवचन में 'एँ' के पूर्व 'न' में 'ह' जोड़ा जाता है।

निकटवर्त्ती 'यह'

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	यह, इसने	ये, इनने, इन्होंने
कर्म	इस को, इसे	इन को, इन्हें
करण	इस से	इन से
सम्प्रदान	इस को, इसे	इन को, इन्हें
अपादान	इस से	इन से
सम्बन्ध	इस का, के, की	इन का, के, की
अधिकरण	इस में, पर	इन में, पर

दूरवर्ती 'वह'

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	वह, उस ने	वे, उन ने, उन्होंने
कर्म	उस को, उसे	उन को, उन्हें
करण	उस से	उन से
सम्प्रदान	उस को, उसे	उन को, उन्हें
अपादान	उस से	उन से
सम्बन्ध	उस का, के की,	उन का, के, की
अधिकरण	उस में, पर	उन में, पर

नित्य सम्बन्धी 'सो'

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	सो, तिस ने	सो, तिन ने, तिन्हों ने
कर्म	तिस को, तिसे	तिन को, तिन्हें
करण	तिस से	तिन से
सम्प्रदान	तिस को, तिसे	तिन को, तिन्हें
अपादान	तिस से	तिन से
सम्बन्ध	तिस का, के की,	तिन का, के की,
अधिकरण	तिस में, पर	तिन में, पर

सम्बन्धवाचक सर्वनाम 'जो' और प्रश्नवाचक सर्वनाम 'कौन' के रूप निश्चयवाचक सर्वनामों के अनुसार होते हैं। 'जो' के विकृत रूप दोनों वचनों में क्रमशः 'जिस' और 'जिन' हैं और 'कौन' के 'किस' और 'किन' हैं।

सम्बन्धवाचक 'जो'

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	जो, जिसने	जो, जिनने, जिन्हों ने
कर्म	जिस को, जिसे	जिन को, जिन्हें
करण	जिस से	जिन से

कारक	एकवचन	बहुवचन
सम्प्रदान	जिस को, जिसे	जिन को, जिन्हें
अपादान	जिस से	जिन से
सम्बन्ध	जिस का, के, की	जिन का, के, की
अधिकरण	जिस में, पर	जिन में, पर

प्रश्नवाचक 'कौन'

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	कौन, किस ने	कौन, किन ने, किन्हों ने
कर्म	किस को, किसे	किन को, किन्हें
करण	किस से	किन से
सम्प्रदान	किस को, किसे	किन को, किन्हें
अपादान	किस से	किन से
सम्बन्ध	किस का, की, के	किन का, की, के
अधिकरण	किस में, पर	किन में, पर

टिप्पणी—'यह', 'वह', 'सो' और 'कौन' के विभक्ति-सहित कर्त्ताकारक के बहुवचन के जो दो-दो रूप हैं, उनमें दूसरा रूप अधिक शिष्ट माना जाता है; जैसे—

प्रथम रूप—इन ने, उन ने, तिन ने, जिन ने और किन ने।

द्वितीय रूप—इन्हों ने, उन्हों ने, जिन्हों ने, और किन्हों ने।

प्रश्नवाचक सर्वनाम 'क्या' की कारक-रचना नहीं होती। यह शब्द इसी रूप में केवल एकवचन विभक्तिरहित कर्त्ता और कर्म में प्रयुक्त होता है; जैसे—क्या खाया? दूसरे कारकों के एकवचन में 'क्या' के स्थान पर ब्रजभाषा के 'कहा' सर्वनाम का विकृत रूप 'काहे' प्रयुक्त होता है।

प्रश्नवाचक 'क्या'

कारक	एकवचन
कर्त्ता	क्या
कर्म	क्या
करण	काहे से
सम्प्रदान	काहे को
अपादान	काहे से
सम्बन्ध	काहे का, की, के
अधिकरण	काहे में

टिप्पणी—आजकल 'काहे' का प्रयोग नहीं होता।

अनिश्चयवाचक सर्वनाम 'कोई' वास्तव में प्रश्नवाचक सर्वनाम से बना है; जैसे—संस्कृत—कोपि, प्राकृत—कोवि, हिन्दी—कोई। इसका विकृत रूप 'किसी' है जो प्रश्नवाचक सर्वनाम 'कौन' के रूप 'किस' में अवधारणबोधक 'ई' प्रत्यय के संयोग से बना है। 'कोई' भी कारक-रचना केवल एकवचन में होती है; परन्तु इसके रूप की द्विरुक्ति बहुवचन का बोध कराती है। कर्म और सम्प्रदान कारकों में इसका रूप नहीं होता, जैसा दूसरे सर्वनामों का होता है।

अनिश्चयवाचक 'कोई'

कारक	एकवचन	
कर्त्ता	कोई, किसी ने	बहुवचन नहीं होता।
कर्म	किसी को	
करण	किसी से	
सम्प्रदान	किसी को	
अपादान	किसी से	
सम्बन्ध	किसी का, की, के	
अधिकरण	किसी में, पर	

टिप्पणी—कई वैयाकरण 'कोई' के बहुवचन रूप 'किन' के आधार पर 'किन्हीं' 'ने', 'किन्हीं को' आदि लिखते हैं; परन्तु ये रूप शिष्ट नहीं माने जाते हैं।

अनिश्चयवाचक सर्वनाम 'कुछ' की कारक-रचना नहीं होती। 'क्या' की भाँति यह केवल विभक्ति-रहित कर्त्ता और कर्म के एकवचन में प्रयुक्त होता है; जैसे--

(क) दूध में कुछ है।

(ख) उसने कुछ खाया है।

जब 'कुछ' संज्ञा की भाँति 'कोई' के अर्थ में प्रयुक्त होता है, तब इसकी कारक रचना बहुवचन में होती है; जैसे--

(क) उनमें कुछ ने यह बात मान ली।

(ख) उनमें कुछ की यह सम्मति है।

'आप', 'कोई', 'क्या' और 'कुछ' के सिवा शेष सर्वनाम के कर्म और सम्प्रदान कारकों के दो-दो रूप होने से लाभ यह है कि दो 'को' सम्मिलित होकर उच्चारण नहीं बिगाड़ते; जैसे--वह इसे उसको देगा। इस वाक्य में 'इसे' की जगह 'इसको' लिखना या कहना गलत होगा।

निजवाचक 'आप', 'क्या' और 'कुछ' के सिवा शेष सर्वनामों के आदरार्थ बहुवचन रूपों के साथ, बहुत्व का स्पष्ट बोध कराने के लिए, 'लोग' या 'लोगों' जोड़ा जाता है; जैसे--ये लोग, इनलोगों ने, किन लोगों ने, आदि। 'कौन' के सिवा शेष सर्वनामों के साथ 'लोग' के स्थान पर कभी-कभी 'सब' प्रयुक्त होता है; जैसे--इन सब में, उन सब में आदि।

विकारी सर्वनामों के मेल से बने हुए सर्वनामों के दोनों अंग विकृत होते हैं; जिस किसी को, किसी-न-किसी काम आदि।

अवधारण, विकार या अविकार के अर्थ में अधिकतर सर्वनामों के अधिकृत रूप के साथ सम्बन्ध कारक की विभक्ति प्रयुक्त होती है; जैसे--कुछ-का-कुछ हो गया। क्या-का-क्या हो गया।

अभ्यास

(१) शुद्ध कर--राम पटना में रहता है। राम आँठवाँ वर्ग में पढ़ता है। वह कलकत्ता में किताबें खरीदने गये थे।

(२) 'यह', 'वह', 'मैं' और 'कोई' का रूप कारक के दोनों वचनों में लिखें।

(३) 'कोई', और 'कौन' इन तीनों शब्दों के रूप कुल कारकों और दोनों वचनों में लिखें।

(४) 'कौन' और 'क्या' में क्या अन्तर है ?

(५) पुरुषवाचक सर्वनाम कौन-कौन हैं ?

विशेषण

जो विकारी शब्द संज्ञा की व्याप्ति को मर्यादित करता है, वह विशेषण कहलाता है; जैसे—'काला' घोड़ा; 'लाल' आम आदि। यहाँ 'काला', 'लाल' आदि विशेषण हैं कारण, ये 'घोड़ा', 'आम' आदि संज्ञाओं की व्याप्ति को मर्यादित करते हैं।

व्यक्तिवाचक संज्ञा के साथ जो विशेषण प्रयुक्त होता है, वह उसकी व्याप्ति को मर्यादित नहीं करता वरन् उनके अर्थ को सिर्फ स्पष्ट करता है; जैसे—'दानी' हरिश्चन्द्र, 'दयालु' गाँधी, 'अत्याचारी' रावण आदि। यहाँ 'दानी हरिश्चन्द्र' वही व्यक्ति है जो 'हरिश्चन्द्र' है, 'दयालु गाँधी' वही व्यक्ति है जो 'गाँधी' है और 'अत्याचारी रावण' वही व्यक्ति है जो 'रावण' है। यहाँ 'दानी', 'दयालु', 'अत्याचारी' आदि शब्द 'हरिश्चन्द्र', 'गाँधी', 'रावण' आदि व्यक्तिवाचक संज्ञाओं के अर्थ को केवल स्पष्ट करने के लिए प्रयुक्त हुए हैं, इसलिए विशेषण नहीं, वरन् समानाधिकरण कहलायेंगे। इसलिए संक्षेप में कहा जा सकता है कि जो शब्द किसी व्यक्तिवाचक संज्ञा के अर्थ को केवल स्पष्ट करता है, समानाधिकरण कहलाता है।

जो विशेषण जातिवाचक संज्ञा का साधरण धर्म सूचित करनेवाला होता है वह समानाधिकरण होता है; जैसे—'ठंढ़ा' बर्फ, 'काला' कौआ, 'मूक' जानवर, 'अबोध' बालक आदि विशेषण 'बर्फ', 'कौआ', 'जानवर', बालक' आदि के साधारण धर्म सूचित करते हैं, इसलिए समानाधिकरण कहलायेंगे।

जिस संज्ञा की व्याप्ति को विशेषण मर्यादित करता है, संज्ञा विशेष्य कहलाती है या जिस संज्ञा के पूर्व विशेषण प्रयुक्त होता है, उस संज्ञा को विशेष्य कहते

हैं; जैसे—शीतल हवा बहती है। इस वाक्य में 'शीतल' और 'हवा' क्रमशः विशेषण और और विशेष्य हैं।

विशेष्य के साथ विशेषण दो प्रकारों में प्रयुक्त होता है—(क) पहले प्रकार के प्रयोग को विशेष्य-विशेषण कहते हैं और (च) दूसरे प्रकार के प्रयोग को विधेय-विशेषण कहते हैं। विशेष्य-विशेषण विशेष्य के साथ प्रयुक्त होता है; जैसे–'सुगन्धित' फूल। विधेय-विशेषण विधेय के साथ प्रयुक्त होता है; जैसे—मुझे यह दुनिया 'उदास' दीखती है।

विधेय-विशेषण समानाधिकरण होता है; जैसे यह लड़का 'उद्दण्ड' है। इस वाक्य में 'यह' शब्द 'लड़का' संज्ञा की व्यापकता को घटाता है और 'उद्दण्ड' शब्द उस व्यापकता को नहीं घटाता वरन् 'लड़का' के बारे में एक नयी बात उद्दण्डता—जानी जाती है।

विशेषण के प्रधानतः तीन भेद माने जाते हैं—(१) सार्वनामिक विशेषण (२) गुणवाचक विशेषण और (३) संख्यावाचक विशेषण।

(१) सार्वनामिक विशेषण

पुरुषवाचक और निजवाचक सर्वनामों के अतिरिक्त शेष सर्वनाम विशेषण की भाँति प्रयुक्त होते हैं। जब ये शब्द अकेले प्रयुक्त होते हैं, तब सर्वनाम होते हैं और जब इनके साथ संज्ञा प्रयुक्त होती है, तब ये विशेषण होते हैं; जैसे राजेश्वर बात की बात में आँखों में आँसू भर लेता है। वह हृदय से बहुत कोमल है। यहाँ दूसरे वाक्य में प्रयुक्त 'वह' सर्वनाम है क्योंकि यह 'राजेश्वर' संज्ञा के स्थान पर प्रयुक्त हुआ है।

'वह' का योग विशेषण के रूप में यों होगा—वह व्यक्ति आता है। यहाँ 'वह' शब्द 'व्यक्ति' संज्ञा की व्याप्ति को मर्यादित करता है अर्थात् उस व्यक्ति का निश्चय बतलाता है, इसलिए विशेषण है।

पुरुषवाचक और निजवाचक सर्वनाम संज्ञा के साथ प्रयुक्त होकर उसकी व्याप्ति को मर्यादित नहीं करते; जैसे–मैं श्यामदेव यह वादा करता हूँ। यहाँ 'मैं' शब्द विशेषण की भाँति 'श्यामदेव' संज्ञा की व्याप्ति को मर्यादित नहीं करता वरन् 'श्यामदेव' संज्ञा 'मैं' के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए प्रयुक्त हुई है। जो विशेषण

विशेष्य के साथ प्रयुक्त होता है, उस विशेषण के बारे में विधान नहीं किया जा सकता। इसलिए यहाँ 'मैं' और 'श्यामदेव' समानाधिकरण शब्द हैं, विशेषण और विशेष्य नहीं हैं।

व्युत्पत्ति के अनुसार सार्वनामिक विशेषण के दो प्रकार होते हैं—

(क) मौलिक सार्वनामिक विशेषण और (ख) यौगिक सार्वनामिक विशेषण। मूल सर्वनाम, जो अविकृत रूप में किसी संज्ञा के पूर्व प्रयुक्त होते हैं, मौलिक सार्वनामिक विशेषण कहलाते हैं; जैसे—'यह' कलम, 'वह' लड़का आदि।

जो सर्वनाम मूल सर्वनामों में प्रत्यय जोड़ने से बनते हैं और संज्ञा के पूर्व प्रयुक्त होते हैं, यौगिक सार्वनामिक विशेषण कहलाते हैं; जैसे—'कैसी' कलम, 'ऐसा' विद्यार्थी! 'इतना' दूध आदि।

मौलिक सार्वनामिक विशेषणों का अर्थ बहुधा सर्वनामों की भाँति होता है परन्तु कहीं-कहीं उनमें कुछ विशेषता लक्षित होती है—

(क) 'वह' जब 'एक' के साथ प्रयुक्त होता है तब अनिश्चयवाचक होता है; जैसे--वह एक भिखारिन थी।

(ख) 'कौन' और 'कोई' का प्रयोग किसी प्राणी, पदार्थ या धर्म के पूर्व होता है; जैसे—कौन मनुष्य, कौन किताब, कोई किताब आदि। इस अर्थ में ही इनके साथ 'सा' प्रत्यय संयुक्त होता है।

(ग) विस्मय में 'क्या' प्राणी, पदार्थ या धर्म तीनों के पूर्व प्रयुक्त होता है; जैसे--वह भी क्या व्यक्ति है! यह क्या नारी है!

(घ) 'कुछ' संख्या, परिमाण और अनिश्चय का बोधक है। अनिश्चय के अर्थ में यह 'क्या' की भाँति बहुधा भाववाचक संज्ञाओं के साथ प्रयुक्त होता है; जैसे--'कुछ' विचार, 'कुछ' भय आदि। संख्या और परिमाण के अर्थों में प्रयोग आगे बतलाये जायेंगे।

यौगिक सार्वनामिक विशेषणों के साथ जब विशेष्य का प्रयोग नहीं होता, तब ये बहुधा संज्ञाओं की भाँति प्रयुक्त होते हैं; जैसे--'इतने' में यह हुआ। 'जैसा' करोगे 'वैसा' पाओगे।

'ऐसा' कभी-कभी 'यह' की भाँति वाक्य के बदले प्रयुक्त होता है; जैसे—ऐसा कब होगा कि आप के दर्शन मेरे घर में होंगे ?

यौगिक सम्बन्ध वाचक (सार्वनामिक) विशेषणों के साथ बहुधा इनके नित्य-सम्बन्धी विशेषण प्रयुक्त होते हैं; जैसे—मुझे 'उतना' धन दो 'जितना' धन मैं चाहूँ।

(क) कभी-कभी किसी एक विशेषण का विशेष्य लुप्त होता है; जैसे—मुझे 'उतना' धन दो 'जितना' (धन) मैं चाहूँ।

(ख) दोनों विशेषणों की द्विरुक्ति से उत्तरोत्तर घटाव बढ़ाव का बोध होता है; जैसे—'जितना-जितना' नाम बढ़ता है, 'उतना-उतना' मान बढ़ता है।

(ग) कभी-कभी 'जैसा' और 'ऐसा' का प्रयोग 'समान' सम्बन्ध की भाँति होता है; जैसे—नदी की धारा इसे टापू के 'जैसा' रूप देती है।

(घ) 'जैसा का तैसा'—यह विशेषण—वाक्यांश 'पूर्ववत्' के अर्थ में प्रयुक्त होता है, जैसे—वह 'जैसा का तैसा' बना रहा।

यौगिक प्रश्नवाचक सार्वनामिक विशेषण 'कैसा' और 'कितना' इन अर्थों में प्रयुक्त होते हैं—

(क) आश्चर्य में; जैसे—(१) मनुष्य कितना धन देगा और याचक कितना लेंगे ! (२) सफलता की प्राप्ति से कितना सन्तोष होता है !

(ख) 'ही' (भी) के साथ अनिश्चय के अर्थ में; जैसे—नारी कैसी ही (भी) सुचरित्र क्यों न हो, दुनिया के प्रत्येक क्षेत्र में वह भाग नहीं लेने पाती है।

परिमाणवाचक सार्वनामिक विशेषण बहुवचन में संख्या बतलाते हैं; जैसे—यहाँ इतने साहित्यकार और आलोचक एकत्र हैं।

टिप्पणी—'कितने ही' 'कई' के अर्थ में प्रयुक्त होता है; जैसे—कितने ही व्यक्ति सभा से चले गये। कभी-कभी 'कितने' के साथ 'एक' प्रयुक्त होता है; जैसे—कितने एक दिन पीछे वह आया।

यौगिक सार्वनामिक विशेषण कभी-कभी क्रियाविशेषण होते हैं; जैसे—वह जाने से 'इतना' क्यों डरता है ?

'निज' और 'पराया' भी सार्वनामिक विशेषण हैं क्योंकि ये बहुधा विशेषण की भाँति प्रयुक्त होते हैं। 'निज' का अर्थ 'अपना' है और 'पराया' का अर्थ 'दूसरे का' है—यानी अर्थ के अनुसार दोनों एक दूसरे के विपरीतार्थक शब्द हैं; जैसे—निज घर में, पराया माल।

(२) गुणवाचक विशेषण

अन्य विशेषणों की अपेक्षा गुणवाचक विशेषणों की संख्या अधिक है। इनके कुछ प्रधान अर्थ ये हैं—

(क) गुण—पापी, पुण्यी, सच्चा, झूठा, उचित, अनुचित, भला, बुरा आदि।

(ख) दशा—सूखा, गीला, गाढ़ा, पिघला, मोटा, पतला, दुबला आदि।

(ग) रंग—लाल, पीला, गुलाबी, नीला, हरा, बैंगनी, उजला, काला।

(घ) आकार—नुकीला, सुन्दर, पीला, समान, सुडौल, गोल आदि।

(ङ) स्थान—बाहरी, भीतरी, सँकरा, सीधा, नीचा, ऊँचा, चौड़ा, लम्बा।

(च) काल—नया, पुराना, भूत, भविष्य, वर्त्तमान, आगामी, गत, मौसम आदि।

गुणवाचक विशेषणों के साथ हीनता, के अर्थ में 'सा' प्रत्यय होता है; जैसे—बड़ा-सा-पत्थर, ऊँची-सी दीवार आदि।

'नाम' या 'नामक' 'सम्बन्धी' और 'रूपी' संज्ञा के साथ मिलकर विशेषण होते हैं, जैसे—'पत्र-सम्बन्धी' बात, 'तृष्णा-रूपी' नदी।

संज्ञा और सर्वनाम के साथ 'सरीखा' सम्बन्ध-सूचक के रूप में प्रयुक्त होता है; जैसे—युधिष्ठिर सरीखा सत्यवादी।

'समान' (सदृश) और 'तुल्य' (बराबर) कभी-कभी सम्बन्ध-सूचक की भाँति प्रयुक्त होते हैं; जैसे--अरविन्द, अमरेश के समान बुद्धिमान् है।

गुणवाचक विशेषण के बदले बहुधा संज्ञा का सम्बन्धकारक प्रयुक्त होता है; जैसे--जंगली पशु = जंगल का पशु; घरेलू झगड़ा = घर का झगड़ा।

जब गुणवाचक विशेषणों का विशेष्य लुप्त होता है तब ये संज्ञाओं की भाँति प्रयुक्त होते हैं; जैसे--'अच्छों' की संगति करनी चाहिए।

(३) संख्यावाचक विशेषण

संख्यावाचक विशेषण के प्रधानतः तीन भेद हैं—(क) निश्चित संख्यवाचक, (ख) अनिश्चित संख्यावाचक और (ग) परिमाणबोधक।

(क) निश्चित संख्यावाचक विशेषण

निश्चित संख्यावाचक विशेषण वस्तुओं की निश्चित संख्या का बोध कराता है; जैसे—'पच्चीस' पुस्तकें 'दस' आम।

निश्चित संख्यावाचक विशेषण के पाँच भेद हैं--(१) गणनावाचक, (२) क्रमवाचक (३) आवृत्तिवाचक, (४) समुदायवाचक और (५) प्रत्येक बोधक।

गणनावाचक विशेषण के दो भेद हैं—(क) पूर्णाङ्कबोधक; जैसे—एक, दो, चार, सौ, हजार, लाख, करोड़ आदि। (ख) अपूर्णांकबोधक; जैसे—पाव, आधा, पौन, सवा, डेढ़ आदि।

पूर्णाङ्कबोधक विशेषण दो प्रकार से लिखे जाते हैं--(१) शब्दों में और (२) अंकों में। प्रायः बड़ी-बड़ी संख्याएँ अंकों में और छोटी-छोटी संख्याएँ तथा अनिश्चित बड़ी संख्याएँ शब्दों में लिखी जाती हैं; जैसे-छह वर्षों के अन्दर १२ करोड़ रुपये पाँच भवनों के बनाने में खर्च होंगे।

पूर्णांकबोधक विशेषणों के नाम और अंक नीचे लिखे जाते हैं—

एक	१	छब्बीस	२६	इक्यावन	५१	छिहत्तर	७६
दो	२	सत्ताइस	२७	बावन	५२	सतहत्तर	७७
तीन	३	अट्ठाईस	२८	तिरपन	५३	अठहत्तर	७८
चार	४	उन्तीस	२९	चौवन	५४	उन्नासी	७९
पाँच	५	तीस	३०	पचपन	५५	अस्सी	८०
छह	६	इकतीस	३१	छप्पन	५६	इक्यासी	८१
सात	७	बत्तीस	३२	सन्तावन	५७	बयासी	८२
आठ	८	तेंतीस	३३	अट्ठावन	५८	तिरासी	८३
नौ	९	चौंतीस	३४	उनसठ	५९	चौरासी	८४
दस	१०	पैंतीस	३५	साठ	६०	पचासी	८५
ग्यारह	११	छत्तीस	३६	इकसठ	६१	छियासी	८६
बारह	१२	सैंतीस	३७	बासठ	६२	सत्तासी	८७
तेरह	१३	अड़तीस	३८	तिरसठ	६३	अट्ठासी	८८
चौदह	१४	उन्चालीस	३९	चौसठ	६४	नवासी	८९
पन्द्रह	१५	चालीस	४०	पैंसठ	६५	नब्बे	९०
सोलह	१६	इकतालीस	४१	छियासठ	६६	इक्यानवे	९१
सतरह	१७	बयालीस	४२	सड़सठ	६७	बानबे	९२
अठारह	१८	तेंतालीस	४३	अड़सठ	६८	तिरानबे	९३
उन्नीस	१९	चौवालीस	४४	उनहत्तर	६९	चौरानबे	९४
बीस	२०	पैंतालीस	४५	सत्तर	७०	पंचानबे	९५
इक्कीस	२१	छियालीस	४६	इकहत्तर	७१	छियानबे	९६
बाइस	२२	सैंतालीस	४७	बहत्तर	७२	सत्तानबे	९७
तेईस	२३	अड़तालीस	४८	तिहत्तर	७३	अट्ठानबे	९८
चौबीस	२४	उन्चास	४९	चौहत्तर	७४	निन्नानबे	९९
पच्चीस	२५	पच्चास	५०	पचहत्तर	७५	सौ	१००

दहाई की संख्याओं में एक से लेकर आठ तक अंकों का उच्चारण दहाइयों के पूर्व होता है; जैसे—चौ-बीस, पैं-तीस आदि।

दहाई की संख्या का बोध कराने में इकाई और दहाई के अंकों का उच्चारण बदलता है; जैसे—

एक = इक।	दस = रह।
दो = बा।	बीस = ईस।
तीन = ते, तिर, ति।	तीस = ईस।
चार = चौ, चौ।	चालीस = तालीस।
पाँच = पंद, पच, पैं, पंच।	पचास = वन, पन।
छह = सो, छ।	साठ = सठ।
सात = सत, सैं, सड़।	सत्तर = हत्तर।
आठ = अठ, अड़।	नब्बे = नवे।

बीस से लेकर अस्सी तक हरएक दहाई के पूर्व की संख्या बोध कराने के लिए दस दहाई के नाम-पूर्व 'उन' शब्द का प्रयोग होता हैं; जैसे—उन्तीस, उनसठ आदि। यह शब्द संस्कृत के 'ऊन' शब्द का अपभ्रंश है। 'नवासी' और 'निन्नानवे' में क्रमशः 'नव' और 'निन्ना' जोड़े गये हैं।

सौ से ऊपर की संख्या बतलाने के लिए एक से अधिक शब्दों का प्रयोग होता है; जैसे—७७५ = सात सौ पचहत्तर।

निम्नलिखित संख्याओं के लिए अलग-अलग नाम हैं—

१००० = हजार (संस्कृत—सहस्र)।

१०० = हजार = लाख।

१०० = लाख = करोड़।

१०० = करोड़ = अरब।

१०० = अरब = खरब।

(ख) अपूर्णाङ्कबोधक विशेषण

अपूर्णाङ्कबोधक विशेषण पूर्ण संख्या के किसी भाग का बोधक होता है; जैसे--पाव = चौथाई भाग, पौन = तीन भाग; सवा = एक पूर्णाङ्क और चौथाई भाग।

अपूर्णाङ्कबोधक विशेषणों के नाम और अंक हैं—

पाव = १$\frac{१}{४}$ ।

आधा = $\frac{१}{२}$, ।।

पौन = $\frac{३}{४}$, ।।।

ढाई = २$\frac{१}{२}$, २।।

सवा = १$\frac{१}{४}$, १।

डेढ़ = १$\frac{१}{२}$, १।।

पौने दो = १$\frac{३}{४}$, १।।।

साढ़े तीन = ३$\frac{१}{२}$, ३।।

एक से अधिक संख्याओं के साथ पाव और पौन का बोध कराने के लिए पूर्णाङ्कबोधक शब्द के पूर्व क्रमशः 'सवा' (संस्कृत–सपाद) और 'पौने' (संस्कृत–पादोन) शब्दों का प्रयोग होता है; जैसे—सवा तीन = ३$\frac{१}{४}$, पोने चार = ३$\frac{३}{४}$।

तीन और उससे ऊपर की संख्याओं में आधे की अधिकता का बोध कराने के लिए 'साढ़े (संस्कृत—सार्ध) का प्रयोग होता है; जैसे—साढ़े छह = ६$\frac{१}{२}$, साढ़े ग्यारह = ११$\frac{१}{२}$।

सौ, हजार, लाख आदि संख्याओं में भी अपूर्णाङ्कबोधक शब्दों का संयोग होता है, जैसे—सवा दो सौ = २२५; सवा तीन सौ = ३२५।

अपूर्णाङ्कबोधक शब्द माप-तौलवाचक संज्ञाओं के साथ भी प्रयुक्त होते हैं; जैसे--सवा सेर, डेढ़ गज, पौने तीन कोस।

कभी-कभी अपूर्णाङ्कबोधक संज्ञा आनों के हिसाब से भी सूचित की जाती है, जैसे---इस साल आठ आने फसल हुई।

गणनावाचक विशेषणों के प्रयोग में ये विशेषताएँ हैं—(क) पूर्णाङ्कबोधक विशेषण के साथ 'एक' जोड़ने से 'लगभग' का बोध होता है; जैसे--बीस एक आयें, दस एक लड़के।

एक के अनिश्चय के लिए उसके साथ 'आध' जोड़ा जाता है और दोनों में सन्धि भी होती है; जैसे—एक-आध आम, एकाध कटहल आदि।

अनिश्चय के लिए दो पूर्णाङ्कबोधक विशेषण एक साथ प्रयुक्त होते हैं; जैसे—दो-चार दिनों में दस-बीस रुपये। 'डेढ़-दो दिनों में'; 'ढाई-तीन रुपये' आदि प्रयोग भी प्रचलित हैं।

'बीस', 'पचास', 'सैकड़ा', 'हजार', 'लाख' और 'करोड़' आदि के बहुवचन रूप से अनिश्चय का बोध होता है; जैसे—सैकड़ों व्यक्ति, हजारों रुपये।

क्रमवाचक विशेषण किसी वस्तु की क्रमशः गणना का बोध कराता है; जैसे—पहला, दूसरा, तीसरा, चौथा आदि।

(क) क्रमवाचक विशेषण पूर्णाङ्कबोधक विशेषणों से बनते हैं; जैसे—

एक = पहला	तीन = तीसरा
दो = दूसरा	चार = चौथा

(ख) पाँच से लेकर आगे के शब्दों में 'वाँ' जोड़ने से क्रमवाचक विशेषण हैं; जैसे—

पाँच = पाँचवाँ	दस = दसवाँ
छह = छठा (छठवाँ)	ग्यारह = ग्यारहवाँ
आठ = आठवाँ	बारह = बारहवाँ

(ग) सौ से ऊपर की संख्याओं में पिछले शब्द के अन्त में 'वाँ' जोड़ा जाता है; जैसे—एक सौ बारहवाँ।

(घ) संस्कृत क्रमवाचक विशेषणों का भी प्रयोग होता है; जैसे—प्रथम (पहला); द्वितीय (दूसरा), तृतीय (तीसरा), चतुर्थ (चौथा), पंचम (पाँचवाँ), षष्ठ (छठा), दशम (दसवाँ) आदि।

(ङ) तिथियों के नाम कभी-कभी संस्कृत के प्रयुक्त होते हैं, जैसे—द्वितीया (दूज), तृतीया (तीज), चतुर्थी (चौथ), पंचमी (पाँचवाँ), षष्ठी (छठा) आदि।

आवृत्तिवाचक विशेषण से ज्ञात होता है कि इसके विशेष्य के वाच्य पदार्थ कितने गुना हैं; जैसे—दुगुना, चौगुना, दसगुना आदि।

(क विशेषण के बाद 'गुना' शब्द जोड़ने से आवृत्तिवाचक विशेषण बनता है। 'गुना' शब्द जोड़ने से दो से लेकर आठ तक की संख्याओं के शब्दों का आद्य स्वर कुछ विकृत होता है, जैसे—

दो = दुगुना या दूना	तीन = तिगुना
चार = चौगुना	पाँच = पँचगुना
छह = छगुना	सात = सतगुना
आठ = अठगुना	नौ = नौगुना

(ख) परत या प्रकार के अर्थ में 'हरा' जोड़ा जाता है; जैसे—

एक = इकहरा	दो = दुहरा, दोहरा
तीन = तिहरा	चार = चौहरा

ग) कभी-कभी संस्कृत के आवृत्तिवाचक विशेषण प्रयुक्त होते हैं; जैसे— द्विगुण, त्रिगुण, चतुर्गुण आदि।

समुदायवाचक विशेषण किसी पूर्णाङ्कबोधक संख्या के समुदाय का बोध कराता है; जैसे दोनों रुपये, तीनों किताबें आदि।

(क) 'द' से 'दोनों' बना है। 'एक' का समुदायवाचक रूप 'अकेला' है। 'दोनों' बहुधा सर्वनाम की भाँति प्रयुक्त होता है; जैसे—

'दुविधा में दोनों गये, माया मिली न राम।'

'अकेला' का प्रयोग कभी-कभी क्रिया-विशेषण की भाँति होता है; जैसे—मैं अकेला टहलता हूँ।

(ग) कभी-कभी समुदायवाचक विशेषण की द्विरुक्ति भी होती है; जैसे-- दोनों के दोनों आम सड़ गये।

प्रत्येक बोधक विशेषण कई वस्तुओं में से प्रत्येक का बोध कराता है; जैसे - हरएक आम, प्रत्येक दिन, हर पन्द्रहवें दिन पर। 'हर' के स्थान पर कभी-कभी उर्दू 'फी' भी प्रयुक्त होता है; जैसे—कीमत फी जिल्द पाँच आने है।

(क) गणनावाचक विशेषण की द्विरुक्ति से भी यही अर्थ निकलता है; जैसे—एक-एक विद्यार्थी को पाँच-पाँच जलेबियाँ मिलीं।

ख) अपूर्णाङ्कबोधक विशेषणों में प्रधान शब्द की द्विरुक्ति होती है; जैसे— डेढ़-डेढ़ रुपये, साढ़े तीन-तीन रुपये।

(२) अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण

जो संख्यावाचक विशेषण किसी निश्चित संख्या का बोध नहीं कराता, उसे अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण कहते हैं; जैसे —एक, दूसरा (अन्य, और), सब, सर्व, सकल, कुल, समस्त, बहुत, अनेक, कई, नाना, अधिक, ज्यादा, कम, कुछ, आदि, वगैरह, अमुक, फलाना, कितने।

अनिश्चित संज्ञा के अर्थ में इन विशेषणों का प्रयोग बहुवचन में होता है और अन्य विशेषणों की भाँति ये विशेषण भी संज्ञा की भाँति प्रयुक्त होते हैं तथा इनमें से कई परिमाणबोधक विशेषण भी होते हैं।

(१) 'एक' यद्यपि पूर्णाङ्कबोधक विशेषण है तथापि यह बहुधा अनिश्चय का बोधक होता है।

(क) 'एक' का अर्थ कभी-कभी 'कोई' होता है; जैसे—मैंने एक आदमी को देखा था।

(ख) 'एक' का प्रयोग जब संज्ञा की भाँति होता है तब कभी-कभी बहुवचन में प्रयुक्त होता है और दूसरे वाक्य में इसकी द्विरुक्ति भी होती है। जैसे—एक आते हैं एक जाते हैं। एक उठता है एक बैठता है।

(ग) 'एक' के साथ 'सा' प्रत्यय के जोड़ने से 'समान' का अर्थ-बोध होता है; जैसे – दोनों का चेहरा एक-सा है।

(घ) अनिश्चय के अर्थ में 'एक' कुछ सर्वनामों और विशेषणों में जोड़ा जाता है; जैसे —कोई एक, दस एक, कई एक, कितने एक आदि।

(ङ) 'एक-एक' कभी-कभी 'यह-वह' के अर्थ में निश्चयवाचक सर्वनाम की भाँति प्रयुक्त होता है; जैसे —

'पुनि बन्दौ सारद सुर-सरिता।
युगल पुनीत मनोहर चरिता।।
मंजन पान पाप हर एका।
कहत सुनत इक हर अविवेका।।'

'दूसरा' 'दो' का क्रमवाचक विशेषण है। यह प्रकृत प्राणी या पदार्थ से भिन्न के अर्थ में प्रयुक्त होता है। इसके पर्यायवाची शब्द 'अन्य' तथा 'और' हैं; जैसे—यह दूसरी बात है।

(क) कभी-कभी 'दूसरा' 'एक' के साथ विचित्रता (तुलना) के अर्थ में संज्ञा की भाँति प्रयुक्त होता है; जैसे—एक जन्म लेता है और दूसरा मरता है।

(ख) 'एक-एक' की भाँति 'एक—दूसरा' या 'पहला—दूसरा' पहले कही हुई दो वस्तुओं का क्रमानुसार निश्चय का बोध कराता है; जैसे—

आदर के कारण दो हैं—एक धन और दूसरा ज्ञान। पहला क्षणिक आदर हमें देता है और दूसरा आजीवन आदर देता है।

(ग) 'एक दूसरा' यौगिक शब्द है जिसका प्रयोग 'आपस' के अर्थ में होता है; जैसे—अरविन्द और नरेश एक दूसरे से झगड़ते हैं।

(घ) 'और' कभी-कभी 'अधिक संख्या' के अर्थ में भी प्रयुक्त होता है; जैसे—मैं और रुपये माँगूगा।

(ङ) और समुच्चयबोधक भी होता है; जैसे—मोहन 'चन्दामामा' पढ़ता है और अमरेश गीत गाता है।

(च) 'और का और' विशेषण-वाक्यांश है और 'भिन्न' के अर्थ में प्रयुक्त होता है; जैसे—उसने और का और कार्य किया।

(छ) 'कोई', 'कुछ', 'कौन' और 'क्या' के साथ भी 'और' प्रयुक्त होता है; जैसे—वास्तविक अपराधी और कोई है। लिखने के सिवा और क्या किया जाय ?

'सब' अनिश्चित रूप से पूर्ण संख्या का बोधक है और बहुधा बहुवचन संज्ञा के साथ प्रयुक्त होता है; जैसे—सब पुस्तक।

(क) 'सब' संज्ञा-रूप में 'सम्पूर्ण प्राणी या पदार्थ' के अर्थ में प्रयुक्त होता है; जैसे—सब की यह राय है।

(ख) 'सब' के साथ 'कोई' और 'कुछ' प्रयुक्त होते हैं। जो अन्तर अर्थ के अनुसार 'कोई' और 'कुछ' में है वही अन्तर 'सब कोई' और 'सब कुछ' में है; जैसे—सब कोई अपनी डींग हाँकते हैं।

(ग) 'सब का सब' विशेषण-वाक्यांश है और 'समस्तता' के अर्थ में प्रयुक्त होता है; जैसे—सब-के-सब मनुष्य घायल हुए।

(घ) 'सब' के समानार्थक शब्द 'सर्व', 'सकल', 'समस्त' और 'कुल' हैं। ये बहुधा विशेषण की भाँति प्रयुक्त होते हैं।

'थोड़ा' का विपरीतार्थक शब्द 'बहुत' है।

(क) 'बहुत' के साथ 'कुछ' भी प्रयुक्त होता है। 'बहुत-कुछ' का अर्थ 'बहुत से' के समान है।

(ख) 'एक' का विपरीतार्थक शब्द 'अनेक' (अन्+एक) है। यह 'कई' का समानार्थक शब्द है और अनिश्चित संख्या का बोधक है।

(ग) 'कई' के साथ बहुधा 'एक' प्रयुक्त होता है। 'कई एक' का अर्थ 'कई प्रकारों का' है। यह 'नाना' का पर्यायवाची शब्द है।

'अधिक' और 'ज्यादा' तुलना में प्रयुक्त होते हैं।

'कम' 'ज्यादा' का विपरीतार्थक शब्द है और तुलना में प्रयुक्त होता है।

'कुछ' अनिश्चयवाचक सर्वनाम के सिवा संख्या का बोधक है; जैसे—कुछ आम, कुछ तारे आदि।

'आदि' का अर्थ 'और ऐसे ही दूसरे' है। यह संज्ञा और विशेषण दोनों में प्रयुक्त होता है; जैसे—आप दैवी, मानवीय आदि आपत्तियों का नाश करें। आप में विद्यानुरागिता, परोपकारिता, उदारता आदि गुण हैं।

'आदि' के समानार्थक शब्द 'इत्यादि', 'प्रभृति' और 'वगैरह' हैं। 'अमुक का' प्रयोग 'कोई एक' के अर्थ में होता है। इसका समानार्थक शब्द 'फलाना' है।

'कितने' का अर्थ 'कै' है। आजकल 'कै' का प्रयोग शिष्ट नहीं माना जाता।

परिमाणबोधक विशेषण

परिमाणबोधक विशेषण किसी वस्तु की माप या तौल का बोध कराता है; जैसे—यथेष्ट, अधूरा, पूरा, थोड़ा, कम, कुछ, अल्प, किंचित्, जरा, तनिक, बहुतेरा, बहुत, ज्यादा, अधिक, समूचा, सारा, सब, और।

(क) इन शब्दों से अनिश्चित परिमाण का ही बोध होता है; जैसे—सारा दूध, अधिक पानी ।

(ख) ये विशेषण एकवचन संज्ञा के साथ परिमाणबोधक और बहुवचन संज्ञा के साथ अनिश्चित संख्यावाचक होते हैं--

परिमाणबोधक	अनिश्चित संख्यावाचक
बहुत पानी	बहुत पशु
सब जंगल	सब मछलियाँ
सारा प्रदेश	सारे देश
बहुतेरा काम	बहुतेरे काम
पूरा सुख	पूरे टुकड़े

'अल्प', 'किंचित्' और 'जरा' सिर्फ परिमाणवाचक हैं ।

(ग) निश्चित परिमाण का बोध कराने के लिये संख्यावाचक विशेषण के साथ परिमाणबोधक संज्ञा प्रयुक्त होती है; जैसे--तीन गज कपड़ा ।

(घ) परिमाणबोधक—बहुवचन संज्ञा का प्रयोग अनिश्चित परिमाणबोधक विशेषण की भाँति होता है; जैसे—मनों दूध, टनों कागज ।

(ङ) एक का परिमाण सूचित करने के लिए परिमाणबोधक संज्ञा के साथ 'भर' प्रत्यय संयुक्त होता है; जैसे—गज-भर कपड़ा । कोस-भर ।

(च) कई परिमाणबोधक विशेषण सयुक्त रूप में प्रयुक्त होते हैं; जैसे--बहुत-सारा काम, बहुत-कुछ आशा, थोड़ी-बहुत हानि ।

(छ) 'बहुत', 'थोड़ा', 'जरा', 'अधिक' (ज्यादा) के साथ निश्चय के अर्थ में 'सा' प्रत्यय संयुक्त होता है; जैसे--बहुत-सी हानि ।

कई परिमाणवाचक विशेषण क्रिया-विशेषण की भाँति प्रयुक्त होते हैं; जैसे--मैंने आपको बहुत समझाया । जरा ठहरिये ।

अभ्यास

(१) विशेषण किसे कहते हैं ? उसके कितने भेद हैं ?

———

विशेषण का रूपान्तर

हिन्दी में आकारान्त विशेषणों के अतिरिक्त शेष विशेषणों के रूप में कोई विकार नहीं होता। यह स्मरण रखना चाहिए कि विशेष्य के जो लिंग, वचन, कारकादि होते हैं, उसके विशेषण के भी वही लिंग, वचन, कारकादि होते हैं, इसलिए विकृत विशेषणों का रूपान्तर संज्ञाओं की भाँति ही होता है।

आकारान्त विशेषणों में रूपान्तर होने के वही नियम हैं जो सम्बन्ध कारक की 'का' विभक्ति के लिए हैं; अर्थात—

(१) यदि स्त्रीलिंग विशेष्य हो तो आकारान्त विशेषण उसके साथ ईकारान्त हो जाते हैं; जैसे—(अच्छा घोड़ा), अच्छी घोड़ी।

(२) यदि विशेषण पुल्लिग बहुवचन हो या विभक्ति-युक्त विशेष्य एक-वचन हो तो उसके विशेषण का अन्त्य 'आ' 'ए' में बदलता है; जैसे—अच्छे लड़के, अच्छे लड़के ने।

(३) पुल्लिग एकवचन कर्त्ता कारक में विभक्तिरहित विशेष्य के साथ आकारान्त विशेषण का रूप ज्यों-का-त्यों रहता है; जैसे—छोटा घोड़ा दौड़ता है।

संस्कृत के तत्सम विशेषणों का रूप ज्यों-का-त्यों होता है। कभी-कभी शब्द-माधुर्य के लिए स्त्रीलिंग विशेष्य के साथ स्त्रीलिंग तत्सम विशेषण का प्रयोग किया जाता है; जैसे—मनोहारिणी वाटिका।

संस्कृत के कुछ विशेषण स्त्रीलिंग-बोधक और कुछ पुल्लिग-बोधक हैं; जैसे—

पुल्लिग-बोधक	स्त्रीलिंग-बोधक
श्रीमान्	श्रीमती
विद्वान्	विदुषी
महान्	महती
बुद्धिमान्	बुद्धिमती
बलवान्	बलवती
सुन्दर	सुन्दरी
बहुमुख	बहुमुखी
जलमय	जलमयी
सहोदर	सहोदरा

हिन्दी में संस्कृत के पुल्लिग-बोधक कुछ विशेषण हिन्दी के दोनों लिंगों के शब्दों के साथ प्रयुक्त होते हैं; जैसे—सुन्दर पुरुष, सुन्दर नारी आदि।

सार्वनामिक विशेषणों के रूपों में संज्ञा के वचनों के अनुसार ही विकार होते हैं; जैसे—'यह' लड़का, 'ये' लड़के। 'आप', 'क्या' और 'कुछ' के सिवा सार्वनामिक विशेषणों के बाद विभक्त्यन्त या सम्बन्ध सूचकांत संज्ञा प्रयुक्त होने पर उनके दोनों वचनों में विकृत रूप प्रयुक्त होता है; जैसे—'मुझ' दानी को, 'उन' पेड़ों में आदि।

हीनता या महत्ता प्रकट करने के लिए कभी-कभी गुणवाचक विशेषण के साथ 'सा' प्रत्यय प्रयुक्त होता है। इस प्रत्यय के रूप में भी आकारांत विशेषण की भाँति विकार होता है; जैसे—छोटा-सा लड़का, छोटी-सी लड़की, छोटे-से लड़के।

विशेषण के सिवा संज्ञा या सर्वनाम के साथ भी 'सा' प्रत्यय निम्नलिखित अवस्थाओं में प्रयुक्त होता है; जैसे—

(क) समता का भाव प्रकट करने के लिए किसी संज्ञा या सर्वनाम को विशेषण का रूप देने की अवस्था में; जैसे—मोती-से हिमकण, चाँद-सा मुख।

(ख) संबन्ध कारक के साथ उसकी और उसके संबन्धी की भी समता प्रकट करने के लिए उसे विशेषण का रूप देने की अवस्था में; जैसे—हाथी का-सा मुँह और कोयल की-सी बोली। यहाँ हाथी का-सा मुँह का अर्थ है हाथी के मुख-सा मुख और कोयल की-सी बोली का अर्थ है कोयल की बोली-सी बोली।

तुलना

दो या दो से अधिक वस्तुओं के गुणों का जब मिलन होता है तब वह मिलान तुलना कहलाता है। तुलना के विचार से विशेषण की तीन अवस्थाएँ होती हैं—(क) मूलावस्था, (ख) उत्तरावस्था और (ग) उत्तमावस्था।

मूलावस्था—विशेषण का जो रूप किसी वस्तु की तुलना का बोध नहीं कराता, उसे मूलावस्था कहते हैं; जैसे—

(क) 'उजली' बकरी चरती है।

(ख) 'सुन्दर' बालक खेलता है।

(ग) 'कोमल' कलिका खिलती है।

उत्तरावस्था—विशेषण के जिस रूप से दो या दो से अधिक वस्तुओं में एक के गुणों के अधिकता या न्यूनता का बोध होता है, उसे उत्तरावस्था कहते हैं; जैसे—

(क) राम की बकरी श्याम की बकरी की अपेक्षा 'अधिक उजली' है।

(ख) राम श्याम की अपेक्षा 'सुन्दरतर' है।

या—राम श्याम की अपेक्षा 'अधिक सुन्दर' है।

(ग) गुलाब का फूल जूही के फूल की अपेक्षा 'कोमलतर' है।

या—गुलाब का फूल जूही की अपेक्षा 'अधिक कोमल' है।

उत्तमावस्था—विशेषण के जिस रूप से दो से अधिक वस्तुओं में किसी एक के गुण की अधिकता या न्यूनता का बोध होता है, उसे उत्तमावस्था कहते हैं; जैसे—

(क) राम की बकरी सब की बकरियों से 'अधिक उजली' है।

(ख) राम 'सन्दरतम' है।

या—राम सबसे 'अधिक सुन्दर' है।

(ग) गुलाब का फूल 'कोमलतम' है।

या—गुलाब का फूल सबसे 'अधिक कोमल' है।

हिन्दी में विशेषणों की तुलना से कोई नियमबद्ध विकार उत्पन्न नहीं होता; परन्तु संस्कृत के कुछ तत्सम विशेषणों की मूलावस्था में 'तर' और 'तम' जोड़कर क्रमशः उत्तरावस्था के रूप दिये जाते हैं; जैसे—

मूलावस्था	उत्तरावस्था	उत्तमावस्था
प्रिय	प्रियतर	प्रियतम
निम्न	निम्नतर	निम्नतम
उच्च	उच्चतर	उच्चतम
मधुर	मधुरतर	मधुरतम
कोमल	कोमलतर	कोमलतम
सुन्दर	सुन्दरतर	सुन्दरतम
नील	नीलतर	नीलतम

(क) दो वस्तुओं में किसी के भी गुण का न्यूनाधिक भाव सूचित करने के लिए जिस वस्तु के साथ तुलना की जाती है, उसका नाम (उपमान) अपादान कारक में प्रयुक्त होता है और जिस वस्तु की तुलना की जाती है उसका नाम (उपमेय) गुणवाचक विशेषण के साथ प्रयुक्त होता है; जैसे—

दान ग्रहण करने वाले से दान करने वाला बड़ा होता है।

(ख) अपादान कारक के स्थान पर बहुधा संज्ञा के साथ 'अपेक्षा' या 'बजाय' या 'बनिस्बत' का प्रयोग होता है और विशेषण अथवा संज्ञा के सम्बन्ध कारक के साथ अर्थ के अनुसार 'अधिक' या 'कम' का प्रयोग होता है; जैसे—राम श्याम की अपेक्षा अधिक मृदुभाषी है।

या—राम श्याम के बजाय अधिक मृदुभाषी है।

(ग) 'अधिकता' या 'न्यूनता' के अर्थ में कभी-कभी 'बढ़कर' या 'घटकर' पूर्वकालिक कृदन्त या 'कहीं' क्रियाविशेषण का प्रयोग होता है; जैसे—

(१) मुझसे बढ़कर कौन धर्मात्मा है ?

(२) मैं उससे कहीं सन्तोषी हूँ।

(घ) सर्वोत्तमता का बोध कराने के लिए विशेषण के पूर्व 'सबसे' प्रयुक्त होता है और उपमान अधिकरण कारक में प्रयुक्त होता है; जैसे—'है विश्व में सबसे बली सर्वान्तकारी काल ही।'

(ङ) सर्वोत्तमता सूचित करने के लिए कभी-कभी विशेषण की द्विरुक्ति होती है और द्विरुक्ति विशेषणों में पहला अपादान कारक में प्रयुक्त होता है; जैसे—इस नगर में विद्वान् से विद्वान् व्यक्ति हैं।

(च) कभी-कभी संस्कृत के—उत्तमावस्था के—तत्सम 'इष्ठ' (इष्ठन्) और ईयस् प्रत्ययांत शब्दों का भी प्रयोग होता है; जैसे—ज्येष्ठ, पापिष्ठ, स्वादिष्ट, श्रेय (श्रेयस्), प्रेय (प्रेयस्)।

अभ्यास

(१) निम्नलिखित वाक्यों को शुद्ध करें—

काला घोड़ा ने घासें खाये थे। उजला गाय ने घासें खायी थी। श्रीमान् सीता देवी ने चार पुस्तक पढ़े थे। विद्वान् विजया लक्ष्मी पंडित ने भाषण की

थी। उसने महान् सफलता पाये थे। बुद्धिमान् युवती ने इस काम को किये थे। श्रीमान् सुमित्रा कुमारी ने यह कविता लिखा था।

(२) पाँच विशेषणों का प्रयोग उत्तरावस्था और उत्तमावस्था में कीजिये।

(३) लिंग और बचन के कारण किन स्थितियों में विशेषण में रूपान्तर होता है ?

(४) विशेष्य किसे कहते हैं ?

(५) सर्वनाम किस अवस्था में विशेषण-से प्रयुक्त होते हैं ?

(६) व्यक्तिवाचक संज्ञाओं के विशेषण बनाने के नियम लिखें।

(७) तुलना किसे कहते हैं ?

(८) संज्ञा और विशेष्य में क्या भेद हैं ?

(९) समानाधिकरण और विशेषण में क्या भेद है ?

—:-:०:-:—

विशेषण की रचना

(क) संज्ञा से

बल—बलवान्, बलशाली, बली, प्रबल। प्रसिद्धि—प्रसिद्ध। प्रख्याति—प्रख्यात। प्रबोध—प्रबुद्ध। पराजय—पराजित। अपहरण—अपहृत। संन्यास—संन्यासी, संन्यस्त। अवशेष—अवशिष्ट। धन—धनी, निर्धन, धनवान, धनिक। गुण—गुणी, निर्गुण, गुणवान्। मोह—मोही, मोहित, मुग्ध। आकार—आकृत, निराकार। ममता—ममतावान्, निर्मम। शंका—निःशंक, शंकित, सशंक। भय—निर्भय, भीत। अपराध—निरपराध, अपराधी। दोष—दुष्ट, दोषी। रोग—रुग्न, रोगी, नीरोग। अन्न—निरन्न। वस्त्र—निर्वस्त्र। निश्चय—निश्चित, निश्चयी। जन—सुजन, दुर्जन। मति—मतिमान्, दुर्मति। विशेष—विशिष्ट। विश्लेषण—विश्लिष्ट। वियोग—वियोगी, वियुक्त। फल—फली, फलवान्, सफल, विफल, निष्फल, अफल। लाभ—लब्ध। योग—युक्त। परिष्कार—परिष्कृत। परिमाण—परिमित। रूप—रूपवान्, कुरूप। आयु—चिरायु, दीर्घायु, आयुष्मान्। रस—सरस, विरस, रसिक। जीव—सजीव। डर—निडर। वेद—वैदिक। मास—मासिक। दिन—दैनिक। क्षण—क्षणिक।

प्रारम्भ - प्रारम्भिक। माता--मातृक। पिता—पैतृक। समुद्र—सामुद्रिक। अध्यात्म—आध्यात्मिक। धर्म—धार्मिक, धर्मवान्। न्याय—नैयायिक, न्यायी। साहित्य--साहित्यिक। भूगोल—भौगोलिक। सेना—सैनिक, सैन्य। तर्क—तार्किक, तर्क्य। समाज--सामाजिक। लोक--लौकिक। पल्लव—पल्लवित। पुष्प--पुष्पित। फल--फलित। हर्ष—हर्षित। दुःख--दुःखी, दुखित। प्रतिबिम्ब--प्रतिबिम्बित। ज्ञान--ज्ञानी, ज्ञेय, ज्ञात। मान--मानी, मान्य, माननीय। ध्यान—ध्यानी, ध्यातव्य। शास्त्र--शास्त्री, शास्त्रीय। अर्थ--अर्थवान्, आर्थिक, अर्थी। पक्ष—पाक्षिक। माया--मायिक, मायावी, मायी। यश--यशस्वी। तप--तपस्वी। मन--मनस्वी, मानसिक। तेज--तेजस्वी। क्रोध—क्रुद्ध। शोध—शुद्ध। सुख—सुखी। अन्त--अन्त्य, अंतिम। दन्त—दन्त्य। फेन—फेनिल। तन्द्रा—तन्द्रिल। स्वप्न-स्वप्निल। जटा--जटिल। पंक—पंकिल। धूम—धूमिल। वल—वलिष्ठ। स्वाद—स्वादिष्ट। रेशम—रेशमी। ऊन--ऊनी। सूत—सूती। दर्गहपुर—दर्गहपुरी। कुल—कुलीन। ग्राम--ग्रामीण, ग्राम्य। धुरी—धुरीण। विक्रम विक्रमीय। राज्य—राजकीय। जल—जलीय। वायु—वायवीय, वायव्य। राष्ट्र—राष्ट्रीय। स्वर्ग—स्वर्गीय, स्वर्गिक। लाज--लजीला, लज्जालु। रंग--रंगीन, रंगीला। रोब—रोबीला। साज—सजीला। घर—घरू, घरेलू। बाजार—बाजारू। अग्नि—आग्नेय। कर्म—कर्मशील, कर्मठ। जरा—जरठ। प्राण—प्राणमय। तालु—तालव्य। श्रवण—श्रव्य। धान—धान्य। मधु—मधुर। मुख—मुखर, मौखिक। मांस—मांसला। वत्स—वत्सल। भाग्य—भाग्यवान्। भीरुता—भीरु। सुन्दरता—सुन्दर। चक्षु--चाक्षुष। सेवा—सेव्य, सेवी, सेवक। उपासना--उपास्य, उपासक। शील--शीलवान्। त्याग--त्यागी, त्यक्त। संयम—संयमी, संयमशील। पौरुष--पुरुष। आचार--आचारवान्। पूजा--पूज्य, पूज्यनीय, पूजक। आशा--निराश, आशावान्, हताश। आश्चर्य--आश्चर्यान्वित। पाठ—पाठ्य। काम—कामुक, काम्य।

(क) क्रिया से

खाना—खाया, खाता। खोना—खोया, खोता। रोना—रोता, रोया। सोना--सोया, सोता। पीना—पीया, पीता।

क्रिया

जिस विकारी शब्द के प्रयोग से किसी वस्तु के बारे में विधान होता है, उसे क्रिया कहते हैं, या जिस विकारी शब्द के प्रयोग से काम करने या होने का भाव प्रकट होता है उसे क्रिया कहते हैं; जैसे—

(क) फूल खिला।

(ख) कोयल बोली।

(ग) अरविन्द खाता है।

पहले वाक्य में 'खिला' शब्द के द्वारा फूल के बारे में, दूसरे वाक्य में 'बोली' शब्द के द्वारा कोयल के बारे में और तीसरे वाक्य में 'खाता है' शब्द के द्वारा अरविन्द के बारे में विधान किया गया है। यहाँ 'खिला', 'बोली' और 'खाता है' शब्दों के द्वारा काम होने या काम करने का भाव प्रदर्शित होता है; इसलिए 'खिला', 'बोली' और 'खाता है' शब्द क्रियाएँ हैं।

जो मूल शब्द विकृत होकर क्रिया बनता है, वह धातु कहलाता है; जैसे—'खिला', 'बोली' और 'खाता है' क्रियाओं में 'खिल', 'बोल' और 'खा' धातु हैं और 'आ', 'ई' और 'ता है' प्रत्यय हैं।

धातु के अन्त में 'ना' के संयोग से जो शब्द बनता है वह क्रिया का साधारण रूप कहलाता है; जैसे—खिल+ना=खिलना, बोल+ना=बोलना और खा+ना=खाना।

क्रिया का साधारण रूप क्रिया नहीं है, क्योंकि इसके प्रयोग से किसी वस्तु के बारे में विधान नहीं किया जा सकता या इसके प्रयोग से काम करने या होने का भाव प्रदर्शित नहीं हो सकता; ऐसी क्रिया का साधारण रूप बहुधा संज्ञा की भाँति प्रयुक्त होता है जिसे क्रियार्थक संज्ञा भी कहते हैं; जैसे—'बोलना' एक सामाजिक गुण है। पशु 'बोलना' नहीं जानता।

क्रियार्थक संज्ञा भाववाचक संज्ञा कहलाती है। कुछ धातुओं का भी योग संज्ञाओं की भाँति होता है; जैसे—

(क) जीवन 'खेल' देखता है।

(ख) सुरेश 'नाच' देखता है।

(ग) कमल कुमारी घोड़ों की 'दौड़' देखती है ।

(घ) मामले की 'जाँच' नहीं होगी ।

किसी वस्तु के बारे में विधान करनेवाले शब्द इसलिए क्रिया कहलाते हैं चूंकि अधिकतर धातु जिनसे ये शब्द बनते हैं, क्रिया कहलाते हैं या अधिकतर धातु जिनसे ये शब्द बनते हैं क्रियावाचक हैं; जैसे--काट, मार, फेंक, उठा, चल, फिर, आ, जा, उठ, बैठ, लिख, पढ़ ।

कुछ धातु स्थिति-दर्शक हैं; जैसे--हो, मर, गिर, सो आदि ।

कुछ धातु विकार दर्शक हैं; जैसे-- निकल, दिख, बन आदि । कोष में धातुओं के स्थान पर क्रियाओं को लिखने का प्रचलन है ।

क्रिया के भेद

क्रिया के प्रधानतः दो भेद हैं--सकर्मक और अकर्मक !

जिस क्रिया से सूचित होने वाले व्यापार का फल कर्त्ता पर न पड़कर किसी अन्य वस्तु पर पड़ता है, उसे सकर्मक क्रिया कहते हैं; जैसे--

(क) विनय पुस्तक पढ़ता है ।

(ख) अमरेश आम खाता है ।

पहले वाक्य में 'पढ़ता है' क्रिया के व्यापार का फल 'विनय' कर्त्ता पर नहीं पड़ता, वरन् 'पुस्तक' पर पड़ता है, इसलिए 'पढ़ता है' क्रिया सकर्मक है और दूसरे वाक्य में भी 'खाता है' क्रिया सकर्मक है क्योंकि इसके व्यापार का फल 'अमरेश' कर्त्ता पर नहीं, वरन् 'आम' कर्म पर पड़ता है ।

टिप्पणी—(क) कर्त्ता का अर्थ है 'करनेवाला' । क्रिया के व्यापार को जो करता है वह कर्त्ता कहलाता है, चाहे वह प्राणी हो या पदार्थ । जो शब्द ऐसा कहनेवाले का बोधक होता है वह भी व्याकरण में बहुधा कर्त्ता कहलाता है, पर वस्तुतः शब्द कर्त्ता नहीं हो सकता । शब्द को कर्त्ता कारक या कर्तृपद कहा जाना चाहिए । जिन क्रियाओं से स्थिति या विकार का बोध होता है, उनका कर्त्ता वह पदार्थ या प्राणी होता है, जिसकी स्थिति या विकार के बारे में विधान होता है; जैसे--'अरविन्द' चतुर है । 'अमरेश' बुद्धिमान् हो गया ।

(ख) क्रिया से सूचित होनेवाले व्यापार का फल कर्त्ता पर न पड़कर जिस वस्तु पर पड़ता है उस वस्तु को कर्म कहते हैं; जैसे—(क) अमरेश 'लीची'

'चबाता' है। (ख) कमल कुमारी 'आम' खाती है। पहले वाक्य में 'चबाता है' क्रिया के व्यापार का फल 'अमरेश' कर्त्ता पर न पड़कर 'लीची' पर पड़ता है, इसलिए 'लीची' कर्म है और दूसरे वाक्य में 'खाती है' क्रिया के व्यापार का फल 'कमल कुमारी' कर्त्ता पर न पड़कर 'आम' पर पड़ता है, इसलिए 'आम' कर्म है।

जिस क्रिया से सूचित होने वाला व्यापार और उसका फल कर्त्ता पर ही पड़ता है उसे अकर्मक क्रिया कहते हैं; जैसे—

(क) अमरेश सोता है। (ख) कमल कुमारी रोती है। (ग) अरविन्द उठता है। इन वाक्यों में 'सोता है', 'रोती है' और 'उठता है' क्रियाओं का व्यापार और उनका फल क्रमश. 'अमरेश', 'कमल कुमारी' और 'अरविन्द' कर्त्ताओं पर ही पड़ता है, इसलिए 'सोता है', 'रोती है' और 'उठता है' क्रियाएँ अकर्मक हैं। 'अकर्मक' शब्द का अर्थ है 'कर्मरहित' और यही कारण है, जिस क्रिया में कर्म अलग हो उसे अकर्मक कहते हैं।

कुछ क्रियाएँ प्रयोग के अनुसार अकर्मक और सकर्मक दोनों होती हैं; जैसे—'खुजलाना', 'भरना', 'लजाना', 'घबराना', 'ललचाना', ऐंठना', 'बदलना', 'घिसना' आदि।

उदाहरण

अकर्मक	सकर्मक
(क) मेरा हाथ 'खुजलाता है'।	मैं हाथ 'खुजलाता हूँ'।
(ख) बूँद-बूँद से तालाब 'भरता है'।	मैं तालाब को जल से 'भरता हूँ'।
(ग) मैं इसे 'लजाता हूँ'।	वह मुझे 'लजाता है'।
(घ) धैर्यवान् पुरुष विपत्ति में नहीं 'घबराता'।	विपत्ति कायर को 'घबराती है'।
(ङ) बच्चों का जी मिठाई के लिए 'ललचता है'।	अमरेश अरविन्द को 'ललचाता है'।
(च) सर्प 'ऐंठता है'।	मैं रस्सी 'ऐंठता हूँ'।
(छ) जमाना 'बदलता है'।	युग-पुरुष जमाने को 'बदलता है'।
(ज) रस्सी 'घिसती है'।	मैं रस्सी 'घिसता हूँ'।

जब सकर्मक क्रिया के व्यापार का फल किसी विशेष वस्तु पर न पड़कर सभी वस्तुओं पर पड़ता है, तब उसके कर्म का प्रकट करने की आवश्यकता नहीं होती; जैसे --

(क) ईश्वर की कृपा से बहरा 'सुनता है', गूँगा 'बोलता है', और अन्धा 'देखता है'।

(ख) अरविंद 'गाता है' अमरेश 'खाता है' और कमलकुमार 'पढ़ती है'।

कुछ अकर्मक क्रियाएँ ऐसी हैं, जिनका अर्थ कभी-कभी केवल कर्त्ता से ही पूर्णतः व्यक्त नहीं होता। कर्त्ता के बारे में पूर्ण विधान होने के लिए इन क्रियाओं के साथ कोई संज्ञा या विशेषण प्रयुक्त होता है। ऐसी क्रियाएँ अपूर्ण अकर्मक कहलाती हैं और जो संज्ञा या विशेषण इनके अर्थ को पूर्ण व्यक्त करने के लिए प्रयुक्त होता है वह पूरक कहलाता है; जैसे--

(क) विश्वनाथ चतुर है। (ख) हिमांशु प्रसन्न रहता है। (ग) साधु भी कभी-कभी चोर निकलता है। (घ) वह मेरा मित्र ठहरा। (च) वह स्वस्थ दिखता है। (छ) वह मंत्री बना।

उपर्युक्त वाक्यों में 'चतुर', 'प्रसन्न', 'चोर', 'मित्र', 'स्वस्थ' और 'मंत्री' पूरक हैं। 'होना', 'रहना', 'निकलना', 'ठहरना', 'दिखाना' और बनना' अपूर्ण अकर्मक क्रियाएँ हैं।

(क) अपूर्ण अकर्मक क्रियाओं में साधारण रूप में पूर्ण अर्थ होता है; जैसे—

(१) आस्तिक व्यक्तियों का विश्वास है कि ईश्वर है।

(२) साढ़े छह बजे सवेरा होता है।

(३) साढ़े छह बजे सूर्य निकलता है।

(४) आसमान में तारे दिखते हैं।

(ख) सकर्मक क्रियाएँ इस अर्थ में अपूर्ण क्रियाएँ हैं कि कर्म के सिवा उनका पूर्ण अर्थ व्यक्त नहीं होता। अपूर्ण अकर्मक और सकर्मक क्रियाओं में भेद यह है कि अपूर्ण अकर्मक क्रिया की पूर्त्ति उसके कर्त्ता की ही स्थिति या विकार को सूचित करती है ओर सकर्मक क्रिया की पूर्त्ति (कर्म) कर्त्ता से भिन्न होती है, जैसे—

(क) कृष्णवल्लभ सहाय मुख्य मन्त्री बने। (अपूर्ण अकर्मक)

(ख) मुख्य मन्त्री ने सचिवों को बुलाया। (अपूर्ण सकर्मक)

देना, बतलाना, कहना, पढ़ाना, सिखाना, सुनाना, और इन्हीं अर्थों की अन्य कई क्रियाएँ द्विकर्मक कहलाती हैं, क्योंकि इनका अर्थ एक कर्म से पूर्ण नहीं होता वरन् पूर्ण अर्थ प्रकट करने के लिए ये दो कर्म लेती हैं; जैसे—

(क) शेखर ने शरत को आम दिया।

(ख) इन्दिरा ने मुझे गीत सुनाया।

द्विकर्मक क्रिया में एक कर्म पदार्थ-बोधक है, जिसे मुख्य या प्रधान कर्म कहते हैं और दूसरा कर्म प्राणिवाचक होता है जिसे गौण या अप्रधान कर्म कहते हैं; उपर्युक्त वाक्यों में 'शरत को' और 'मुझे' गौणकर्म हैं और 'आम' तथा 'गीत' प्रधान कर्म हैं।

कभी-कभी गौण कर्म लुप्त होता है; जैसे—राजा दान देता है।

कभी-कभी करना, बनना, समझना, पाना, मनना आदि क्रियाओं का अर्थ कर्म के रहते हुए भी पूर्ण नहीं होता और इनके साथ पूरक के रूप में कोई संज्ञा या विशेषण प्रयुक्त होता है; जैसे—

(क) देश के प्रतिनिधियों ने पंडित जवाहरलाल नेहरू को प्रधान मंत्री बनाया।

(ख) मैंने मूर्ख को विद्वान् समझा था।

इन वाक्यों की क्रियाओं को अपूर्ण सकर्मक कहते हैं और इनके पूरक को कर्म पूरक कहते हैं। यहाँ 'प्रधान मन्त्री' और 'विद्वान्' कर्म पूरक हैं। अकर्मक अपूर्ण क्रिया के पूरक को उद्देश्य पूरक कहते हैं। जैसे—पं० जवाहरलाल नेहरू राजनीतिज्ञ हैं। इस वाक्य में 'राजनीतिज्ञ' उद्देश्य पूरक है।

कुछ अकर्मक क्रियाओं के साथ उन्हीं क्रियाओं से बनी भाववाचक संज्ञाएँ कर्म की भाँति प्रयुक्त होती हैं; जैसे— (क) घोड़ा 'दौड़' दौड़ता है। (ख) लड़का 'खेल' खेलता है। (ग) सिपाही 'लड़ाई' लड़ता है। (घ) पक्षी 'बोली' बोलता है।

ऐसे कर्म जातीय कर्म कहलाते हैं और ऐसी क्रियाएँ सकर्मक हो जाती हैं तथा जातीय क्रियाएँ कहलाती हैं।

यौगिक क्रियाएँ

व्युत्पत्ति के अनुसार क्रियाओं के प्रधानत: दो भेद होते हैं—

(१) मौलिक क्रियाएँ और (२) यौगिक क्रियाएँ।

जो क्रियाएँ किसी दूसरे शब्द से न बनती हैं, मौलिक कहलाती हैं; जैसे—उठना, बैठना, चलना, लेना, देना आदि।

जो क्रियाएँ किसी दूसरे शब्द से बनती हैं, यौगिक कहलाती हैं; जैसे—'उठना' से 'उठाना', 'गिरना' से 'गिराना', 'ठग' से 'ठगना', 'रंग' से 'रंगना', 'चिकना' से 'चिकनाना' आदि।

यौगिक क्रियाएँ तीन प्रकार से बनती हैं—

(१) धातुओं में प्रत्यय जोड़ने से सकर्मक और प्रेरणार्थक क्रियाएँ बनती हैं; जैसे—उठ + आना = उठाना; उठ + वाना = उठवाना आदि।

(२) अन्य शब्द-भेदों में प्रत्यय जोड़ने से नाम धातु बनते हैं; जैसे–खटखट + आना = खटखटाना।

(३) एक धातु में एक या दो धातु या संज्ञा जोड़ने से संयुक्त क्रियाएँ बनती हैं; जैसे—लिख + डाल = लिख डालना।

प्रेरणार्थक क्रियाएँ

मूल क्रिया के जिस विकृत रूप से क्रिया के व्यापार में कर्त्ता किसी से प्रेरित समझा जाता है, उसे प्रेरणार्थक क्रिया कहते हैं; जैसे –

(क) सोहन अरविन्द से पत्र पढ़ाता है।

(ख) कमल कुमारी मोहन से आम छिलाती है।

पहले वाक्य में मूल क्रिया 'पढ़ाना' का विकृत रूप 'पढ़ाता' है, जिससे ज्ञात होता है कि अरविन्द पढ़ने का व्यापार सोहन की प्रेरणा से करता है; इसलिए 'पढ़ाता' प्रेरणार्थक क्रिया है, सोहन प्रेरक कर्त्ता है और अरविन्द प्रेरित कर्त्ता है और दूसरे वाक्य में मूल क्रिया 'छिलती' का विकृत रूप 'छिलाती' है, जिससे जाना जाता है कि मोहन छिलने का व्यापार कमल कुमारी की प्रेरणा से करता है, इसलिए 'छिलाती' प्रेरणार्थक क्रिया है, कमल कुमारी प्रेरक कर्त्ता है और मोहन प्रेरित कर्त्ता है।

आना, जाना, सकना, होना, रुचना, पाना आदि क्रियाओं से अन्य किसी प्रकार की क्रियाएँ नहीं बनतीं। शेष सब क्रियाओं से दो-दो प्रकार की प्रेरणार्थक क्रियाएँ बनती हैं, जिनका पहला रूप बहुधा सकर्मक क्रियाओं के अर्थ में ही प्रयुक्त होता है और दूसरे रूप से वस्तुतः प्रेरणा समझी जाती है; जैसे—

(१) अरविन्द सोता है।
(२) अमरेश कमल कुमारी को सुलाता है।
(३) अरविन्द अमरेश से कमल कुमारी को सुलवाता है।

सभी प्रेरणार्थक क्रियाएँ सकर्मक होती हैं। पीना, खाना, देखना, समझना, देना, पढ़ना, सुनना आदि क्रियाओं के दोनों प्रेरणार्थक रूप द्विकर्मक होते हैं; जैसे—

१—(क) अमरेश कमल कुमारी से अरविन्द को दूध पिलवाता है।
(ख) अमरेश कमल कुमारी को पानी पिलाता है।
२—(क) अमरेश कमल कुमारी को पुस्तक पढ़ाता है।
(ख) अमरेश अरविन्द से कमल कुमारी को पढ़वाता है।

प्रेरणार्थक क्रियाओं को बनाने के निम्नलिखित नियम हैं—

(१) मूल धातुओं के अन्त में 'आना' और 'वाना' जोड़ने से क्रमशः पहले प्रेरणार्थक और दूसरे प्रेरणार्थक रूप बनते हैं; जैसे—

मूल क्रि०	प्र० प्रे० रू०	द्वि० प्रे० रू०
पढ़-ना	पढ़ाना	पढ़वाना
उठ-ना	उठाना	उठवाना
फैल-ना	फैलाना	फैलवाना
चल-ना	चलाना	चलवाना
गिर-ना	गिराना	गिरवाना
औट-ना	औटाना	औटवाना
लिख-ना	लिखाना	लिखवाना
उड़-ना	उड़ाना	उड़वाना
चढ़-ना	चढ़ाना	चढ़वाना
दब-ना	दबाना	दबवाना
सुन-ना	सुनाना	सुनवाना
लग-ना	लगाना	लगवाना

(क) दो अक्षरों के धातुओं में कहीं-कहीं 'ऐ' या 'औ' के सिवा आदि का अन्य दीर्घस्वर ह्रस्व में बदलता है; जैसे—

मूल क्रि०	प्र० प्रे० रू०	द्वि प्रे० रू०
लेटना	लिटाना	लिटवाना
ओढ़ना	उढ़ाना	उढ़वाना
बोलना	बुलाना	बुलवाना
जागना	जगाना	जगवाना
घूमना	घुमाना	घुमवाना
जीतना	जिताना	जितवाना
भींगना	भिगाना	भिगवाना
डूबना	डुबाना	डुबवाना

टिप्पणी—'डूबना' का रूप 'डुबोना' और 'भींगना' का रूप 'भिगोना' भी प्रचलित है।

प्रेरणार्थक रूप में 'बोलना' का अर्थ बदल जाता है।

(ख) तीन अक्षरों में धातुओं के प्रथम प्रेरणार्थक रूप के दूसरे अक्षर का 'अ' अनुच्चरित होता है; जैसे—

मूल क्रि०	प्र० प्रे० रू०	द्वि० प्रे० रू०
समझना	समझाना	समझवाना
चमकना	चमकाना	चमकवाना
पिघलना	पिघलाना	पिघलवाना
लटकना	लटकाना	लटकवाना
भटकना	भटकाना	भटकवाना

(२) एकाक्षरी धातुओं के अन्त में 'लाना' और 'लवाना' जोड़े जाते हैं और दीर्घस्वर को ह्रस्व किया जाता है; जैसे—

पीना	पिलाना	पिलवाना
जीना	जिलाना	जिलवाना
सीना	सिलाना	सिलवाना
धोना	धुलाना	धुलवाना
देना	दिलाना	दिलवाना
छूना	छुलाना	छुलवाना
खाना	खिलाना	खिलवाना

(क) कुछ एकाक्षरी सकर्मक धातुओं से केवल दूसरे प्रेरणार्थक रूप इस तरह बनते हैं—

गाना—गवाना । लेना—लिवाना ।

ये रूप १ (क) नियम के अनुसार बनते हैं ।

(ख) 'खाना' में आद्य स्वर 'आ' 'इ' में बदलता है ।

(३) कुछ धातुओं के प्रथम रूप 'लाना' या 'आना' जोड़ने से बनते हैं और दूसरे प्रेरणार्थक रूप 'वाना' जोड़ने से; जैसे—

बैठना	बिठाना या बिठलाना	बिठवाना
सूखना	सुखाना या सुखलाना	सुखवाना
सीखना	सिखाना या सिखलाना	सिखवाना
दिखना	दिखाना या दिखलाना	दिखवाना
कहना	कहना या कहलाना	कहवाना

(क) 'कहना' का प्रथम प्रेरणार्थक रूप अकर्मक भी होता है; जैसे—

(१) श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन राजर्षि कहलाते थे ।

(२) विभक्ति-सहित शब्द पद कहलाता है ।

(क) 'कहवाना' का एक रूप 'कहलवाना' भी होता है ।

(ग) 'बैठना' के कई प्रेरणार्थक रूप होते हैं; जैसे—बैठना, बैठालना, बिठालना और बैठवाना ।

कुछ धातुओं से बने दोनों प्रेरणार्थक रूप समानार्थक होते हैं; जैसे—

सिलना—सिलाना या सिलवाना ।

कटना—कटाना या कटवाना ।

खुलना—खुलाना या खुलवाना ।

देना—दिलाना या दिलवाना ।

सीना—सिलाना या सिलवाना ।

गड़ना—गाड़ना या गड़वाना ।

रखना—रखाना या रखवाना ।

कुछ क्रियाएँ ऐसी हैं जो स्वरूप में प्रेरणार्थक हैं; परन्तु वे मूलतः अकर्मक या सकर्मक हैं; जैसे--इठलाना, मचलाना, घबराना, कुम्हलाना, ललचाना, बड़बड़ाना आदि।

कुछ प्रेरणार्थक क्रियाओं का मूल रूप प्रचलित नहीं है; जैसे--गँवाना, फुसलाना, जतलाना या जताना, बतलाना या बताना आदि।

अकर्मक क्रियाओं को सकर्मक बनाने के निम्नलिखित नियम हैं:--

धातुओं के आद्य स्वर को दीर्घ में बदलने से; जैसे--

कटना	काटना	पटना	पाटना
गड़ना	गाड़ना	दबना	दाबना
पिटना	पीटना	लदना	लादना
लुटना	लूटना	पलना	पालना
मरना	मारना	पिसना	पीसना
बँधना	बाँधना	बलना	बालना

(क) 'सिलना' का सकर्मक रूप 'सीना' होता है।

(२) तीन अक्षरों के धातुओं में दूसरे अक्षर का स्वर दीर्घ करने से; जैसे--

उखड़ना	उखाड़ना	निकलना	निकालना
बिगड़ना	बिगाड़ना	सँभलना	सँभालना

(३) कुछ धातुओं के आद्य स्वर 'इ' और 'उ' को क्रमशः 'ए' और 'ओ' में बदलने से; जैसे—

छिदना	छेदना	मुड़ना	मोड़ना
दिखना	देखना	घुलना	घोलना
फिरना	फेरना	खुलना	खोलना

(४) कई धातुओं के अन्त्य 'ट' को 'ड़' में बदलने से; जैसे—

जुटना	जोड़ना	टूटना	तोड़ना
छूटना	छोड़ना	फूटना	फोड़ना
फटना	फाड़ना		

(क) 'बिकना' का सकर्मक रूप 'बेचना' और 'रहना' का सकर्मक रूप 'रखना' होता है।

कुछ धातुओं का सकर्मक और प्रथम प्रेरणार्थक रूप अलग-अलग होता है और दोनों में अर्थ का अन्तर होता है; जैसे--'गड़ना' का सकर्मक रूप 'गाड़ना' और प्रथम प्रेरणार्थक रूप 'गड़ाना' है। 'गाड़ना' का अर्थ 'जमीन के भीतर बल से रखना' है और 'गड़ाना' का एक अर्थ 'चुभाना' भी है। इसी प्रकार 'दाबना' और 'दबाना' में भेद है।

नाम धातु

धातुओं के सिवा शब्द-भेदों में प्रत्यय जोड़ने से जो धातु बनते हैं, उन्हें नाम धातु कहते हैं। ये धातु विशेष रूप में संज्ञा या विशेषण के अन्त में 'ना' जोड़ने से बनते हैं; जैसे—

(क) संस्कृत शब्दों से—स्वीकार-स्वीकारना, धिक्कार-धिक्कारना, मोह-मोहना, शोभा-शोभना, उन्मूलन-उन्मूलना, उद्गीरण-उद्गीरना, अनुराग-अनुरागना आदि।

ऐसी क्रियाएँ प्रायः कविताओं में प्रयुक्त होती हैं; जैसे—

"जैसे उन्मूलती श्रावणी
सरिता तट-बरगद तरुवर को,
उसकी प्रज्ञा ने उन्मूला
कर्मकाण्ड के आडम्बर को।"

(ख) अरबी-फारसी शब्दों से दाग—दागना, गुजर—गुजरना, खर्च—खर्चना, खरीद—खरीदना, आजमा—आजमाना आदि।

(ग) हिन्दी शब्दों से बात—बतियाना, लात--लतियाना, हाथ—हथियाना, चिकना—चिकनाना, अपना--अपनाना, दुख--दुखना, बिलग—बिलगाना आदि।

(क) किसी वस्तु की ध्वनि के अनुकरण पर जो धातु बनते हैं, वे अनुकरण-धातु कहलाते हैं। ये शब्दों के अन्त में 'आना' जोड़कर बनाये जाते हैं; जैसे —

भनभन--भनभनाना, टर्र-टर्र--टर्रटराना, खटखट--खटखटाना, बड़बड़—बड़बड़ाना, थरथर--थरथराना, मर्मर--मर्मराना आदि।

संयुक्त क्रियाएँ

[सूचना—संयुक्त क्रियाएँ कुछ कृदन्तों (धातुओं से बने शब्दों) की सहायता से बनायी जाती हैं, इसलिए इनका विवेचन क्रिया के रूपान्तर प्रकरण में किया जायेगा।]

अभ्यास

१. क्रिया किसे कहते हैं ?

२. पाँच क्रियार्थक संज्ञाओं का प्रयोग कीजिये।

३. पाँच क्रियाओं का प्रयोग अकर्मक और सकर्मक दोनों रूपों में करें।

४. यौगिक क्रिया किसे कहते हैं ? पाँच यौगिक क्रिया का प्रयोग करें।

५. पाँच अकर्मक क्रियाओं का प्रयोग प्रेरणार्थक रूप में करें।

६. ,, सकर्मक ,, ,, ,, , ,, ।

७. नाम धातु किसे कहते हैं ? पाँच नाम धातुओं का प्रयोग करें।

८. धातु किसे कहते हैं ?

९. क्रियार्थक संज्ञा किसे कहते हैं ?

१०. सकर्मक क्रिया किसे कहते हैं ?

११. द्विकर्मक क्रिया किसे कहते हैं ?

१२. अपूर्ण अकर्मक और अपूर्ण सकर्मक किसे कहते हैं ? उदाहरण सहित समझाइये।

—:-:०:-:—

अव्यय

(१) क्रिया-विशेषण

जिस अव्यय से क्रिया की विशेषता का बोध होता है, उसे क्रिया-विशेषण कहते हैं; जैसे—राम 'धीरे-धीरे' पढ़ता है।

क्रिया-विशेषणों का वर्गीकरण तीन दृष्टियों से होता है—प्रयोग, रूप और अर्थ।

प्रयोग की दृष्टि से क्रिया-विशेषण के तीन प्रकार हैं--(१) साधार, (२) संयोजक, (३) अनुबद्ध।

(१) जो क्रिया-विशेषण किसी वाक्य में स्वतन्त्र रूप में प्रयुक्त होता है, उसे साधारण क्रिया-विशेषण कहते हैं; जैसे—

(क) मैं 'अभी' आया हूँ। (ख) तुम 'वहाँ' गये थे। (ग) वह 'कम' बोलता है।

(२) जो क्रिया-विशेषण किसी उपवाक्य के साथ सम्बन्धित होता है, उसे संयोजक क्रिया-विशेषण कहते हैं; जैसे—

(क) 'जब' रोहिताश्व ही नहीं रहा तब मैं जीकर क्या करूँगी ?

(ख) 'जहाँ' अभी सागर है वहाँ किसी समय वन था।

टिप्पणी—जब, जहाँ, जैसे--ज्यों, जितना--ये संयोजक क्रिया-विशेषण सम्बन्धवाचक सर्वनाम 'जो' से बनते हैं और इसी के अनुसार दो उपवाक्यों को संयुक्त करते हैं।

(३) अनुबद्ध क्रिया-विशेषण वे हैं जो अवधारण के लिये किसी भी शब्द-भेद के साथ प्रयुक्त हो सकते हैं; जैसे—उसने यह लिखा 'तक' नहीं।

रूप की दृष्टि से क्रिया-विशेषण के तीन प्रकार हैं—

(१) मौलिक, (२) यौगिक और (३) स्थानीय।

(१) जो क्रिया-विशेषण किसी दूसरे शब्द से नहीं बनते, उन्हें मौलिक क्रिया-विशेषण कहते हैं; जैसे—नहीं, फिर, अचानक, दूर, ठीक।

(२) जो क्रिया-विशेषण दूसरे शब्दों में प्रत्यय या शब्द जोड़ने से बनते हैं, उन्हें यौगिक क्रिया-विशेषण कहते हैं, ये निम्नलिखित शब्द-भेदों से बनते हैं—

(क) संज्ञा से; जैसे—रात तक, दिनभर, प्रेमपूर्वक, रात में, आगे, क्रमशः, मन से, सवेरे।

(ख) सर्वनाम से; जैसे—इसलिए, जिससे, जब, अब, वहाँ, यहाँ।

(ग) विशेषण से; जैसे—चुपके, धीरे, भूले से, इतने में, पहले, दूसरे, ऐसे, वैसे।

(घ) धातु से; जैसे—आते, जाते, करते, देखते, हुए, चाहे, लिए, बैठे हुए।

(ङ) अव्यय से; जैसे—यहाँ तक, वहाँ तक।

निश्चय का बोध कराने के लिये क्रिया-विशेषण के साथ बहुधा 'ई' या 'ही' प्रयुक्त होता है; जैसे—अब—अभी, यहाँ—यहीं, आते ही, पहले—पहले ही।

संयुक्त क्रिया-विशेषण निम्नलिखित शब्दों के मेल से बनते हैं—

(क) संज्ञाओं की द्विरुक्ति से; जैसे—घर-घर, पल-पल, बीचो-बीच, हाथों-हाथ।

(ख) दो भिन्न-भिन्न संज्ञाओं के संयोग से; जैसे—रात-दिन, घर-बाहर, देश-विदेश, साँझ-सबेरे।

(ग) विशेषणों की द्विरुक्ति से; जैसे—साफ-साफ, ठीक-ठीक, एकाएक।

(घ) क्रिया-विशेषणों की द्विरुक्ति से; जैसे—पहले-पहल, बैठे-बैठे, खाते-खाते, कहाँ-कहाँ, कब-कब, जहाँ-जहाँ, धीरे-धीरे।

(ङ) दो भिन्न क्रिया-विशेषणों के संयोग से; जैसे—जब-तब, कल-परसों, जहाँ-कहीं, जब-कभी, तले-ऊपर।

(च) अनुकरणवाचक शब्दों की द्विरुक्ति से; जैसे—गटगट, धड़ाधड़।

(छ) संज्ञा और विशेषण के संयोग से; जैसे—प्रतिदिन, प्रतिपल, हरघड़ी, एक साथ, एक बार, दो बार, जबर्दस्ती, लगातार।

(ज) अव्यय और दूसरे शब्दों के संयोग से; जैसे—यथाशक्ति, अनजाने, निस्सन्देह, बेफायदा।

(झ) पौर्वकालिक कृदन्त (करके) और विशेषण के संयोग से; जैसे—विशेष करके, एक-एक करके।

(३) अन्य शब्द-भेद जो बिना किसी रूपान्तर के क्रिया-विशेषण की भाँति प्रयुक्त होते हैं, स्थानीय क्रिया-विशेषण कहलाते हैं; जैसे--

(क) संज्ञा- तुम मेरी सहायता 'खाक' करोगे ! वह 'अपना सिर' पढ़ेगा।

(ख) सर्वनाम—साहब, वह 'यह' गया। वे मुझे 'क्या' कहेंगे ?

(ग) विशेषण—विमलकुमारी 'मधुर' गाती है। वह 'उदास' बैठा था। बन्दर 'कैसा' उछला।

(घ) पौर्वकालिक कृदन्त—तुम 'बोलकर' लिखते हो ! वह 'उछल कर' दौड़ा।

हिन्दी में संस्कृत और उर्दू के भी क्रिया-विशेषण प्रयुक्त होते हैं। ये तत्सम और तद्भव दोनों रूपों में होते हैं।

(१) संस्कृत क्रिया-विशेषण।

(क) तत्सम—शनैः-शनैः, कदाचित्, सम्प्रति, वस्तुतः, व्यर्थ, वृथा, अस्तु, अतः, पुनः, बहुधा, प्रायः, पश्चात्, ईषत, अकस्मात् आदि।

तद्भव---सामने (संस्कृत—सम्मुखम्), साथ (संस्कृत—सार्थम्), आगे (संस्कृत—अग्रे), वारंवार (संस्कृत—वारंवारं), परसों (संस्कृत—परश्वः), कल (संस्कृत—श्वः), आज (संस्कृत—अद्य)।

(२) उर्दू क्रिया-विशेषण

तत्सम—शायद, जरूर, बिल्कुल, अक्सर, फौरन, खूब, नजदीक आदि।

तद्भव—जल्दी (फारसी--जल्द), सही (अरबी--सहीह), हमेशा (फारसी—हमेशह) आदि।

अर्थ की दृष्टि से क्रिया-विशेषणों के निम्नलिखित चार भेद हैं—(१) स्थान-वाचक, (२) कालवाचक, (३) परिमाणवाचक और (४) रीतिवाचक।

(१) स्थान-वाचक क्रिया-विशेषणों के दो उपभेद हैं—

(क) स्थितिवाचक; जैसे—सर्वत्र, समीप, निकट, पास, भीतर, बाहर, साथ, सामने, तले, नीचे, ऊपर, पीछे, आगे, तहाँ, कहाँ, वहाँ, यहाँ।

(ख) दिशावाचक; जैसे—उस जगह, इस तरफ, आरपार, बायें, दाहिने, अलग, परे, दूर, तिधर, जिधर, किधर, इधर, उधर ।

(२) कालवाचक क्रिया-विशेषणों के तीन उपभेद हैं—

(क) समयवाचक; जैसे—निदान, प्रथम, पीछे, पहले, सवेरे, तुरन्त, फिर, तभी, जभी, कभी. अभी, तब, कब, जब, अब, नरसों, तरसों, परसों, कल, आज ।

(ख) अवधिवाचक; जैसे—कब का, दिन भर, लगातार, अब भी, कभी-न-कभी, कभी-कभी, अब तक, निरन्तर, सतत, सदा, नित्य, आजकल ।

(ग) पौनःपुन्य वाचक; जैसे—तीसरे ,दूसरे, एक, पहले, फिर, कई बार, घड़ी-घड़ी, हर रोज, प्रतिदिन, बहुधा, अक्सर, बारंबार, बार-बार आदि ।

(३) परिमाणवाचक क्रिया-विशेषण, अनिश्चित संख्या या परिमाण के बोधक होते हैं । इनके ये उपभेद हैं—

(क) अधिकता-बोधक; जैसे—अत्यन्त, अति, निपट, पूर्णतया, खूब, निरा, सर्वथा, बिल्कुल, बहुतायत से, भारी, बड़ा, बहुत ।

(ख) न्यूनता-बोधक; जैसे—किंचित, जरा, प्रायः, टुक, थोड़ा, लगभग, कुछ ।

(ग) पर्याप्तवाचक; जैसे—इति, अस्तु, ठीक, बराबर, चाहे, यथेष्ट, काफी, पर्याप्त, बस, केवल ।

(घ) तुलनावाचक; जैसे—और, बढ़कर, कितना, जितना, उतना, इतना, कम, अधिक, न्यून, ज्यादा ।

(ङ) श्रेणीवाचक; जैसे—यथाक्रम, एक-एक करके, तिल-तिल, बारी-बारी से, क्रम-क्रम से, थोड़ा-थोड़ा ।

(४) रीतिवाचक क्रिया-विशेषणों की संख्या गुणवाचक विशेषणों की भांति अनंत है । इस वर्ग में वे सभी क्रिया-विशेषण हैं जो उपर्युक्त वर्गों में समाविष्ट नहीं होते हैं । ये निम्नलिखित अर्थों में प्रयुक्त होते हैं—

(क) प्रकार—संदेह, ध्यानपूर्वक, मन से, एकाएक, एक साथ, आप ही आप, परस्पर, स्वयं, जैसे-तैसे, पैदल, हौले, यों ही, सेंतमेंत, सेंत, साक्षात्, सहज, वृथा, अनायास, सहसा, अचानक, धीरे, अथ, यथा-तथा, मानो, तैसे, जैसे—कैसे, वैसे, ऐसे ।

(ख) निश्चय—वस्तुतः, यथार्थतः, विशेष करके, अलबत्ता, जरूर, अवश्य, बेशक, निस्सन्देह, सचमुच, वास्तव में, सही।

(ग) अनिश्चय—यथासंभव, बहुत करके, शायद, कदाचित्, स्यात्।

(घ) कारण—इसलिए, अतः, क्यों।

(ङ) निषेध—न, नहीं, मत।

(च) अवधारण—तक, भर, मात्र, ही, तो।

यौगिक क्रिया-विशेषण अन्य शब्दों में निम्नलिखित शब्द या प्रत्यय जोड़ने से बनते हैं—

(१) संस्कृत क्रिया-विशेषण

(क) मात्र; जैसे—नाममात्र, पलमात्र, सुखमात्र।

(ख) चित्; जैसे—क्वचित्, किंचित्, कदाचित्।

(ग) वत्; जैसे—पूर्ववत्, तद्वत्।

(घ) था; जैसे—सर्वथा, अन्यथा, यथा, तथा।

(ङ) त्र; जैसे—अन्यत्र, सर्वत्र, एकत्र, यत्र, तत्र।

(च) शः; जैसे—क्रमशः, अक्षरशः।

(छ) धा; जैसे—बहुधा, नवधा, शतधा।

(ज) दा; जैसे—कदा, यदा, सदा, सर्वदा।

(झ) तः; जैसे—स्वतः, वस्तुतः, स्वभावतः।

(ञ) अनुसार; जैसे—रीत्यनुसार, शक्त्यनुसार, इच्छानुसार।

(ट) या; जैसे—कृपया, विशेषतया।

(ठ) इन, आ; जैसे—सुखेन, येनकेन प्रकारेण, मनसा-वाचा-कर्मणा।

(ड) वश; जैसे—विधिवश, भयवश, मोहवश, भाग्यवश, स्नेहवश।

(ढ) पूर्वक; जैसे—सुखपूर्वक, प्रेमपूर्वक, ध्यानपूर्वक।

(२) हिन्दी क्रिया-विशेषण

(क) कर, करके; जैसे—लेकर, उठकर, बैठ करके, प्रेम करके।

(ख) तक; जैसे—रात तक, यहाँ तक, आजतक, घर तक।

(ग) का; जैसे—कब का, सबेरे का।

(घ) में; जैसे—संक्षेप में, इतने में, अन्त में, वास्तव में।

(ङ) से; जैसे—तबसे, कबसे, इधर से, उधर से, प्रेम से, मन से।

(च) को; जैसे—रात को, सोमवार को, दिन को।

(छ) आ, ए; जैसे—उठा, सोया, लिये, बैठे, खाये।

(ज) ता, ते; जैसे—उठता, करता, बोलता, खाते, पीते।

(झ) भर; जैसे—घड़ी भर, पल भर, दिन भर, रात भर।

निम्नलिखित प्रत्ययों और शब्दों से सार्वनामिक क्रिया-विशेषण बनते हैं—

(क) ब; जैसे—अब, तब, कब, जब।

(ख) लिए; जैसे—किस लिए, जिस लिए, इसलिए।

(ग) यों; जैसे—यों, त्यों, ज्यों, क्यों।

(घ) धर; जैसे—इधर, उधर, जिधर, तिधर।

(ङ) हाँ; जैसे—यहाँ, वहाँ, कहाँ, जहाँ, तहाँ।

(च) ए; जैसे—थोड़े, तैसे, वैसे, जैसे, कैसे, ऐसे।

(३) उर्दू क्रिया-विशेषण

अन—जबरन, फौरन, मसलन।

सामासिक क्रिया-विशेषणों अर्थात् अव्ययी समासों का विवेचन व्युत्पत्ति प्रकरण में होगा। यहाँ इनके कुछ उदाहरण दिये जाते हैं—

(१) संस्कृत अव्ययीभाव समास

(क) वि—विशेष, व्यर्थ।

(ख) अन्—अकारण, अनायास।

(ग) स—सानन्द, सदेह, सपरिवार।

(घ) सम्—समक्ष, सम्मुख।

(ङ) आ—आजन्म, आजीवन, आमरण।

(च) यावत्—यावज्जीवन।

(छ) निः—निस्सन्देह, निर्भय, निःशंक।

(ज) यथा—यथाशक्ति, यथाक्रम, यथासंभव।

(झ) प्रति—प्रतिदिन, प्रतिफल, प्रत्यक्ष।

(२) हिन्दी अव्ययीभाव समास

(क) नि—निडर, निधड़क।

(ख) अन—अनपूछे, अनजाने।

(३) उर्दू अव्ययीभाव समास

(क) बे—बेहद, बेतरह, बेशक, बेकायदा, बेकार।

(ख) हर—हररोज, हरसाल, हर वक्त।

(ग) ब—बदस्तूर, बजिन्स।

कुछ क्रिया-विशेषणों के विशेष अर्थों और प्रयोगों के उदाहरण दिये जाते हैं—

(१) परसों, कल—ये भूत और भविष्य दोनों कालों में प्रयुक्त होते हैं, जिसकी पहचान क्रिया के रूप से होती है; जैसे—

(क) मोहन कल पटना जायेगा। (ख) सोहन कल पटने से आया। (ग) विमल कुमारी परसों ननिहाल जायेगी।

(२) आगे, पीछे, पास, दूर—ये और इनके पर्यायवाची शब्द स्थान-वाचक क्रिया-विशेषण तो हैं ही, कालवाचक भी हैं; जैसे—

(क) 'आगे राम अनुज पुनि पाछे।'—स्थानवाचक

(ख) आगे पीछे सब जायेंगे।—कालवाचक

(ग) शहर पास है या दूर ?—स्थानवाचक

(घ) दुर्गापूजा पास आ गयी।—कालवाचक

(ङ) परीक्षा का समय अभी देर है।—कालवाचक

'आगे' का कालवाचक अर्थ कभी-कभी पीछे के साथ बदलता है; जैसे—ये सब बातें आगे (पीछे) ज्ञात होंगी।

(३) तब, फिर—'तब' की द्विरुक्ति से बचने के लिए इसके साथ बहुधा 'फिर' का प्रयोग किया जाता है; जैसे—

तब मैंने समझा कि इसमें क्या बात है। फिर क्या हुआ, यह आप अच्छी तरह जानते हैं।

कभी-कभी 'तब' और 'फिर' एक ही अर्थ में साथ-साथ प्रयुक्त होते हैं; जैसे—तब फिर क्या हुआ, यह कहें।

(४) कभी—यह अनिश्चित कालबोधक है;—

आप मुझसे कभी मिलें।

(क) 'कभी' और 'कदापि' बहुधा निषेधात्मक शब्द के साथ प्रयुक्त होते हैं; जैसे—मैं कभी ऐसा नहीं करूँगा। ऐसा कभी मत करना। यह काम कदापि नहीं होगा।

(ख) दो या अधिक वाक्यों में 'कभी' के प्रयोग से क्रमागत काल का बोध होता है; जैसे—'कभी नाव गाड़ी पर और कभी गाड़ी पर नाव।'

(५) कहाँ—दो अलग-अलग वाक्यों में 'कहाँ' के प्रयोग से बहुत अन्तर का बोध होता है; जैसे—

'कहाँ राजा भोज और कहाँ भोजुआ तेली ?'

(६) कहीं—अनिश्चित स्थान के सिवा यह 'अधिक' और 'कदाचित्' के अर्थ में भी प्रयुक्त होता है; जैसे—

राम श्याम से कहीं सुखी है। ऐसी बात वह कहीं व्यंग्य में न कह दे।

(क) अलग-अलग वाक्यों में 'कहीं' के प्रयोग से विरोध का बोध होता है; जैसे—'कहीं धूप, कहीं छाया।'

'कहीं धान आधा पका है, कहीं बिलकुल कच्चा है।'

(ख) विस्मय में 'कहीं' 'कभी' की भाँति प्रयुक्त होता है; जैसे—

'पत्थर भी कहीं पसीजता है।'

(७) परे—यह बहुधा तिरस्कार में प्रयुक्त होता है; जैसे—

'परे हो।' 'परे हट।'

(८) यों ही—यह 'अकारण' के अर्थ में प्रयुक्त होता है; जैसे—

अमरेश यों ही वहाँ गया था।

(९) जब तक यह बहुधा निषेधवाचक वाक्य में प्रयुक्त होता है; जैसे—जब तक अरविन्द न आये, अमरेश वहाँ ठहरेगा।

(१०) जहाँ—यह कभी-कभी 'जब' के अर्थ में प्रयुक्त होता है; जैसे—

'जहँ अस दशा जड़न की बरनी ।
को कहि सकै सचेतन करनी ।।'

(११) जहाँ तक - इसका अर्थ बहुधा परिमाणवाचक होता है; जैसे—जहाँ तक हो सके, सड़कें साफ कर दी जायँ ।

(क) 'यहाँ तक' और 'कहाँ तक' भी परिमाणवाचक होते हैं; जैसे—मैं इनके गुणों का वर्णन कहाँ तक करूँ ?

बाढ़ में अगणित घर धाराशायी हुए; यहाँ तक कि अगणित व्यक्ति भी बह गये ।

(ख) 'यहाँ तक' 'कि' के साथ प्रयुक्त होता है ।

(१२) कब का—यह 'बहुत समय से' के अर्थ में प्रयुक्त होता है । इसका लिंग-वचन कर्त्ता के अनुसार बदलता है; जैसे—माता कब की पुकार रही है ।

(१३) क्यों कर—यह 'कैसे' के अर्थ में प्रयुक्त होता है; जैसे—यह कार्य क्यों कर होगा ?

(१४) इसलिए—यह कभी क्रिया-विशेषण और कभी समुच्चय-बोधक होता है; जैसे—

(क) मैं स्कूल इसलिए जाऊँगा कि प्रधानाध्यापक ने मुझे बुलाया है :—क्रिया-विशेषण।

(ख) तू दया का पात्र है, इसलिए मैं तुझे मुक्त करता हूँ ।—समुच्चय-बोधक ।

(१५) न, नहीं—ये दोनों साधारणतः समानार्थक हैं । लेकिन 'न' से केवल 'निषेध' और 'नहीं' से निषेध के निश्चय का बोध होता है; जैसे— मैं वहाँ न जा सकूँगा । मैं वहाँ नहीं जाऊँगा ।

(क) 'न' प्रश्नवाचक अव्यय भी है; जैसे—गोविन्द पोद्दार जी, आप डाक्टर पाल के यहाँ शाम में जायँगे न ?

(ख) 'न' कभी-कभी अनुमान के अर्थ में प्रयुक्त होता है; जैसे—आप यहाँ आ गये हैं न ।

(ग) 'न' कुछ सर्वनामों, विशेषणों और क्रिया-विशेषणों के बीच में निश्चय के लिए प्रयुक्त होता है; जैसे—किसी-न-किसी, कहीं-न-कहीं, कोई-न-कोई, कुछ-न-कुछ, एक-न-एक आदि ।

(घ) प्रश्न के निषेधवाचक उत्तर में 'नहीं' प्रयुक्त होता है; जैसे—
'क्या आप आज शाम में बाजार जायेंगे ?' 'नहीं ।'

(१६) केवल—यह अर्थ के अनुसार कभी विशेषण, कभी क्रियाविशेषण और कभी समुच्चयबोधक के रूप में प्रयुक्त होता है; जैसे—

(क) केवल अरविन्द वहाँ गया था ।—विशेषण

(ख) मुरलीधर केवल पढ़ता है ।—क्रिया-विशेषण

(ग) 'करती हुई विकट ताण्डव-सी मृत्यु निकट दिखलाती है ।
केवल एक तुम्हारी आशा प्राणों को अटकाती है ।'—समुच्चयबोधक ।

(१७) बहुधा, प्रायः—ये शब्द सर्वव्यापक विधानों को सीमित करने के लिए प्रयुक्त होते हैं । जैसे—

(क) वे बहुधा शक्तिशाली मित्रों से घिरे रहते हैं ।

(ख) वे प्रायः दुर्बल शत्रुओं से घिरे रहते हैं ।

(१८) तो—इससे निश्चय और आग्रह की सूचना मिलती है । यह किसी भी शब्द-भेद के साथ प्रयुक्त हो सकता है; जैसे—

तुम तो वहाँ थे । तुम वहाँ गये तो थे । वह तुम्हारे पास तो था ।

(क) 'नहीं तो' और 'तोभी' समुच्चयबोधक होते हैं ।

(ख) 'यदि' के साथ दूसरे वाक्य में 'तो' समुच्चयबोधक होता है; जैसे—यदि वर्षा होगी तो काफी फसल होगी ।

(१९) ही—यह भी 'तो' की भाँति किसी भी शब्द-भेद के साथ प्रयुक्त होकर निश्चय का बोध कराता है । कहीं-कहीं यह पहले शब्द के साथ संयुक्त होता है; जैसे—अब + ही = अभी, कब + ही = कभी, तुम + ही = तुम्हीं, सब + ही = सभी, किस + ही = किसी आदि ।

उदाहरण—दो ही दिनों में, दो दिनों में ही, पास ही, जाता ही था, खा ही गया आदि ।

(क) 'न' 'तो' और 'ही' समान शब्दों के बीच में भी प्रयुक्त होते हैं; जैसे—कभी-न-कभी, बात ही बात में, खाते ही खाते आदि।

(ख) 'ही' सामान्य भविष्यत् काल के प्रत्यय के पश्चात् भी कभी-कभी प्रयुक्त होता है;—मैं पटना जाऊँगा ही।

(२०) मात्र, भर, तक—ये सब कभी-कभी संज्ञाओं के साथ प्रत्ययों के रूप में प्रयुक्त होकर उन्हें क्रिया-विशेषण वाक्यांश बनाते हैं और कभी-कभी इनका प्रयोग दूसरे ही अर्थों में क्रिया-विशेषण की भाँति होता है।

(क) 'मात्र' संज्ञा और विशेषण के साथ 'ही' केवल के अर्थ में प्रयुक्त होता है; जैसे—

(१) एक लज्जा मात्र बची है।

(२) 'राम मात्र लघु नाम हमारा।'

(ख) कभी-कभी 'मात्र' का प्रयोग 'सब' के अर्थ में होता है; जैसे—
हिन्दी भाषा-भाषी मात्र उनके चिर-कृतज्ञ रहेंगे।

(ग) 'भर' का प्रयोग कभी-कभी 'मात्र' की भांति 'सब' के अर्थ में होता है; जैसे—इस गाँव भर में कोई भूखा नहीं सोता।

(घ) 'भर' का अर्थ कहीं-कहीं 'केवल' होता है; जैसे—
उसके साथ कपड़ा भर है।

(ङ) 'तक' का प्रयोग सीमा के अर्थ में होता है; जैसे—
उसका राज्य कश्मीर से कन्या कुमारी तक फैला हुआ था।

(च) निषेधार्थक वाक्य में 'तक' का अर्थ बहुधा 'ही' होता है; जैसे—
मैंने उसे देखा तक नहीं।

अब कुछ संयुक्त और द्विरुक्त क्रिया-विशेषणों के अर्थों और प्रयोगों के बारे में लिखा जाता है—

(१) कब-कब—इसके प्रयोग से 'बहुत-कम' की ध्वनि निकलती है; जैसे—आप यहाँ कब-कब आये हैं?

(२) जब-तब—एक-न-एक दिन; जैसे—'जब-तब वीर निवास।'

(३) अब-तब—यह बहुधा संज्ञा या विशेषण के समान प्रयुक्त होता है; जैसे—अब-तब करना = टालना; अब-तब होना = मरने की दशा में होना।

(४) ज्यों-का-त्यों—पूर्व दशा में वाक्यांश का प्रयोग बहुधा विशेषण के समान होता है और 'का' प्रत्यय विशेषण के लिंग-वचन के अनुसार बदलता है; जैसे—यह दीवार ज्यों-की-त्यों खड़ी है। यह मकान ज्यों-का-त्यों खड़ा है।

(५) जहाँ-का-तहाँ—पूर्व स्थान में; जैसे—यह आदमी जहाँ-का-तहाँ खड़ा है। इसमें विशेष्य के लिंग-वचन के अनुसार विकार होता है।

(६) जहाँ-तहाँ—सर्वत्र; जैसे—यह जहाँ-तहाँ मिल जायेगा।

(७) जैसे-तैसे, ज्यों-त्यों करके—किसी-न-किसी प्रकार से, कैसा भी करके, येन-केन प्रकारेण; जैसे—जैसे-तैसे यह कार्य पूर्ण हुआ।

अभ्यास

(१) क्रिया-विशेषण किसे कहते हैं?

(२) पाँच क्रिया-विशेषणों का प्रयोग करें।

(३) अर्थ की दृष्टि से क्रिया-विशेषण के कितने भेद हैं? प्रत्येक के दो-दो उदाहरण लिखें।

(४) रूप की दृष्टि से क्रिया-विशेषण के कितने भेद हैं? प्रत्येक के दो-दो उदाहरण लिखें।

(५) प्रयोग के अनुसार क्रिया-विशेषण के कितने भेद हैं? उदाहरण के साथ लक्षण लिखें।

(६) किन-किन शब्दों के मेल से क्रिया-विशेषण बनते हैं? उदाहरण सहित समझाइये।

(७) निम्नलिखित शब्दों से क्रिया-विशेषण बनाकर वाक्यों में उन्हें प्रयुक्त करें—मुख्य, देह, जन्म, कृपा, दिन, साँझ, बीच, घर।

सम्बन्ध-सूचक

जो अव्यय संज्ञा या संज्ञा की भाँति प्रयुक्त होनेवाले शब्द के बहुधा आगे प्रयुक्त होकर उसका सम्बन्ध वाक्य के किसी दूसरे शब्द के साथ मिलाता है, सम्बन्ध-सूचक कहलाता है; जैसे—ज्ञान के 'बिना' सुख नहीं मिलता। अरविन्द बाजार 'तक' गया। दिन 'भर' खेलना अच्छा नहीं होता। इन वाक्यों में 'बिना', 'तक' और 'भर' सम्बन्ध-सूचक है। 'बिना' शब्द 'ज्ञान' संज्ञा का सम्बन्ध 'मिलना' क्रिया से मिलता है; 'तक' शब्द 'बाजार' संज्ञा का सम्बन्ध 'गया' से मिलाता है और 'भर' शब्द 'दिन' का सम्बन्ध 'खेलना' क्रियार्थक संज्ञा से मिलाता है।

कई कालवाचक और स्थानवाचक अव्यय क्रिया-विशेषणों के रूप और सम्बन्ध सूचकों के रूप में भी प्रयुक्त होते हैं। जब वे स्वतन्त्र रूप से क्रिया की विशेपता व्यक्त करते हैं तब क्रिया-विशेषण कहलाते हैं और जब संज्ञा के साथ प्रयुक्त होते हैं तब सम्बन्ध-सूचक कहलाते हैं; जैसे—

(क) अरविन्द 'यहाँ' रहता है। (क्रिया-विशेषण)

(ख) राजेन्द्र महात्माजी के 'यहाँ' रहता है। (सम्बन्ध-सूचक)

(ग) यह पत्र पहले 'लिखना' चाहिए। (क्रिया-विशेषण)

(घ) यह पत्र सोने से 'पहले' लिखना चाहिए। (सम्बन्ध-सूचक)

प्रयोग की दृष्टि से सम्बन्ध-सूचक दो प्रकार के होते हैं—

(१) सम्बद्ध और (२) अनुबद्ध।

सम्बद्ध सम्बन्ध-सूचक संज्ञाओं की विभक्तियों के आगे प्रयुक्त होते हैं; जैसे—ज्ञान के 'बिना', मनुष्य की 'भाँति', राक्षस के 'समान', होली से 'पहले' आदि।

अनुबद्ध सम्बन्ध-सूचक संज्ञा के सिर्फ विकृत रूप के साथ प्रयुक्त होते हैं; जैसे—किनारे 'तक', साथियों 'सहित', प्याले 'भर', विद्यार्थियों 'समेत', लड़के 'सरीखा' आदि।

टिप्पणी—ने, की, का, के, को, से, में, भी अनुबद्ध सम्बन्ध-सूचक हैं, किन्तु निम्नलिखित कारणों से वैयाकरण इन्हें सम्बन्ध-सूचकों में परिगणित नहीं करते—

(क) इनमें प्राय: सभी संस्कृत के विभक्ति-प्रत्ययों के अपभ्रंश हैं। इसलिए हिन्दी में ये प्रत्ययों में परिगणित होते हैं।

(ख) ये परतंत्र हैं; इसलिए अर्थहीन हैं; परन्तु दूसरे सम्बन्ध-सूचक बहुधा स्वतंत्र होने के कारण सार्थक होते हैं।

सम्बद्ध सम्बन्ध-सूचकों के पूर्व बहुधा 'के' विभक्ति का प्रयोग होता है; जैसे—ज्ञान के लिए, भूख के मारे, नौकर के खिलाफ उसके पास, राम के विरुद्ध आदि।

निम्नलिखित अव्यय स्त्रीलिंग हैं; इसलिए इनके पूर्व 'की' विभक्ति का प्रयोग होता है—बदौलत, मारफत. तरफ, तरह, खातिर, नाईं, जगह, ओर, अपेक्षा, सन्ती।

टिप्पणी—जब 'ओर' या 'तरफ' के साथ संख्या-वाचक विशेषण का प्रयोग होता है तब 'ओर' या 'तरफ' के पूर्व 'की' की जगह 'के' का प्रयोग होता है; जैसे—उसके चारों ओर, मेरे चारों ओर, उसके दोनों तरफ आदि। 'नाईं', 'सरीखा' और 'सन्ती' का प्रचार कम है।

आकारान्त सम्बन्धसूचकों का रूप संज्ञा के लिंग और वचन के अनुसार परिवर्तित होता है और उनके पूर्व यथायोग्य का, की, के या विकृत रूप प्रयुक्त होता है जैसे—नदी की धारा उसे टापू का जैसा रूप देती है? मोती का-सा रूप। बिजली की-सी चंचलता। हरिश्चन्द्र-सरीखे दानी।

आगे, पीछे, तले, बिना आदि कई सम्बन्ध-सूचक कभी-कभी बिना विभक्ति के प्रयुक्त होते हैं; जैसे—पेड़ तले, पीठ पीछे, कुछ दिन आगे, राम बिना आदि।

कविताओं में उपर्युक्त विभक्तियाँ बहुधा लुप्त होती हैं जैसे—

(१) "मातु समीप कहत सकुचाहीं।"

(२) सभा मध्य। (३) पिता पास। (४) तेज सम्मुख।

'परे' और 'रहित' के पहले 'से' विभक्ति का प्रयोग होता है। 'पहले', 'पीछे' 'आगे' और 'बाहर' के साथ 'से' विभक्ति विकल्प से प्रयुक्त होती है; जैसे—समय से पहले, उसके पीछे, समाज से बाहर।

'मारे', 'बिना' और 'सिवा' कभी-कभी संज्ञा के पहले प्रयुक्त होते हैं; जैसे—मारे प्यास के, सिवा राम के, बिना पानी के।

'बिना', 'अनुसार' और 'पीछे' बहुधा भूतकालीन कृदन्त के विकृत रूप के आगे बिना विभक्ति के प्रयुक्त होते हैं; जैसे—विद्यार्थियों को ज्ञान दिये बिना, नीचे लिखे अनुसार, रोशनी हुए पीछे।

टिप्पणी— सम्बन्ध-सूचक का प्रयोग संज्ञा के पहले करना उर्दू की रीति है जिसका अनुसरण कोई-कोई उर्दू प्रेमी करते हैं; जैसे—यह काम साथ समझदारी के करो। हिन्दी में यह रीति कम प्रचलित है।

'योग्य' लायक, और 'बमूजिब' बहुधा क्रियार्थक संज्ञा के विकृत रूप के साथ प्रयुक्त होते हैं; जैसे—यह आम खाने योग्य है। यह बात याद रखने लायक है। लिखने बमूजिब।

अर्थ के अनुसार सम्बन्ध-सूचकों के वर्गीकरण की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि इससे व्याकरण-सम्बन्धी किसी नियम की सिद्धि नहीं होती। यहाँ केवल स्मरण की सहायता के लिये इनका वर्गीकरण किया जाता है—

(१) तुलनावाचक

अपेक्षा, बनिस्बत, आगे, सामने।

(२) संग्रहवाचक

तक, पर्यन्त, भर, मात्र, लौं, सुद्धाँ।

(३) सहचारवाचक

वश, स्वाधीन, अधीन, सहित, समेत, साथ, संग।

(४) विरोधवाचक

विपरीत, उल्टा, खिलाफ, विरुद्ध।

(५) सादृश्यवाचक

मुताबिक, बमूजिब, जैसा, ऐसा, सा, सरीखा, देखादेखी, अनुकूल, अनुरूप, अनुसार, सदृश, लायक, योग्य, तुल्य, बराबर, नाईं, भाँति, तरह, सम, समान, तईं।

(६) विनिमयवाचक

सन्ती, एवज, जगह, बदले, पलटे।

(७) व्यतिरेकवाचक

रहित, अतिरिक्त, बगैर, बिना, अलावा, सिवाय (सिवा)।

(८) विषयवाचक

मद्धे, भरोसे, जान, लेखे, नाम (नामक), विषय, निस्बत, बाबत।

(९) हेतुवाचक

मारे, सबब, कारण, खातिर, हित, हेतु, वास्ते, निमित्त, लिए।

(१०) कालवाचक

आगे, पीछे, बाद, पहले, पूर्व, अनन्तर, पश्चात्, लगभग।

(११) स्थानवाचक

भीतर, दूर, परे, बाहर, यहाँ, नजदीक, समीप, निकट, पास, रूबरू, सामने, तले, नीचे, ऊपर, पीछे, आगे।

(१२) दिशावाचक

प्रति, आसपास, पार, तरफ, ओर।

(१३) साधन-वाचक

सहारे, जबानी, बल, करके, मारफत, हाथ, जरिये, द्वारा।

व्युत्पत्ति के अनुसार सम्बन्ध-सूचक दो प्रकार के हैं—मौलिक और यौगिक।

हिन्दी में मौलिक सम्बन्ध-सूचकों की संख्या बहुत कम है, जैसे—बिना, पर्यन्त, नाईं।

यौगिक सम्बन्ध-सूचक निम्नलिखित शब्द-भेदों से बने हैं—

(१) संज्ञा से; जैसे—मारफत, विषय, लेखे, नाम, अपेक्षा, ओर, वास्ते, पलटे।

(२) विशेषण से; जैसे—ऐसा, जैसा, योग्य, सरीखा, जवानी, उल्टा, समान, तुल्य।

(३) क्रिया-विशेषण से; जैसे—पीछे, परे, पास, बाहर, यहाँ, भीतर, ऊपर।

(४) क्रिया से; जैसे—लिये, मारे, करके, जान।

हिन्दी में संस्कृत और उर्दू के कई सम्बन्ध-सूचक प्रयुक्त होते हैं, जिनमें अधिकतर शब्द हिन्दी के सम्बन्ध-सूचकों के समानार्थक हैं। यहाँ तीनों भाषाओं के ऐसे समानार्थक सम्बन्ध-सूचकों के उदाहरण लिखे जाते हैं; जैसे—

संस्कृत	उर्दू	हिन्दी
समक्ष, सम्मुख	रूबरू	सामने
विषय	बाबत, निस्बत	मद्धे
द्वारा	जरिये	से
निमित्त, हेतु	वास्ते, खातिर	लिए
विरुद्ध, विपरीत	खिलाफ	उल्टा
भाँति	तरह	नाईं
अपेक्षा	बनिस्बत	से
पर्यन्त	ता	तक
पश्चात्, अनन्तर	बाद	पीछे
कारण	सबब, बदौलत	मारे
समीप, निकट	नजदीक	पास

कुछ सम्बन्ध-सूचक अव्ययों के अर्थ और प्रयोग बतलाये जाते हैं—

(१) अपेक्षा, बनिस्बत—पहला शब्द स्त्रीलिंग संस्कृत संज्ञा है और दूसरा शब्द उर्दू संज्ञा 'निस्बत' में 'ब' उपसर्ग जोड़ने से बना है तथा पुल्लिग है। दोनों एक-दूसरे के समानार्थक शब्द हैं और तुलना में प्रयुक्त होते हैं। जिस वस्तु की हीनता प्रकट करनी होती है उसके वाचक शब्द के आगे ये व्यवहृत होते हैं। पहले के पूर्व 'की' विभक्ति प्रयुक्त होती है और दूसरे के पूर्व 'के' विभक्ति; जैसे—

अरविन्द की अपेक्षा अमरेश अधिक चंचल है। अमरेश के बनिस्बत अरविन्द अधिक गंभीर है।

(क) निस्बत का अर्थ 'विषय' होता है; जैसे—चन्दे की निस्बत आपका क्या विचार है?

(२) आगे, पीछे, भीतर, बाहर और इनके समानार्थक अर्थ के अनुसार कभी कालवाचक और कभी स्थानवाचक होते हैं; जैसे—फाटक के आगे, सीमा के भीतर आदि।

(३) आगे, पीछे, पहले, परे, ऊपर, नीचे और इनके समानार्थक शब्दों के पूर्व जब 'से' विभक्ति प्रयुक्त होती है तब इनसे तुलना का बोध होता है; जैसे—घनश्याम मोहन से आगे चला गया। गाड़ी समय के पहले स्टेशन से खुल चुकी थी। यह बुद्धि में मुझसे पीछे है।

(४) पीछे—इससे प्रत्येकता का बोध होता है; जैसे—थान पीछे चार रुपये मिले।

(५) निकट—यह विचार के अर्थ में भी प्रयुक्त होता है; जैसे—उनके निकट भूत और भविष्य दोनों वर्त्तमान से हैं।

(६) पास—इससे अधिकार का भी बोध होता है; जैसे—रामदेव के पास एक मोटी कलम है।

(७) लौं—यह ब्रजभाषा का शब्द है और 'तक' के अर्थ में प्रयुक्त होता है। श्री अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' ने खड़ी बोली की कविताओं में भी इसका प्रयोग अनेक स्थलों पर किया है; पुरानी कविताओं में 'लौं' का प्रयोग 'समान' के अर्थ में भी किया गया है; जैसे—'जानत कछु जलथंभ-विधि दुर्योधन लौं लाल।'

(८) कर, करके—यह सम्बन्धसूचक बहुधा 'द्वारा', 'समान' या 'नामक' के अर्थ में प्रयुक्त होता है; जैसे—

(क) 'मन, वचन, कर्म करके यदि किसी जीव की हिंसा न करे।'

(ख) 'संसार के स्वामी को मनुष्य करके जानो।'

(ग) 'तुम हरि को पुत्र करके मानो।'

(घ) 'पंडित जी शास्त्री करके प्रसिद्ध हैं।'

(ङ) 'बछरा करि हम जान्यो याही।'

किन्तु ये प्रयोग पुराने हैं। आजकल ये व्यवहार में नहीं हैं।

(९) उल्टा—यह शब्द यथार्थतः विशेषण है; परन्तु कभी-कभी यह 'का' विभक्ति के आगे सम्बन्धसूचक के समान प्रयुक्त होता है; जैसे—आकाश का उल्टा पाताल है।

(क) विरोध के अर्थ में बहुधा 'विरुद्ध' या 'खिलाफ' प्रयुक्त होते हैं।

(१०) बिना—यह कभी-कभी कृदन्त अव्यय के साथ प्रयुक्त होकर क्रिया-विशेषण होता है; जैसे—बिना किसी व्यक्ति का पता पूछे हुए। बिना यह बात सोचे हुए।

कभी-कभी 'बिना' सम्बन्ध कारक की विशेषता प्रकट करता है; जैसे—"आप के वियोग की खबर इस देश में बिना मेघ की वर्षा की भाँति अचानक आ गिरी।' ऐसे प्रयोग में 'बिना' बहुधा सम्बन्धी शब्द के पूर्व प्रयुक्त होता है।

(११) भर, तक, मात्र—जब ये सम्बन्धसूचक की भाँति प्रयुक्त होते हैं, तब बहुधा कालवाचक, स्थानवाचक या परिमाणवाचक शब्दों के साथ आकर उनका सम्बन्ध क्रिया से या दूसरे शब्दों से मिलाते हैं और इनके परे कारक की विभक्ति का प्रयोग नहीं होता; जैसे—वह दिन-भर लिखता है। वह गाँव तक गया। इसमें तिलमात्र शक नहीं है।

(क) 'तक' के अर्थ में कभी-कभी संस्कृत का 'पर्यन्त' शब्द प्रयुक्त होता है; जैसे—अशोक ने अपना राज्य समुद्र पर्यन्त बढ़ाया था।

(ख) 'भर' और 'तक' के योग से संज्ञा का विकृत रूप प्रयुक्त होता है; जैसे—महीने भर, चौमासे तक।

(ग) 'मात्र' के साथ संज्ञा का मूल रूप प्रयुक्त होता है। इसका प्रयोग बहुधा संस्कृत शब्दों के साथ प्रत्यय की भाँति होता है; जैसे—क्षणमात्र, पलमात्र।

(घ) जब 'तक', 'भर' और 'मात्र' क्रिया-विशेषण की भाँति प्रयुक्त होते हैं, तब इनके बाद बहुधा विभक्तियों का प्रयोग होता है; जैसे बाढ़ बाजार भर में। मुख्य मन्त्रियों तक के नाम।

(१२) यहाँ—यह शब्द यथार्थतः क्रिया-विशेषण है; परन्तु बोलने में कहीं-कहीं 'ह्याँ' के रूप में बदल जाता है। दिल्ली वाले इसे बहुधा 'ह्याँ' के रूप में लिखते भी हैं; जसे—तुम्हारे ह्याँ कुछ रकम जमा की गयी थी।

(क) 'यहाँ' का अर्थ 'पास' की भाँति 'अधिकार' भी होता है और कभी-कभी 'पास' और 'यहाँ' का लोप होता है और केवल 'के' से इनके अर्थ का बोध होता है; जैसे—इस आदमी के बहुत धन है। राम के एक लड़का है। उसके कोई बहन भी है।

(१३) सिवा—यह अपभ्रंश रूप में 'सिवाय' भी लिखा जाता है। साधारण अर्थ के सिवा यह कई अपूर्ण उक्तियों की पूर्ति के लिए भी प्रयुक्त होता है; जैसे—'इन भाटों की बनायी हुई वंशावली की कदर इससे बखूबी मालूम हो जाती है। सिवाय इसके जो कभी कोई ग्रन्थ लिखा भी गया, (तो) छापे की विद्या मालूम न होने के कारण वह काल पा के अशुद्ध हो गया।'

(क) निषेधवाचक वाक्य में यह 'छोड़कर' या 'बिना' के अर्थ में प्रयुक्त होता है; जैसे—राम के सिवा यहाँ कोई नहीं आया था।

(१४) साथ—यह कभी-कभी 'सिवा' के अर्थ में प्रयुक्त होता है; जैसे—इन बातों से सूचित होता है कि कालिदास ईसवी सन् के तीसरे शतक के पहले के नहीं हैं। इसके साथ ही यह भी सूचित होता है कि वे ईसवी सन के पाँचवें शतक के बाद के भी नहीं हैं।

(१५) **अनुसार, अनुरूप, अनुकूल**—ये शब्द स्वरादि हैं, इसलिए कभी-कभी पूर्ववर्ती संस्कृत शब्दों के साथ सन्धि के नियमों से संयुक्त हो जाते हैं और इनके पूर्व 'के' विभक्ति का लोप हो जाता है; जैसे—आदेशानुसार, इच्छानुकूल, इच्छानुरूप आदि। ऐसे शब्द संयुक्त सम्बन्धसूचक माने जाते हैं। इसके पूर्व समास के लिंग के अनुसार सम्बन्ध कारक की विभक्ति प्रयुक्त होती है; जैसे—पिता के आदेशानुसार। कई लेखक 'इच्छानुसार', 'आज्ञानुसार' के पूर्व 'की' विभक्ति का प्रयोग करते हैं; लेकिन ऐसा करना उचित नहीं है।

(क) 'अनुकूल' और 'अनुरूप' प्रायः समानार्थक शब्द हैं।

(१६) सदृश, समान, तुल्य, योग्य—ये शब्द विशेषण हैं और सम्बन्ध-सूचक की भाँति प्रयुक्त होकर भी संज्ञा की विशेषता प्रकट करते हैं; जैसे—मुकुट के योग्य सिर पर तृण क्यों है? यह लड़का उस लड़के के तुल्य है। उसकी मनोदशा पागल के सदृश हो रही है।

(१७) सरीखा—इसके लिंग और वचन विशेष्य के अनुसार विकृत होते हैं और इसके पहले विभक्ति का प्रयोग बहुधा नहीं होता; जैसे—मुझ सरीखे लोग।

(क) 'सरीखा' शब्द 'सदृश' या 'समान' का पर्यायवाची है।

(१८) ऐसा, जैसा, सा—ये शब्द 'सरीखा' के समानार्थक हैं। आजकल 'सरीखा' का प्रयोग कम होता है और उसकी जगह 'जैसा' का प्रयोग होने लगा है। जिस प्रकार 'सरीखा' संज्ञा के लिंग और वचन के अनुसार विकृत होता है उसी प्रकार 'जैसा', 'ऐसा' और 'सा' भी विशेष्य के लिंग और वचन के अनुसार विकृत होते हैं और विशेषण तथा सम्बन्धसूचक दोनों रूपों में प्रयुक्त होते हैं।

(क) ऐसा—यह बहुधा संज्ञा के विकृत रूप के साथ प्रयुक्त होता है। आजकल इसका प्रयोग कम होता है। भारतेन्दुकालीन गद्य में इसके उदाहरण मिलते हैं; जैसे—

'आचार्य जी पागल ऐसे हो गये हैं।' 'विशेष करके आप ऐसे।' 'कश्मीर ऐसे एकाध इलाके का।'

(ख) जैसा—इसका प्रयोग आजकल अधिकतर होता है। यह विभक्ति-सहित और विभक्ति-रहित दोनों रूपों में प्रयुक्त होता है; जैसे—(१) पहले शतक में कालिदास के ग्रन्थों की जैसी परिमार्जित संस्कृत का प्रचार ही नहीं था।

(२) 'बीजगणित—जैसे क्लिष्ट विषय को समझाने की चेष्टा की गयी है।'

इन दोनों प्रयोगों में भेद यह है कि प्रथम वाक्य में प्रयुक्त 'जैसी' शब्द 'ग्रन्थों' और 'संस्कृत' का सम्बन्ध सूचित नहीं करता, परन्तु 'की' के बाद लुप्त 'संस्कृत' और शब्द का सम्बन्ध दूसरे 'संस्कृत' शब्द से सूचित करता है। द्वितीय वाक्य में युक्त 'बीजगणित' का सम्बन्ध 'विषय' के साथ सूचित होता है; इसलिए वहाँ सम्बन्ध कारक की आवश्यकता नहीं है।

(ग) सा—यह 'जैसा' की भाँति दो प्रकारों से प्रयुक्त होता है और दोनों प्रकारों में वैसा ही अर्थ-भेद है; जैसे—आकार पहाड़-सा और बल राक्षस का-सा है। इस वाक्य में आकार को पहाड़ की उपमा दी गयी है; इसलिए 'सा' के पूर्व 'का' विभक्ति प्रयुक्त नहीं हुई परन्तु दूसरा 'सा' अपने पूर्व लुप्त

बल का सम्बन्ध पहले कहे हुए 'बल' से मिलाता है, इसलिए 'सा' के पूर्व 'का' विभक्ति के प्रयोग की आवश्यकता हुई है। 'हाथी-सा बल' कहना असंगत है। कभी-कभी यह हीनता के अर्थ में संज्ञा के साथ प्रयुक्त होता है; जैसे—आसमान से एक ज्योति-सी उतरी आती है। रमणी ने मुख पर घूँघट-सा डाल रखा है।

अभ्यास

(१) सम्बन्धवाचक किसे कहते हैं ?

(२) पाँच सम्बन्धवाचकों का प्रयोग करें।

(३) सम्बन्धवाचक के कितने भेद हैं ? प्रत्येक का उदाहरण लिखें।

—::०::—

समुच्चयबोधक

जो अव्यय क्रिया की विशेषता नहीं बतलाता वरन् एक वाक्य का सम्बन्ध दूसरे वाक्य से मिलाता है उसे समुच्चयबोधक कहते हैं; बादल गरजा और मयूर नाचा। यहाँ 'और' समुच्चयबोधक है क्योंकि यह पूर्व वाक्य का सम्बन्ध उत्तरवाक्य से स्थापित करता है। कभी-कभी समुच्चयवाचक जिन वाक्यों को जोड़ता है, वे वाक्य पूर्णतः स्पष्ट नहीं होते; जैसे—डाक्टर सुरेन्द्र और डाक्टर श्री ब्रजेश पटना के निवासी हैं। इस प्रकार के वाक्य देखने में एक-से ही प्रतीत होते हैं; परन्तु दोनों वाक्यों में चूँकि विधेय एक है, इसलिए संक्षेप के लिए इसका प्रयोग एक ही बार किया गया है। ये दोनों वाक्य स्पष्ट रूप से यों लिखे जायेंगे—

(१) डाक्टर सुरेन्द्र पटना के निवासी हैं और (२) डाक्टर ब्रजेश पटना के निवासी हैं। इसलिए यहाँ 'और' दो वाक्यों को जोड़ता है। एक और उदाहरण लें—यदि वर्षा होगी तो नदियों में बाढ़ होगी। इस वाक्य में 'यदि' और 'तो' दो वाक्यों को जोड़ते हैं।

समुच्चयबोधक अव्ययों के प्रधानतः दो भेद हैं—

(१) सामानाधिकरण और (२) व्यधिकरण।

जो अव्यय प्रधान वाक्य को मिलाता है, उसे सामानाधिकरण समुच्चयबोधक कहते हैं। इसके चार उपभेद हैं—

(क) संयोजक; जैसे—और, व, तथा, एवं, भी।

संयोजक अव्ययों के द्वारा दो या अधिक मुख्य वाक्यों का संग्रह होता है; जैसे—श्री मंगल देव शर्मा कलकत्ता में वास करते हैं और श्री सुधाकर द्विवेदी नवराष्ट्र कार्यालय, पटना में सम्पादन-कार्य करते हैं।

व—यह उर्दू शब्द 'और' का समानार्थक है। इसका प्रयोग शिष्ट नहीं माना जाता क्योंकि यह वाक्यों के मध्य में कठिनाई से उच्चरित होता है। इस 'व' में और संस्कृत 'वा' में, जिसका अर्थ 'व' का उल्टा है, बहुधा भ्रम हो जाता है। 'व' का प्रयोग कुछ उर्दू सामाजिक शब्दों में होता है और उनमें भी यह उच्चारण की सुगमता के लिए सन्धि के अनुसार पूर्व शब्द में मिलाया जाता है; जैसे—नामो-निशान, आवोहवा, जानोमाल आदि। इस प्रकार के शब्दों को भी हिन्दी समास के अनुसार बहुधा 'नाम-निशान', 'आव-हवा', 'जान-माल' आदि के रूप में लिखा और बोला जाता है।

तथा—यह संस्कृत सम्बन्ध-वाचक क्रिया-विशेषण 'यथा' जैसे—का नित्य-सम्बन्धी है और इसका अर्थ 'वैसे' है। इस अर्थ में यह कभी-कभी कविता में प्रयुक्त होता है; जसे—

'रह गयी अति विस्मित-सी तथा
चकित चंचल चारु मृगी यथा।'

गद्य में 'तथा' का प्रयोग 'और' के अर्थ में होता है; जैसे—जंगल में छोटे से छोटे तथा बड़े से बड़े वृक्ष होते हैं। 'तथा' का अधिकतर प्रयोग 'और' शब्द की द्विरुक्ति के निवारणार्थ होता हैं; जैसे—जिन बातों के बारे में हमने लिखा था, उनकी यहाँ चर्चा नहीं होती और नेताओं के भाषण के बारे में सदा बहस होती है तथा अपने हित के बारे में तनिक भी सोचा नहीं जाता।

और—इस शब्द के प्रयोग सर्वनाम; विशेषण और क्रिया-विशेषण के रूप में बतलाये जा चुके हैं। समुच्चयबोधक के रूप में साधारण अर्थ के सिवा यह निम्नलिखित विशेष अर्थों में प्रयुक्त होता है—

(१) दो क्रियाओं की समकालीन घटना; जैसे—बादल गरजा और बिजली चमकी।

(२) दो विषयों का नित्य-सम्बन्ध; जैसे—मैं हूँ और वह है (= मैं उसका साथ नहीं छोड़ूँगा)।

(३) धमकी या तिरस्कार; जैसे—फिर मैं हूँ और तुम हो (= मैं तुम से खूब समझूँगा)।

एवं— 'तथा' की भाँति इसका भी अर्थ 'वैसा' या 'ऐसा' है; परन्तु यह हिन्दी में 'और' का पर्यायवाची है; जैसे—यह फूल सुन्दर एवं सुगन्धित है।

भी—यह पहले वाच्य से कुछ सादृश्य मिलाने के लिए प्रयुक्त होता है।

(क) कभी-कभी यह, दूसरे वाक्य के बिना, केवल पहली कथा से सम्बन्ध मिलता है; जैसे—अब मैं भी तुम्हारे पिता की अवस्था के बारे में जानना चाहता हूँ।

(ख) कभी-कभी 'भी' का प्रयोग अवधारणा बोधक प्रत्यय 'ही' के समान अर्थ में होता है; जैसे—

(१) एक भी विद्यार्थी नहीं है।

(२) इस कार्य को कोई भी कर सकता है।

(ग) कभी-कभी 'भी' के प्रयोग से आग्रह की सूचना मिलती है; जैसे—खाओ भी। तुम वहाँ सोओगे भी।

इस अर्थ में 'भी' बहुधा 'ही' की भाँति क्रिया-विशेषण होता है।

(ख) विभाजक; जैसे— या, वा, अथवा, किंवा, कि, या-या, चाहे-चाहे, क्या-क्या, या-या, न-न, न कि, नहीं तो।

इन अव्ययों के प्रयोग से दो या अधिक वाक्यों या शब्दों में से किसी एक का ग्रहण या दोनों का त्याग होता है।

(१) या, वा अथवा, किंवा—ये चारों शब्द प्रायः समानार्थक हैं। 'या' उर्दू का शब्द है और शेष तीनों संस्कृत के शब्द हैं। 'अथवा' और 'किंवा' में प्रत्ययों के साथ 'वा' संयुक्त है। पहले तीन शब्दों का एक साथ प्रयोग द्विरुक्ति के निवारणार्थ होता है; जैसे—किसी ग्रन्थ की अथवा किसी ग्रन्थकार की या किसी प्रकाशक की यह बात नहीं है।

(क) 'या' और 'वा' कभी-कभी पर्यायवाची शब्दों को मिलाते हैं; जैसे—धर्मनिष्ठा या धार्मिक विश्वास।

(ख) किंवा का प्रयोग बहुधा कविताओं में होता है; जैसे—

(१) 'नृप अभिमान मोह बस किंवा'

(२) 'वे हैं नरक के दूत किंवा सूत हैं कलिराज के।'

(२) कि—यह विभाजन 'कि' उद्देश्य वाचक और स्वरूप वाचक 'कि' से भिन्न है। इसका अर्थ 'या' के समान है, परन्तु यह बहुधा कविताओं में प्रयुक्त होता है; जैसे—

(१) 'रखिहहिं भवन कि लैहहिं साथा।'

(२) 'कज्जल के कूट पर दीप शिखा सोती है कि
श्याम घन मण्डल में दामिनी की धारा है।'

(३) या-या—ये शब्द जोड़े से प्रयुक्त होते हैं और सिर्फ 'या' की अपेक्षा विभाग का अधिक निश्चय सूचित करते हैं; जैसे—या तो मैं अपने प्रयत्न में सफल होऊँगा या मैं मर जाऊँगा। कभी-कभी इनसे 'कहाँ-कहाँ' के समान 'महत् अन्तर' का बोध होता है; जैसे—'या वह रौनक होगी या सुनसान हो जायगा।' कविताओं में 'या-या' के अर्थ में 'कि-कि' प्रयुक्त होते हैं। जैसे—

'कि तनु प्रान कि केवल प्राना।

कानूनी हिन्दी में प्रथम 'या' के स्थान पर 'आया' (चाहे) प्रयुक्त होता है; जैसे—आया मर्द या औरत। 'आया' भी उर्दू का शब्द है। प्रायः इसी अर्थ में 'चाहे-चाहे' प्रयुक्त होते हैं; जैसे—वह चाहे मुंगेर जाय, चाहे पटना जाय। ये शब्द 'चाहना' क्रिया से बने हुए अव्यय हैं।

(४) क्या-क्या—ये प्रश्नवाचक सर्वनाम समुच्चयबोधक की भाँति प्रयुक्त होते हैं। इनके प्रयोग में यह विशेषता है कि ये वाक्य में दो या अधिक शब्दों को विभाजित कर उन सबको सम्मिलित रूप से उल्लिखत करते हैं; जैसे—क्या मनुष्य, क्या जीव-जन्तु, मैंने अपना सारा जीवन इन्हीं की भलाई में व्यतीत किया है। क्या स्त्री, क्या पुरुष, क्या बालक, क्या बूढ़े, सबके ही मन में यह भावना थी।

(५) न-न—ये दुहरे क्रिया-विशेषण समुच्चयबोधक के रूप में प्रयुक्त होते हैं। इनसे दो या अधिक शब्दों में से प्रत्येक का त्याग सूचित होता है; जैसे—न उन्हें भूख लगती है न प्यास लगती है। कभी-कभी इनसे अशक्यता की सूचना मिलती है; जैसे—न वे अपने कार्यों से छुट्टी पायेंगे न वहाँ जायेंगे। न नौ मन तेल होगा न राधा नाचेगी। कभी-कभी इनका प्रयोग कार्य-कारण बोध कराने में होता है; न यह घटना घटती न वह कार्य होता। न भूकम्प होता न दीवार गिरती।

(६) न कि—यह 'न' और 'कि' से मिलकर बना है। इससे बहुधा दो बातों में से दूसरी का निषेध सूचित होता है; जैसे—वह यहाँ पढ़ने के लिए आया है न कि पेट पालने के लिए।

(७) नहीं तो—यह संयुक्त क्रिया-विशेषण है और समुच्चयबोधक के रूप में आता है। इससे किसी बात के त्याग का परिणाम सूचित होता है; जैसे—भिखारी ने अपने शरीर को चिथड़ों में लपेट लिया है नहीं तो इस जाड़े की रात में वह मर जाता।

(ग) विरोधदर्शक; जैसे—पर, परन्तु, किन्तु, लेकिन, मगर, वरन्, बल्कि। ये अव्यय दो वाक्यों में से पहले का निषेध या परिमिति का बोध कराते हैं।

'पर' ठेठ हिन्दी का शब्द है। 'परन्तु' और 'किन्तु' संस्कृत शब्द हैं। 'लेकिन' और 'मगर' उर्दू शब्द है। ये सभी शब्द समानार्थक हैं, 'मगर' का प्रयोग हिन्दी में कम होता है।

किन्तु, वरन्—ये शब्द भी प्रायः समानार्थक हैं और बहुधा निषेधवाचक वाक्यों के बाद प्रयुक्त होते हैं; जैसे—

(१) वासनाओं की प्रबलता के कारण मानव दुराचार नहीं करता, किन्तु अन्तःकरण की दुर्बलता के कारण वह ऐसा करता है।

(२) मैं केवल बुनकर नहीं हूँ किन्तु राष्ट्रभाषा का कवि भी हूँ।

(३) इस शक का इतने काल बीतने पर यथोचित समाधान करना मुश्किल है, वरन् बड़े-बड़े विद्वानों का मत भी इसके बारे में भिन्न है।

'वरन्' का समानार्थक संस्कृत शब्द 'वरञ्च' है और उर्दू शब्द 'बल्कि' है। इनके समानार्थक 'प्रत्युत', (संस्कृत) का प्रयोग भी आजकल हुआ करता है।

(च) परिणामदर्शक; जैसे—इसलिए, सो, अतः, अतएव। इन अव्ययों से यह ज्ञात होता है कि इनके आगे के वाक्य का अर्थ पिछले वाक्य के अर्थ का परिणाम है; जैसे—दस बजे वर्षा होने लगी थी, इसलिए गोपाल स्कूल नहीं जा सका। इस उदाहरण में 'दस बजे वर्षा होने लगी थी' यह वाक्य कारण बतलाता है और 'गोपाल स्कूल नहीं जा सका' यह वाक्यं परिणाम सूचित करता है; इस कारण 'इसलिए' परिणाम दर्शक समुच्चयबोधक।

इसलिए—यह मौलिक समुच्चयबोधक नहीं है, वरन् 'इस' और 'लिए' के मेल से बना है तथा समुच्चयबोधक एवं क्रिया-विशेषण के रूप में प्रयुक्त होता है। इसकी जगह कभी-कभी 'इससे', 'इस वास्ते' या 'इस कारण' भी प्रयुक्त होते हैं। अवधारण में 'इसलिए' का रूप 'इसीलिए' होता है।

अतः, अतएव—ये संस्कृत के शब्द हैं और 'इसलिए' के समानार्थक शब्द हैं जो उच्च हिन्दी में प्रयुक्त होते हैं।

सो—यह निश्चयवाचक सर्वनाम 'इसलिए' के अर्थ में प्रयुक्त होता है, परन्तु इसका अर्थ कभी-कभी 'तब' या 'परन्तु' भी होता है; जैसे—वह स्कूल से बहुत दूर चला गया था सो वह बड़ी कठिनाई से ऊपर पहुँच सका। कंस ने अवश्य यशोदा की कन्या के प्राण लिये थे, सो वह असुर था।

कानूनी हिन्दी में 'इसलिए' की जगह 'लिहाजा' प्रयुक्त होता है।

(२) जिन अव्ययों के योग से एक मुख्य वाक्य में एक या अधिक आश्रित वाक्य जोड़े जाते हैं, वे व्यधिकरण समुच्चयबोधक कहलाते हैं। इनके चार उपभेद हैं :—

(क) करणवाचक; जैसे—क्योंकि, जो कि, इसलिए कि, इन अव्ययों से जो वाक्य आरम्भ होता है वह वाक्य का समर्थन करता है अर्थात् पूर्व वाक्य के अर्थ का कारण उत्तर वाक्य के अर्थ से ज्ञात होता है; जैसे—कालिदास के 'मेघदूत' का काव्यात्मक रूपान्तर मैंने नहीं किया क्योंकि मैं संस्कृत नहीं जानता। इस उदाहरण में उत्तर वाक्य पूर्व वाक्य का कारण सूचित करता है, इसलिए 'क्योंकि' शब्द कारणवाचक है।

'क्योंकि' के स्थान पर कभी-कभी 'कारण' शब्द प्रयुक्त होकर समुच्चयबोधक का काम करता है। कभी-कभी कारण के अर्थ में परिणामबोधक 'इसलिए' प्रयुक्त होता है और इस स्थिति में इसके साथ बहुधा 'कि' भी प्रयुक्त होता है, जैसे—

"दुष्यन्त –क्यों माढव्य, तुम लाठी से क्यों बुरा कहा चाहते हो ?

माढव्य—इसलिए कि मेरा अंग तो टेढा है और यह सीधी बनी है।"

पूर्ववाक्य में कभी-कभी 'इसलिए' क्रियाविशेषण की भाँति प्रयुक्त होता है और उत्तर वाक्य का आरम्भ समुच्चयबोधक 'कि' से होता है, जैसे—यह घटना केवल इसलिए सत्य नहीं है कि यह इतिहास के पृष्ठों में स्वर्णाक्षरों में अंकित है। मैंने आपका ध्यान इस ओर इसलिए आकृष्ट किया था कि इससे आपको लाभ होगा।

जो कि— यह शब्द उर्दू 'चूँकि' की जगह कानूनी भाषा में कारण सूचित करने के लिए प्रयुक्त होता है; जैसे—'जो कि यह अमर करीन मस्लहत है··· इसलिए नीचे लिखे मुताबिक हुक्म होता है।'

(ख) उद्देश्यवाचक; जैसे—कि, जो, ताकि, इसलिए—कि। इन अव्ययों के बाद आनेवाला वाक्य दूसरे वाक्य का उद्देश्य या हेतु सूचित करता है। उद्देश्यवाचक वाक्य बहुधा मुख्य वाक्य के बाद आता है और कभी-कभी उसके पहले भी आता है; जैसे—

(१) मछुआ मछलियों को मारने के लिए रात-दिन मेहनत करता है इसलिए कि उसको अधिक मूल्य मिल सके।

(२) मैं तुम्हें भागलपुर भेजना चाहता हूँ कि तुम इस बात को उन्हें सूचित कर दो।

(३) क्या किया जाय जो ग्रामवासियों की प्राण-रक्षा हो सके ?

(४) राम ने किताब बेचनेवालों को जो पुस्तकें दीं, उन पुस्तकों की प्राप्ति का हस्ताक्षर उनसे करवा लिया ताकि भविष्य में किसी प्रकार की कठिनाई न हो।

जब उद्देश्यवाचक वाक्य मुख्य वाक्य के पूर्व आता है तब उसके साथ कोई समुच्चयबोधक नहीं होता, परन्तु मुख्य वाक्य का आरम्भ 'इसलिए' से होता है; जैसे—परीक्षार्थियों को लिखने में किसी प्रकार की दिक्कत न हो इसलिए जूते यहीं खोल दीजिए।

कभी-कभी मुख्य वाक्य 'इसलिए' के साथ पहले आता है और उद्देश्य-वाचक वाक्य का आरम्भ 'कि' से होता है, जैसे—इस घटना की चर्चा मैंने इसलिए की है कि इसकी सारी जानकारी औरों को हो जाय।

'जो' की जगह कभी-कभी 'जिसमें' या 'जिससे' प्रयुक्त होता है, जैसे—धीरे-धीरे जाओ जिससे तुम्हारा अंग-प्रत्यंग वर्षा से न भींगे। यह आलोचना इसलिए लिखी गयी है, जिसमें पाठक इस पुस्तक के गुणदोषों की पूरी जानकारी हासिल कर लें।

(ग) संकेतवाचक, जैसे—जो—तो, यदि—तो, यद्यपि—तथापि (ता भी), चाहे—परन्तु।

ये शब्द, सम्बन्धवाचक और नित्य-सम्बन्धी सर्वनामों की भाँति जोड़े से प्रयुक्त होते हैं। इन शब्दों के द्वारा जो वाक्य जोड़े जाते हैं, उनमें से एक में 'जो', 'यदि', 'यद्यपि' या 'चाहे' का प्रयोग होता है और दूसरे वाक्य में क्रमशः 'तो', 'तथापि' (तो भी) या 'परन्तु' का प्रयोग होता है। पहले को पूर्व वाक्य कहते हैं और दूसरे को उत्तर वाक्य कहते हैं। उपर्युक्त अव्यय संकेतवाचक इसलिए कहलाते हैं चूँकि पूर्व वाक्य में जिस घटना का वर्णन होता है, उससे उत्तर वाक्य की घटना का संकेत मिलता है।

जो-तो—जब पूर्ववाक्य में कही हुई शर्त्त पर उत्तर वाक्य की घटना निर्भर होती है तब इन शब्दों का प्रयोग होता है। 'यदि—तो' शब्दों का प्रयोग भी इसी अर्थ में होता है। 'जो' का प्रयोग साधारण भाषा में होता है और 'यदि' का प्रयोग सुष्ठु या पुस्तकीय भाषा में होता है; जैसे—(१) 'जो तू अपने मन से सच्ची है तो पति के घर में दासी होकर भी रहना अच्छा है।'

(२) 'यदि ईश्वरेच्छा से वह यही ब्राह्मण हो तो बड़ी अच्छी बात है।' कभी-कभी 'जो' से आतंक का बोध होता है, जैसे—

(१) 'जो मैं राम तो कुल सहित. कहहि दसानन जाय।'

(२) 'जो हरिश्चन्द्र को तेजोभ्रष्ट न किया तो मेरा नाम विश्वामित्र नहीं।'

अवधारण में 'तो' के स्थान पर 'तो भी' प्रयुक्त होता है, जैसे—जो वह ऐसा कहता तो भी मैं रुपये नहीं देता।

'जो' का प्रयोग कभी-कभी 'जब' के अर्थ में होता है— 'जो स्नेह ही न रहा तो अब सुधि दिलाये क्या होता है ?'

'जो' की जगह कभी-कभी 'कदाचित्' क्रिया-विशेषण प्रयुक्त होता है; जैसे—'कदाचित् कोई कुछ पूछे तो मेरा नाम बता देना।' कभी-कभी 'जो' के साथ 'तो' की जगह 'सो' समुच्चयबोधक प्रयुक्त होता है; जैसे – 'जो आपने रुपयों के बारे में तकाजा किया है सो अभी उनका प्रबन्ध करना मुश्किल है।'

'यदि' का पर्यायवाची उर्दू शब्द 'अगर' भी हिन्दी में प्रचलित है।

यद्यपि—तथापि—ये शब्द जिन वाक्यों में प्रयुक्त होते हैं उनके निश्चयात्मक विधानों में परस्पर विरोध पाया जाता है; जैसे—यद्यपि वह ग्राम जंगल से दूर था तथापि वहाँ तक बाघ वास करता था।

'तथापि' की जगह कभी-कभी 'परन्तु' प्रयुक्त होता है और बहुधा 'तो भी' प्रयुक्त होता है; जैसे—

(१) यद्यपि हम वनवासी हैं तो भी लोक के व्यवहारों को भली-भाँति जानते हैं।

(२) यद्यपि गुरु ने मुझे ऐसा करने का आदेश किया है परन्तु यह पापकर्म है।

चाहे-परन्तु— जब 'यद्यपि' के अर्थ में कुछ शक रहता है तब इसकी जगह 'चाहे' प्रयुक्त होता है; जैसे—उसने चाहे अरविन्द से यह बात न कही हो परन्तु मैंने यही बात समझी थी।

'चाहे' बहुधा सम्बन्धवाचक सर्वनाम विशेषण या क्रियाविशेषण के साथ प्रयुक्त होकर उसकी विशेषता प्रकट करता है और प्रयोग के अनुसार बहुधा क्रिया-विशेषण होता है; जैसे—

(१) 'यहाँ चाहे जो कह लो; परन्तु अदालत में तुम्हारी गीदड़ भभकी नहीं चल सकती।'

(२) मनुष्य बुद्धि-विषयक ज्ञान में चाहे जितना पारंगत हो जाय, परन्तु वह मृत्यु पर विजय नहीं पा सकता।

(घ) स्वरूपवाचक जैसे—कि, जो, यानि मानो। इन अव्ययों के द्वारा जुड़े हुए शब्दों या वाक्यों में से पहले शब्द या वाच्य का स्वरूप या स्पष्टीकरण पिछले शब्द या वाक्य से ज्ञात होता है; इसलिए ये अव्यय स्वरूपवाचक कहलाते हैं।

कि—जब यह अव्यय स्वरूपवाचक होता है तब इससे किसी बात का केवल आरम्भ या प्रस्तावना का बोध होता है; जैसे—श्री शुकदेव मुनि बोले कि महाराज, अब आगे की कथा सुनिये।' 'मैं सोचता हूँ कि आपसे इसके बारे में कुछ पूछूँ।'

'बात यह है कि नीति की परिभाषा देश, काल और पात्र के अनुसार बदलती रहती है।'

जब आश्रित वाक्य मुख्य वाक्य के पहले आता है तब 'कि' लुप्त होता है, परन्तु मुख्य वाक्य में आश्रित वाक्य का कोई समानाधिकरण शब्द प्रयुक्त होता है; जैसे—आत्मा का निवास-स्थान प्रत्येक प्राणी का शरीर है, 'यह' सन्तों का मत है। अणुबम कैसे बनता है, 'यह' बहुत राष्ट्रों को ज्ञात तक नहीं है।

जो—यह स्वरूपवाचक 'कि' का समानार्थक है; परन्तु उसकी अपेक्षा अब प्रयोग में कम आता है। 'प्रेम सागर' नामक ग्रन्थ में यह कई जगह प्रयुक्त हुआ है; जैसे—

(१) 'यही विचारो जो मथुरा और वृन्दावन में अन्तर ही क्या है?

(२) 'उसने बड़ी भारी चूक की जो उसने तेरा पत्र कृष्ण को दिया!'

कभी-कभी मुख्य वाक्य में 'ऐसा', 'यहाँ तक' अथवा कोई विशेषण आता है और उसका स्वरूप या परिणाम स्पष्ट करने के लिए 'कि' के बाद आश्रित वाक्य आता है; जैसे—

(१) 'क्या और देशों में इतनी सर्दी पड़ती है कि पानी जमकर पत्थर की चट्टान की नाई हो जाता है?'

(२) 'कैसी छलांग भरी है कि धरती से ऊपर ही दिखाई देता है।'

(३) 'कुछ लोगों ने आदमियों के विश्वास को यहाँ तक प्रभावित कर दिया है कि वे अपने मनोविकारों को तर्क-शास्त्र के प्रमाणों से भी अधिक बलवान् मानते हैं।'

(४) 'काल-चक्र' बड़ा प्रबल है कि किसी को एक ही अवस्था में नहीं रहने देता।

कभी-कभी 'यहाँ तक' और 'कि' साथ-साथ प्रयुक्त होते हैं और केवल वाक्यों को जहाँ, वरन् शब्दों को भी जोड़ते हैं; जैसे—

(१) 'बहुत आदमी उन्हें सच मानने लगते हैं; यहाँ तक कि कुछ दिनों में वे सर्वसम्मत हो जाते हैं।

(२) 'क्या यह भी सम्भव है कि एक वाक्य के पद-के-पद यहाँ तक कि प्रायः श्लोकार्द्ध तद्वत् दूसरे के दिमाग से निकल पड़ें ?'

इन उदाहरणों में 'यहाँ तक कि' समुच्चयबोधक वाक्यांश है।

'अर्थात्'—यह संस्कृत की विभक्त्यन्त संज्ञा है, पर हिन्दी में इसका प्रयोग समुच्चयबोधक की भाँति होता है। यह अव्यय किसी शब्द या वाक्य का अर्थ समझाने में प्रयुक्त होता है; जैसे—इनमें परस्पर जातीय भाव है अर्थात् ये एक दूसरे से भिन्न नहीं हैं।

कभी-कभी 'अर्थात्' के स्थान पर 'अथवा', 'वा', 'या' और 'यानी' (उर्दू) का प्रयोग होता है ?

मानो—यह उत्प्रेक्षा में प्रयुक्त होता है; जैसे—यह युवक ऐसा सुन्दर लगता है मानो साक्षात् काम खड़ा है।

'मुझे डूबना नहीं है जो तेरा पक्ष ग्रहण करूँ।' यहाँ 'जो' का अर्थ प्रायः 'जिस लिए' है; इस दृष्टि से 'तेरा पक्ष ग्रहण करूँ' उद्देश्यवाचक वाक्य है और 'मुझे डूबना नहीं है' मुख्य वाक्य है।

संस्कृत और उर्दू शब्दों के सिवा हिन्दी के अधिकतर समुच्चयबोधक शब्दों की व्युत्पत्ति दूसरे शब्द-भेदों से है। 'और' सार्वनामिक विशेषण है, 'जो' सम्बन्धवाचक सर्वनाम है और 'सो' निश्चयवाचक सर्वनाम है।

अभ्यास

(१) समुच्चयबोधक किसे कहते हैं ?
(२) पाँच समुच्चयबोधकों का प्रयोग करें।
(३) समुच्चयबोधक के कितने भेद हैं ? उदाहरण सहित लिखें।
(४) नित्य-सम्बन्धी अव्यय किसे कहते हैं ?
(५) पाँच ऐसे वाक्य लिखें जिनमें नित्य-सम्बन्धी अव्यय का प्रयोग हो।

———

विस्मयादिबोधक

जो अव्यय वाक्य से सम्बन्धित नहीं होते और वक्ता के केवल हर्ष-शोकादि भाव का बोध कराते हैं, वे विस्मयादिबोधक अव्यय कहलाते हैं; जैसे—हाय ! अब मैं कहाँ जाऊँ ? अरे ! यह क्या कहते हो ! इन वाक्यों में 'हाय' और 'अरे' क्रमशः दुःख और आश्चर्य के बोधक हैं और जिन वाक्यों में प्रयुक्त हुए हैं, उन वाक्यों से किसी प्रकार से भी सम्बन्धित नहीं हैं।

भिन्न-भिन्न मनोविकारों को सूचित करने के लिये भिन्न-भिन्न विस्मयादिबोधक उपयोग में आते हैं; जैसे—

(१) सम्बोधन द्योतक—अरे ! रे ! अजी ! हे ! हो ! अहो !

(२) स्वीकारबोधक—हाँ ! जी हाँ ! अच्छा ! जी ! ठीक ! बहुत अच्छा !

(३) तिरस्कारबोधक—छिः ! हट ! अरे ! दूर ! धिक्कार ! धिक् ! चुप !

(४) अनुमोदनबोधक—ठीक ! वाह ! अच्छा ! शाबाश ! हाँ-हाँ ! भला !

(५) आश्चर्यबोधक—वाह ! हैं ! ऐं ! अहो ! क्या !

(६) शोकबोधक—आह ! ऊह ! हा-हा ! हाय ! बापरे ! त्राहि-त्राहि ! राम राम !

हर्षबोधक—वाह ! धन्य-धन्य ! शाबाश ! जय ! जयति ! आहा !

सूचना—स्त्रीलिंग के लिए अरे' या 'रे' का रूप 'अरी' या 'री' होता है।

कई संज्ञाएँ, क्रियाएँ, विशेषण और क्रियाविशेषण भी विस्मयादिबोधक होते हैं; जसे—भगवान ! राम ! अच्छा ! लो ! हट ! चुप ! क्यों ! खैर!

कभी-कभी सम्पूर्ण वाक्य का वाक्यांश विस्मयादिबोधक होते हैं; जसे—

(१) 'क्या बात है ! बहुत अच्छा !'

(२) 'धन्य महाराज क्यों न हो ! भगवान न करें !'

उपर्युक्त वाक्यों और वाक्यांशों से मनोविकारों की सूचना मिलती है अवश्य, परन्तु उन्हें विस्मयादिबोधक मानना ठीक नहीं है क्योंकि इनमें जो वाक्यांश हैं, उनके अध्याहृत शब्दों को व्यक्त करने से वाक्य सहज ही बन सकते हैं।

अभ्यास

(१) विस्मयादिबोधक किसे कहते हैं ?

(२) पांच विस्मयादिबोधकों का प्रयोग करें।

———

क्रियाओं का रूपान्तर

क्रिया का उपयोग विधान करने में होता है और विधान करने में काल, रीति, पुरुष, लिंग और वचन की अवस्थाओं का उल्लेख करना आवश्यक होता है। संस्कृत में ये सारी अवस्थाएँ क्रिया के ही रूपान्तर से सूचित होती हैं; परन्तु हिन्दी में इनके लिए बहुधा सहकारी क्रियाओं की आवश्यकता होती है।

क्रिया में वाच्य, काल, अर्थ, पुरुष, लिंग, और वचन के कारण विकार होता है। जिस क्रिया में ये विकार होते हैं और जिसके द्वारा विधान किया जाता है वह समापिका क्रिया कहलाती है; जैसे—सुशील पढ़ता है। इस वाक्य में 'पढ़ता है' समापिका क्रिया है।

(१) वाच्य

क्रिया के उस रूपान्तर को वाच्य कहते हैं, जिससे जाना जाता है कि वाक्य में कर्त्ता या कर्म या भाव के बारे में विधान किया गया है। प्रकारान्तर से कहा जा सकता है कि वाच्य में कर्त्ता, कर्म अथवा भाव का विधान होता है। इसके तीन भेद हैं—(१) कर्त्तृवाच्य, (२) कर्मवाच्य, (३) भाववाच्य।

(१) कर्त्तृवाच्य क्रिया के उस रूपान्तर को कहते हैं जिसमें वाक्य का उद्देश्य क्रिया का कर्त्ता होता है यानी जब कर्त्ता के लिंग और वचन के अनुसार क्रिया होती है तब कर्त्तृवाच्य कहलाती है; जैसे—राम, श्याम और इन्दिरा कुमारी आम खाते हैं। यहाँ 'खाते हैं' क्रिया कर्त्तृवाच्य है।

(२) कर्मवाच्य क्रिया के उस रूपान्तर को कहते हैं जिसमें वाक्य का उद्देश्य क्रिया का कर्म होता है यानी जब कर्म के लिंग और वचन के अनुसार क्रिया होती है तब कर्मवाच्य कहलाती है; जैसे—राम, श्याम और इन्दिरा कुमारी से पुस्तकें पढ़ी जाती हैं। यहाँ 'पढ़ी जाती हैं' क्रिया कर्मवाच्य है क्योंकि कर्म 'पुस्तकें' के लिंग और वचन के अनुसार क्रिया है।

(३) भाववाच्य क्रिया के उस रूपान्तर को कहते हैं, जिसमें वाक्य का उद्देश्य क्रिया का न कर्त्ता होता है न कर्म होता है वरन् भाव होता है यानी कर्त्ता या कर्म के लिंग और वचन के अनुसार क्रिया नहीं होती वरन् सदा एकवचन,

पुल्लिग और अन्यपुरुष में होती है; जैसे—इन्दिरा कुमारी ने राम को बुलाया। यहाँ 'बुलाया' क्रिया न कर्त्ता के लिंग और वचन के अनुसार वरन् एकवचन, पुल्लिग और अन्यपुरुष में है, इसलिए भाववाच्य है।

यहाँ ये नियम द्रष्टव्य हैं—

(क) कर्त्तृवाच्य में कर्त्ता और कर्मवाच्य में कर्म का होना जरूरी है क्योंकि उन्हीं के लिंग और वचन के अनुसार क्रिया होती है।

(ख) कर्त्तृवाच्य का कर्त्ता और कर्मवाच्य का कर्म दोनों विभक्ति-रहित होते हैं।

(ग) भाववाच्य के कर्त्ता और कर्म दोनों अपनी विभक्तियों के साथ होते हैं।

(घ) कर्मवाच्य और भाववाच्य के कर्त्ता के साथ 'ने' का प्रयोग होता है। लेकिन 'जा' धातु से युक्त धातुओं के प्रयोग में इस नियम का अपवाद मिलता है; जैसे— खा जा आदि। इन धातुओं के साथ कर्त्ता के साथ 'से' का प्रयोग होता है, जैसे—राम से खाया गया है।

(ङ) भाववाच्य में कर्त्ता के साथ 'से' भी प्रयुक्त होता है; जैसे—उससे गाया नहीं जाता।

(च) कर्मवाच्य क्रिया केवल सकर्मक होती है किन्तु कर्त्तृवाच्य और भाववाच्य क्रियाएँ अकर्मक और सकर्मक दोनों होती हैं।

टिप्पणी—कर्मवाच्य की जगह बहुधा ये क्रियाएँ प्रमुख होती हैं— (१) गृह बनता है (बनाया जाता है)। भीष्म युद्ध में मरे (मारे गये)। मन खिचता है (खींचा जाता है)।

(२) यह कार्य सुधीर का किया होगा (सुधीर से किया होगा)।

(३) यह घटना मेरी जानी हुई है (मेरे द्वारा जानी गयी है)।

(४) श्रीकृष्ण मिश्र विधान-परिषद् के सदस्य हुए (बनाये गये)।

भाववाच्य क्रिया का प्रयोग बहुधा आवश्यकता के अर्थ में होता है; जैसे—यह कैसे लिखा जायेगा? विपिन से दौड़ा नहीं जाता।

द्विकर्मक क्रिया के कर्मवाच्य में मुख्य कर्म के अनुसार क्रिया होती है और उस पर गौण कर्म के लिंग-वचन का प्रभाव नहीं पड़ता; जैसे—गोपाल को चार आम दिये गये। योगेश्वर को दर्शन पढ़ाया जायगा।

अभ्यास

(१) वाच्य किसे कहते हैं? (२) वाच्य के कितने भेद होते हैं? उदाहरण सहित समझाइये। (३) कलम नहीं चलती। हल नहीं चलता। भोजन पकता है। कपड़े सूखते हैं।—इन वाक्यों में क्रियाओं का वाच्य क्या है? (४) सीता ने रोटियाँ खायीं।—यह किस वाच्य का उदारण है और क्यों? (५) 'से' चिह्न का प्रयोग किस वाच्यवाली क्रिया के कर्त्ता के साथ होता है? (६) वह आम खा गया।—इस वाक्य में क्रिया का वाच्य क्या है? (७) मुझसे चार आम खाये गये।—इसका वाच्य बदलें। (८) कर्त्तृवाच्य के छः उदाहरण दें, जिसमें अकर्मक क्रियाओं का प्रयोग हो।



(२) काल

क्रिया का वह रूपान्तर काल कहलाता है, जिससे क्रिया के व्यापार का समय और उसकी पूर्ण या अपूर्ण अवस्था का बोध होता है; जैसे—सुशील पढ़ता है (वर्त्तमान काल)। अमरेश गेंद खेलेगा (भविष्यत काल)। कमल कुमारी गेंद खेलती थी (भूतकाल)।

हिन्दी में कालों के प्रधानतः तीन भेद हैं—(१) वर्त्तमान काल, (२) भूतकाल और (३) भविष्यत् काल।

क्रिया की पूर्णता या अपूर्णता के विचार से प्रथम दो कालों के दो-दो और भेद होते हैं। भविष्यत् काल में व्यापार की पूर्ण या अपूर्ण अवस्था का बोध कराने के लिए हिन्दी में क्रिया का कोई विशेष रूप नहीं होता, इसलिए इस काल का कोई भेद नहीं होता। क्रिया के जिस रूप से केवल काल का बोध

होना है और व्यापार की पूर्ण या अपूर्ण अवस्था सूचित नहीं होती, उसे काल की सामान्य अवस्था कहते हैं। व्यापार की सामान्य, अपूर्ण और पूर्ण अवस्थाओं के विचार से कालों के जो भेद होते हैं, उनके नाम और उदाहरण ये हैं -

काल	सामान्य	अपूर्ण	पूर्ण
वर्त्तमान	वह आता है	वह आ रहा है	वह आया है
भूत	वह आया	वह आ रहा था	वह आया था
भविष्यत्	वह आयगा	वह आ रहा होगा	× × ×

(१) सामान्य वर्त्तमान काल से सूचित होता है कि व्यापार का आरम्भ बोलने के समय हुआ है; जैसे—सूर्य उगता है। सुधाकर पुस्तक पढ़ता है। पत्र भेजा जाता है।

(२) अपूर्ण वर्त्तमान काल से सूचित होता है कि व्यापार वर्त्तमान काल में हो रहा है; जैसे- सूर्य उग रहा है। पत्र भेजा जा रहा है।

(३) पूर्ण वर्त्तमान काल की क्रिया से सूचित होता है कि व्यापार वर्त्तमान काल में पूर्ण हुआ है; जैसे—सूर्य उगा है, पत्र भेजा गया।

(४) सामान्य भूतकाल की क्रिया से ज्ञात होता है कि व्यापार बोलने या लिखने के पहले हुआ; जैसे—सूर्य उगा, पत्र भेजा गया।

(५) अपूर्ण भूतकाल से जाना जाता है कि व्यापार गत काल में पूर्ण नहीं हुआ, वरन् जारी रहा; जैसे- पत्र भेजा जा रहा था। सूर्य उगता था।

(६) पूर्ण भूतकाल से सूचित होता है कि व्यापार को पूर्ण हुए बहुत काल गुजर चुका; जैसे—पत्र भेजा गया था। सूर्य उगा था।

(७) सामान्य भविष्यत्काल की क्रिया से ज्ञात होता है कि व्यापार का आरंभ होनेवाला है; जैसे—बालक पुस्तक पढ़ेगा। सूर्योदय होगा।

(३) अर्थ

क्रिया के जिस रूप से विधान करने की रीति का ज्ञान होता है उसे अर्थ कहते हैं; जैसे—कमल पढ़ता है (निश्चय)। कमल पढ़े (सम्भावना)। तुम पढ़ो (आज्ञा)। यदि कमल पढ़ता तो अच्छा होता (संकेत)।

हिन्दी में क्रियाओं के प्रधान पाँच अर्थ होते हैं—

(१) निश्चयार्थ, (२) संभावनार्थ, (३) संदेहार्थ, (४) आज्ञार्थ और (५) संकेतार्थ।

(१) क्रिया के जिस रूप से किसी विधान का निश्चय सूचित होता है, उसे निश्चयार्थ कहते हैं; जैसे—(क) मोहन पढ़ता है। (ख) सुधीर पत्र नहीं लाया। (ग) गीताकुमारी किताब पढ़ती रहेगी।

(२) सम्भावनार्थ क्रिया से अनुमान, इच्छा, कर्त्तव्य आदि का ज्ञान होता है, जैसे—कदाचित् वर्षा हो (अनुमान)। उसकी विजय हो (इच्छा)। पिता का कर्त्तव्य है कि पुत्र का यथोचित रीति से पालन करे (कर्त्तव्य)।

(३) संदेहार्थ क्रिया से किसी बात का सन्देह सूचित होता है; जैसे—

(क) गोविन्द पढ़ता होगा। (ख) मुन्ना ने पत्र लिखा होगा।

(४) आज्ञार्थ क्रिया से आज्ञा, उपदेश, निषेध आदि का बोध होता है; जैसे—

(क) तुम पढ़ो। (ख) वह पढ़े। (ग) यहाँ मत रहना। (घ) क्या वह जाय (प्रार्थना)।

(५) संकेतार्थ क्रिया से ऐसी दो घटनाओं की अपेक्षा का बोध होता है, जिनमें कार्य-कारण का सम्बन्ध होता है, जैसे—यदि मेरे पास रुपये होते, तो मैं अपनी पुस्तक कम कीमत पर नहीं बेचता।

अब अर्थों के अनुसार पूर्वोक्त कालों के जो सोलह भेद हैं, उनके नाम और उदाहरण नीचे दिये जा रहे हैं—

निश्चयार्थ	संभावनार्थ	सन्देहार्थ	आज्ञार्थ	संकेतार्थ
(१) सामान्य वर्त्तमान वह गाता है।	(७) संभाव्य वर्तमान वह गाता हो।	(१०) संदिग्ध वर्त्तमान वह गाता होगा।	(१२) प्रत्यक्ष विधि तू गा।	(१४) सामान्य संकेतार्थ वह गाता।
(२) पूर्णवर्त्तमान उसने गाया है।	(८) संभाव्य भूत उसने गाया हो।	(११) संदिग्ध भूत उसने गाया होगा।	(१३) परोक्ष विधि तू गाना।	(१५) अपूर्ण संकेतार्थ वह गाता होता।
(३) सामान्य भूत उसने गाया।	(९) संभाव्य भविष्यत् वह गाये।			(१६) पूर्णसंकेतार्थ वह गाया होता।
(४) अपूर्ण भूत वह गाता था।				
(५) पूर्णभूत उसने गाया था।				
(६) सामान्यभविष्यत् वह गायेगा।				

(४) पुरुष, लिंग और वचन

प्रयोग

हिन्दी क्रियाओं में तीन पुरुष (उत्तम, मध्यम और अन्य), दो लिंग (पुल्लिग और स्त्रीलिंग) तथा दो वचन (एकवचन और बहुवचन) होते हैं; जैसे—

पुल्लिग

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	मैं गाता हूँ।	हम गाते हैं।
मध्यम पुरुष	तू गाता है।	तुम गाते हो।
अन्य पुरुष	वह गाता है।	वे गाते हैं।

स्त्रीलिंग

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	मैं गाती हूँ।	हम गाती हैं।
मध्यम पुरुष	तू गाती है।	तुम गाती हो।
अन्य पुरुष	वह गाती है।	वे गाती हैं।

(१) पुल्लिग एकवचन का प्रत्यय आ, पुल्लिग बहुवचन का प्रत्यय एं स्त्रीलिंग एकवचन का प्रत्यय इ और स्त्रीलिंग बहुवचन का प्रत्यय ई या ईं है।

(२) संभाव्य भविष्यत् और विधिकालों में लिंग के कारण कोई रूपान्तर नहीं होता। स्थिति-दर्शक 'होना' क्रिया के सामान्य वर्त्तमान के रूप में भी लिंग का कोई विकार नहीं होता।

वाक्य में कर्त्ता या कर्म के पुरुष, लिंग और वचन के अनुसार क्रिया का जो अन्वय या अनन्वय होता है, उसे प्रयोग कहते हैं। हिन्दी में तीन प्रयोग होते हैं (१) कर्त्तरि प्रयोग, (२) कर्मणि प्रयोग और (३) भावे प्रयोग।

(१) कर्ता के लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार जिस क्रिया का रूपान्तर होता है, उस क्रिया को कर्त्तरि प्रयोग कहते हैं; जैसे— मैं गाता हूँ। वह गाती है। लड़का कपड़ा सीता है।

(२) जिस क्रिया के पुरुष, लिंग और वचन कर्म के अनुसार होते हैं, उसे कर्मणि प्रयोग कहते हैं; जैसे—मैंने ग्रंथ पढ़ा। लड़की ने पत्र लिखा।

(३) जिस क्रिया के पुरुष, लिंग और वचन, कर्त्ता या कर्म के अनुसार नहीं होते वरन् जो सदा अन्य पुरुष, पुल्लिंग, और एकवचन में होते हैं, उसे भावे प्रयोग कहते हैं जैसे—कमलकुमारी ने सहेलियों को बुलाया। उससे गाया नहीं जाता। सुरेन्द्र को दुर्गापुर भेजा जायगा।

सकर्मक क्रियाओं के भूतकालीन कृदन्त से बने हुए कालों के सिवा कर्तृ-वाच्य के शेष कालों में और सकर्मक क्रियाओं के सब कालों में कर्त्तरि प्रयोग होता है। प्रयोग में कर्त्ता कारक अप्रत्यय होता है।

अपवाद—(१) भूतकालीन कृदन्त से बने हुए कालों में भूलना, बोलना, लाना, बकना, समझना और जानना क्रियाएँ कर्त्तरि प्रयोगों में आती हैं, जैसे—रमेश कुछ न बोला। मैं बहुत बका। 'राम मन भ्रमर न भूला।'

अपवाद—(२) नहाना, छींकना, थूकना और खाँसना क्रियाएँ भूतकालीन कृदन्त से बने हुए कालों में भावे प्रयोग में आती हैं, जैसे—सुरेश ने नहाया है। दिवाकर ने छींका है। विमला ने थूका है।

कर्मणि पयोग दो प्रकार के होते हैं—(१) कर्तृवाच्य कर्मणि प्रयोग और (२) कर्मवाच्य कर्मणि प्रयोग।

(१) 'भूलना' वर्ग की क्रियाओं के अतिरिक्त शेष कर्तृवाच्य सकर्मक क्रियाएँ भूतकालीन कृदन्त से बने कालों में (अप्रत्यय कर्मकारक के साथ) कर्मणि प्रयोग में आती हैं; जैसे—मैंने लिखा। उसने पत्र पढ़ा।

कर्तृवाच्य कर्मणि प्रयोग में कर्त्ताकारक सप्रत्यय होता है।

(२) कर्मवाच्य की सब क्रियाएँ अप्रत्यय कर्मकारक के साथ कर्मणि प्रयोग में आती हैं; जैसे—पत्र भेजा गया। पुस्तकें लिखी गयीं।

भावे प्रयोग के तीन प्रकार होते हैं,—कर्तृवाच्य भावे प्रयोग, कर्मवाच्य भावे प्रयोग और भाववाच्य भावे प्रयोग।

(१) कर्त्तृवाच्य भावे प्रयोग में सकर्मक क्रिया के कर्त्ता और कर्म दोनों सप्रत्यय होते हैं और यदि क्रिया अकर्मक हो तो केवल कर्त्ता सप्रत्यय होता है, जैसे—सीता ने अपनी दासियों को बुलाया। मैंने छींका है।

(२) कर्मवाच्य भावे प्रयोग में कर्म सप्रत्यय होता है और कर्त्ता प्रायः लुप्त होता है; जैसे—उसे पढ़ा जाय। दासी को बुलाया जाय।

(३) भाववाच्य भावे प्रयोग में यदि कर्त्ता की आवश्यकता हो, तो उसे करण कारक में रखा जाता है; जैसे—उससे गाया नहीं जाता। मुझसे उठा नहीं जाता। भाव वाच्य भावे प्रयोग में सदा अकर्मक क्रिया प्रयुक्त होती है।

(५) कृदन्त

क्रिया के जिन रूपों का प्रयोग अन्य शब्द-भेदों की भाँति होता है, उन्हें कृदन्त कहते हैं; जैसे—चलना (संज्ञा), नहाया (विशेषण), नहाकर (क्रिया-विशेषण), मारे, लिए (सम्बन्धसूचक)।

हिन्दी में रूप के अनुसार कृदन्त के दो प्रकार होते हैं—(१) विकारी और (२) अविकारी या अव्यय। विकारी कृदन्त वहुधा संज्ञा या विशेषण की भाँति प्रयुक्त होते हैं और अविकारी या अव्यय कृदन्त वहुधा क्रिया-विशेषण या सम्बन्ध-सूचक की भाँति प्रयुक्त होते हैं।

यहाँ उन कृदन्तों की विवेचना की जाती है, जो काल-रचना और संयुक्त क्रियाओं में प्रयुक्त होते हैं।

(क) विकारी कृदन्त

विकारी कृदन्त के चार प्रकार होते हैं—(१) क्रियार्थक संज्ञा, (२) कर्त्तृवाचक संज्ञा, (३) वर्त्तमानकालीन कृदन्त और (४) भूतकालीन कृदन्त।

(१) धातु के अन्त में 'ना' जोड़कर क्रियार्थक संज्ञा वनायी जाती है। यह संज्ञा और विशेषण दोनों की भाँति प्रयुक्त होती है। क्रियार्थक संज्ञा केवल पुल्लिग और एकवचन में प्रयुक्त होती है। इसकी कारक-रचना सम्बोधन कारक और कर्त्ता कारकों के सिवा शेष कारकों में आकारान्त पुल्लिग तद्भव संज्ञा की भाँति होती है; जैसे—खाने को, खाने में, खाने पर।

(२) क्रियार्थक संज्ञा के विकृत रूप के अन्त में 'वाला' या 'वाली' जोड़ने से कर्तृवाच्य पुल्लिंग या स्त्रीलिंग बनती है; जैसे—खाने वाला, खानेवाली, जानेवाला; अनेवाला आदि। इसका प्रयोग कभी-कभी भविष्यत्कालीन कृदन्त विशेषण की भाँति होता है; जैसे—आज उसका भाई जानेवाला है। आनेवाले नौकर ने यह कहा है।

(३) वर्त्तमानकालीन कृदन्त के अन्त में 'ता' जोड़ने से बनता है; जैसे—खाता, पीता, चलता, गाता आदि। यह बहुधा विशेषण की भाँति प्रयुक्त होता है और इसका रूप बहुधा आकारान्त विशेषण की भाँति विकृति होता है; जैसे—खाता, बालक, चलती गाड़ी, मरता कीड़ा आदि।

जब इसका प्रयोग संज्ञा की भाँति होता है; तब इसकी कारक-रचना आकारान्त पुल्लिंग संज्ञा की भाँति होता है; जैसे—मरता क्या नहीं करता? डूबते को तिनके का सहारा मिला।

(४) भूतकालीन कृदन्त धातु के अन्त में 'आ' जोड़ने से बनता है। इसकी रचना निम्नलिखित नियमों के अनुसार होती है---

(१) यदि धातु के अन्त में 'अ' हो तो 'अ' को 'आ' में बदला जाता है; जैसे—

बोलना	बोला	खोलना	खोला
डरना	डरा	मरना	मरा
चलना	चला	जलना	जला
पहचानना	पहचाना	मानना	माना

(२) यदि धातु के अन्त में 'आ', 'ए', 'ई', या 'ओ' हो तो इनके बाद 'या' जोड़ा जाता है; जैसे—

लाना	लाया	पाना	पाया
खाना	खाया	गाना	गाया
बोना	बोया	खोना	खोया
डुबोना	डुबोया	सीना	सीया

(क) यदि धातु के अन्त में 'ई' हो तो इसे ह्रस्व में भी बदल कर इसके आगे 'या' जोड़ा जाता है; जैसे—

जीना	जिया	पीना	पिया

(ख) यदि धातु के अन्त में 'ऊ' हो तो इसे भी ह्रस्व में बदल कर इसके आगे 'आ' जोड़ा जाता है; जैसे—

चूना	चुआ	छूना	छुआ

(द) निम्नलिखित भूतकालीन कृदन्त अनियमित रूप से बनते हैं; जैसे—

देना	दिया	लेना	लिया
करना	किया	जाना	गया
होना	हुआ	+	+

भूतकालीन कृदन्त का प्रयोग बहुधा विशेषण की भाँति होता है; जैसे—मरा पक्षी, टूटा घर, उठा घर।

वर्त्तमानकालीन और भूतकालीन कृदन्तों के साथ 'हुआ' का प्रयोग होता है और इसमें भी मूल कृदन्तों की भाँति विकार होता है; जैसे दौड़ता हुआ बालक, जाती हुई लड़की, देखी हुई चीज, मरे हुए व्यक्ति। स्त्रीलिंग बहुवचन का प्रत्यय केवल 'हुई' प्रयुक्त होता है; जैसे—गाती हुई लड़कियाँ, उठती हुई आँधियाँ।

भूतकालीन कृदन्त कभी-कभी संज्ञा की भाँति प्रयुक्त होता है; जैसे—मरे को मारना, हाथ का दिया, पिसे को पीसना।

सकर्मक क्रिया से बना हुआ भूतकालीन कृदन्त विशेषण कर्मवाच्य होता है यानी वह कर्म की विशेषता प्रकट करता है; जैसे—किया हुआ काम, लिखा हुआ पत्र। इस अर्थ में इस कृदन्त के साथ 'गया' जोड़ा भी जाता है; जैसे—किया गया काम, लिखा गया पत्र।

जिन भूतकालीन कृदन्तों में 'आ' के पहले 'य' का आगम होता है; उसमें 'ए' और 'ई' प्रत्ययों के पूर्व विकल्प से 'य' का लोप होता है; जैसे—लाये या लाए, लायी या लाई। यदि 'य' प्रत्यय के पूर्व ई, हो तो 'य' लुप्त होता है और 'इ' प्रत्यय पूर्व 'इ' में सन्धि के अनुसार मिल जाता है; जैसे—

पिया	पी	दिया	दी
लिया	ली	किया	की

(ख) कृदन्त अव्यय

कृदन्त अव्यय के चार प्रकार हैं—(१) पूर्वकालीन, (२) तात्कालिक, (३) अपूर्ण क्रियाद्योतक और, (४) पूर्ण क्रियाद्योतक।

(१) पूर्वकालिक कृदन्त अव्यय धातु के रूप में होता है अथवा धातु के अन्त में 'के', 'कर' या 'करके' जोड़ने से बनता है; जैसे—

क्रिया	धातु	पूर्वकालिक कृदन्त
पढ़ना	पढ़	पढ़के, पढ़कर पढ़ करके
सोना	सो	सो के, सो कर, सो करके
दौड़ना	दौड़	दौड़ के, दौड़ कर दौड़ करके
खाना	खा	खा के, खा कर, खा करके

पूर्वकालिक कृदन्त अव्यय से बहुधा मुख्य क्रिया के पूर्व होने वाले व्यापार की समाप्ति का बोध होता है; जैसे--शंकर खाकर स्कूल गया।

(२) वर्त्तमानकालीन कृदन्त को 'ता' में बदलकर उसके आगे 'ही' जोड़ने से तात्कालिक अव्यय कृदन्त बनता है; जैसे—गाते ही, सोते ही। इससे मुख्य क्रिया के साथ होने वाले व्यापार की समाप्ति का बोध होता है; जैसे—उसने आते ही गाना गाया।

(३) अपूर्ण क्रियाद्योतक कृदन्त अव्यय का रूप तात्कालिक कृदन्त अव्यय की भाँति 'ता' को 'ते' में बदलने से बनता है; परन्तु इसके साथ 'ही' नहीं जोड़ा जाता; जैसे—सोते, देखते, रहते, उठते। इससे मुख्य क्रिया के साथ होने-वाले व्यापार की अपूर्णता का बोध होता है; जैसे—उसे घर लौटते रात हो जायगी। मैंने आसमान में चिड़ियों को उड़ते देखा।

"देखा फूलों को खिलते सखि,
फिर देखा मुरझाते भी;
आते देखा जिसे जगत् में,
उसे यहाँ से जाते भी।"

—आरसी प्रसाद सिंह

(४) पूर्ण क्रियाद्योतक कृदन्त अव्यय भूतकालीन कृदन्त विशेषण के अन्त्य 'आ' को 'ए' में बदलने से बनता है; जैसे—किये, गये, बीते, लिये, मारे। इस कृदन्त से बहुधा मुख्य क्रिया के साथ होने वाले व्यापार की पूर्णता का बोध होता है; जैसे—इतनी रात बीते तुम क्यों आये ? उसको शादी हुए कई मास बीते। इस कार्य के लिए हम कमर कसे बैठे हैं। 'लिये' और मारे' कृदन्तों का प्रयोग बहुधा सम्बन्ध-सूचक अव्यय की भाँति होता है।

अपूर्ण क्रियाद्योतक और पूर्ण क्रियाद्योतक कृदन्तों के साथ बहुधा 'होना' क्रिया का पूर्ण क्रियाद्योतक कृदन्त अव्यय 'हुए' जोड़ा जाता है; जैसे—मैंने उसे जाते हुए देखा था। वह नौकर के सिर पर एक पेटी रखवाते हुए आया था।

(६) काल-रचना

क्रिया के वाच्य, अर्थ, काल, पुरुष, लिंग और वचन के कारण होनेवाले सब रूपों का संग्रह करना काल रचना कहलाता है।

रचना के विचार से हिन्दी के सोलह काल तीन वर्गों में विभाजित हैं। प्रथम वर्ग में वे काल हैं जो धातु में प्रत्यय जोड़ने से बनते हैं, दूसरे वर्ग में वे काल हैं जो वर्त्तमानकालीन कृदन्त में बहुधा सहकारी क्रिया "होना" के रूप जोड़ने से बनते हैं और तीसरे वर्ग में वे काल हैं, जो भूतकालीन कृदन्त में सहकारी क्रिया जोड़ने से बनते हैं। इन वर्गों के अनुसार कालों का वर्गीकरण यों होता है—

(क) प्रथम वर्ग

(१) संभाव्य भविष्यत् (२) सामान्य भविष्यत्

(३) प्रत्यक्ष विधि (४) परोक्ष विधि

(ख) द्वितीय वर्ग

(वर्त्तमानकालीन कृदन्त से बने हुए काल)

(१) सामान्य संकेतार्थ (हेतु-हेतु-मद्भूत) (२) सामान्य वर्त्तमान

(३) अपूर्ण भूत (४) संभाव्य वर्त्तमान

(५) संदिग्ध वर्त्तमान (६) अपूर्ण संकेतार्थ

[ग] तृतीय वर्ग

[१] सामान्य भूत	[२] आसन्न भूत [पूर्ण वर्त्तमान]
[३] पूर्णभूत	[४] सम्भाव्य भूत
[५] संदिग्ध भूत	[६] पूर्ण संकेतार्थ

टिप्पणी—इन तीन वर्गों में से पहले वर्ग के चारों काल और सामान्य संकेतार्थ तथा सामान्य भूतकाल केवल प्रत्ययों के योग से बनते हैं; इसलिए ये छः काल साधारण काल कहलाते हैं। शेष दस काल सहकारी क्रिया के योग से बनते हैं; इसलिए वे संयुक्तकाल कहलाते हैं। कतिपय वैयाकरण केवल इन छः कालों को यथार्थ काल मानते हैं और पिछले दस कालों को संयुक्त क्रियाओं में गिनते हैं क्योंकि उन दस कालों की रचना दो क्रियाओं के योग से होती है। परन्तु जिन कालों को संयुक्त काल कहते हैं, वे कृदन्तों के साथ केवल एक सहकारी क्रिया के योग से बनते हैं और उनके संयुक्त क्रियाओं के विशेष अर्थ —अवधारण, शक्ति, आरम्भ, अवकाश आदि सूचित नहीं होते। इसलिए संयुक्त कालों को संयुक्त क्रियाओं से भिन्न मानना चाहिए।

(१) कर्त्तृवाच्य

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पु०	ऊँ	ए
मध्यम पु०	ए	ओ
अन्य पु०	ए	एँ

(क) यदि धातु अकारान्त हो तो उपर्युक्त प्रत्यय 'अ' की जगह प्रयुक्त होते हैं; जैसे—पढ़+ऊँ=पढ़ूँ। कह+ए=कहे। कह+एँ=कहें। कह+ओ=कहो।

(ख) यदि धातु के अन्त में आकार या ओकार हो तो 'ऊँ' और 'ओ' के अतिरिक्त शेष प्रत्ययों के पूर्व विकल्प से 'य' अथवा 'व' का आगम होता है; जैसे—गा से गाये या गावे; ला से लाये या लावे।

ईकारान्त और ऊकारान्त धातुओं का, जब विकल्प से 'व' का आगम नहीं होता, तो अन्त्य स्वर ह्रस्व में बदल जाता है; जैसे—जिऊँ-जिओ, पिऊँ-पिओ, पिये-पीवे, छुए-छुवे सिएँ-सीवें।

(ग) एकान्त धातुओं में 'ऊँ' और 'ओ' के अतिरिक्त शेष प्रत्ययों के पूर्व 'व' का आगमन होता है; जैसे—देखें, खेवें, सेवें।

(घ) देना और लेना क्रियाओं की धातुओं में विकल्प से प्रत्ययों का आदेश होता है; जैसे—दूँ (देऊँ), दे (देदे), दो (देओ), लूँ (लेऊँ), ले (लेवे), लो (लेओ)।

(ङ) आकारान्त धातुओं से परे 'ए' और 'एँ' की जगह विकल्प से क्रमशः 'य' और 'यँ' आते हैं; जैसे—जाये, जाय, जायें, जायँ।

(च) 'होना' के रूप ऊपर लिखे नियमों के विरुद्ध होते हैं, जो आगे दिये जायेंगे।

(२) सामान्य भविष्यत्काल की रचना के लिए संभाव्य भविष्यत् के प्रत्येक पुरुष में पुल्लिग एकवचन के लिए 'गा', पुल्लिग बहुवचन के लिए 'गे' और स्त्रीलिंग एकवचन तथा बहुवचन के लिये 'गी' जोड़े जाते हैं; जैसे—खाऊँगा, जायेंगे, खायेंगे, जाओगी, जायेंगी।

(३) प्रत्यक्ष विधि का रूप संभाव्य भविष्यत् के रूप के समान होता है; दोनों में केवल मध्यम पुरुष के एकवचन का भेद होता है। विधि का मध्यम पुरुष एकवचन धातु की ही भाँति होता है; जैसे—लाना से ला, गाना से गा।

(क) आदरसूचक 'आप' के साथ मध्यम पुरुष में धातु के आगे 'इसे' जोड़ा जाता है; जैसे—आइये, जाइये, खाइये, बैठिए, सोइये।

(ख) लेना, देना, पीना, करना और होना के आदरसूचक काल में 'इये' के पूर्व 'ज' का आगम होता है और इनके आद्य स्वरों में प्रायः वही बिकार होते हैं जो इन क्रियाओं के भूतकालीन कृदन्त बनाने में होते हैं; जैसे—

लेना	लीजिये	करना	कीजिये
देना	दीजिये	पीना	पीजिये
होना	हूजिये		

(ग) 'चाहिए' यथार्थतः 'चाहना' की आदरसूचक विधि का रूप है; परन्तु इससे वर्त्तमान काल की आवश्यकता का भी बोध होता है; जैसे--उसे एक कलम चाहिए।

(घ) विशेष आदर के लिए 'आप' के साथ धातु में 'इयेगा' प्रत्यय जोड़ा जाता है; जैसे—जाइयेगा, आइयेगा, बैठीयेगा। यह 'गा' से अन्त होनेवाले रूप कभी-कभी सामान्य भविष्यत्काल में भी प्रयुक्त होता है; जैसे—आप पटना कब जाइयेगा ?

(४) परोक्ष विधि के दो रूप होते हैं—[क] क्रियार्थक संज्ञा तद्वत् परोक्ष विधि होती है। [ख] आदरसूचक विधि के अन्त में 'ओ' आदेश होता है; जैसे—

"तू रहना सुख से पति-संग प्रथम मिलाप को जा मत भूल।"

यह बात किसी से मत कहियो।

परोक्ष विधि केवल मध्यम पुरुष में आती है और दोनों वचनों में उसके एक ही रूप का प्रयोग होता है।

(क) इसी में 'आप' के साथ आदरसूचक विधि का दूसरा (गान्त) रूप आता है; जैसे—आप मुझ पर कृपा कीजियेगा।

(ख) आदरसूचक विधि से 'ज' के बाद 'इये' और 'इयो' बहुधा क्रमशः 'ए' और 'ओ' हो जाते हैं; जैसे--पीजे, लीजे, दीजे, आदि। ये रूप बहुधा कविता में आते हैं, जैसे—

(१) 'कह गिरिधर कविराय कहो अब कैसी कीजे।
जल खारे ह्वै गयो कहो अब कैसी पीजे।"

(२) "स्वावलम्बन हम सब को दीजै।"

संयुक्त कालों की रचना में 'होना' सहकारी क्रिया के रूपों का काम पड़ता है, इसीलिए ये रूप लिखे जाते हैं। हिन्दी में 'होना' क्रिया के दो अर्थ हैं—(क) स्थिति और (ख) विकार। पहले अर्थ में इस क्रिया के केवल दो काल होते हैं और दूसरे अर्थ में इसकी काल-रचना अन्य क्रियाओं की भाँति होती है, हालांकि इसके कुछ कालों से पहला अर्थ भी व्यक्त होता है।

होना (स्थिति-दर्शक)

(१) सामान्य वर्त्तमान काल

कर्त्ता—पुंल्लिग या स्त्रीलिंग

	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पु०	मैं हूँ।	हम हैं।
मध्यम पु०	तू है।	तुम हो।
अन्य पु०	वह है।	वे हैं।

(२) सामान्य भूतकाल

कर्त्ता—पुंल्लिग

उत्तम पु०	मैं था।	हम थे।
मध्यम पु०	तू था।	तुम थे।
अन्य पु०	वह था।	वे थे।

कर्त्ता—स्त्रीलिंग

उत्तम पु०	मैं थी।	हम थीं।
मध्यम पु०	तू थी।	तुम थीं।
अन्य पु०	वह थी।	वे थीं।

होना (विकार-दर्शक)

(१) संभाव्य भविष्यत् काल

कर्त्ता—पुंल्लिग या स्त्रीलिंग

उत्तम पु०	मैं होऊँ।	हम हों, होवें।
मध्यम पु०	तू हो, होवे।	तुम होओ, हो।
अन्य पु०	वह हो, होवे।	वे हों, होवें।

(२) सामान्य भविष्यत्-काल

कर्त्ता—पुल्लिग (स्त्रीलिंग)

उत्तम पु० मैं होऊँगा (होऊँगी) । हम होंगे, होवेंगे (होंगी, हावेंगी) ।
मध्यम पु० तू होगा, होवेगा (होगी, होवेगी) । तुम होगे, होओगे (होगी) ।
अन्य पु० वह होगा; होवेगा (होगी, होवेगी) । वे होंगे, होवेंगे (होंगी, होवेंगी) ।

(३) सामान्य संकेतार्थ

कर्त्ता - पुल्लिग (स्त्रीलिंग)

उत्तम पु०	मैं होता (होती) ।	हम होते (होतीं) ।
मध्यम पु०	तू होता (होती ।	तुम होते (होतीं) ।
अन्य पु०	वह होता (होती) ।	वे होते (होतीं) ।

दूसरे वर्ग के छवों कर्त्तृवाच्य काल वर्त्तमानकालीन कृदन्त के साथ 'होना' सहकारी क्रिया के ऊपर लिखे कालों के रूप जोड़ने से बनते हैं । स्थिति-दर्शक सामान्य वर्त्तमान काल और विकार-दर्शक संभाव्य भविष्यत् काल को छोड़ कर इस सहकारी क्रिया के शेष कालों के रूप पुरुष-लिंग-वचनानुसार बदलते हैं ।

(क) सामान्य संकेतार्थ-काल वर्त्तमानकालीन कृदन्त कर्त्ता के पुरुष-लिंग—वचनानुसार बदलने से बनता है । इसके साथ सहकारी क्रिया नहीं आती; जैसे—मैं जाता । हम जाते । वे जातीं ।

(ख सामान्य वर्त्तमान काल वर्त्तमानकालीन कृदन्त के साथ स्थिति-दर्शक सहकारी क्रिया के सामान्य वर्त्तमान काल का रूप जोड़ने से बनता है; जैसे -मैं जाता हूँ । वह जाती है । तुम जाती हो ।

(ग) अपूर्ण भूतकाल बनाने के लिए वर्त्तमानकालीन कृदन्त के साथ स्थिति-दर्शक सहकारी क्रिया "होना' के सामान्य भूत काल का रूप (था) जोड़ा जाता है; जैसे - मैं जाता था । तू जाती थी । वह जाती थी । वे जाती थीं ।

(घ) वर्त्तमानकालीन कृदन्त के साथ विकार-दर्शक सहकारी क्रिया के संभाव्य भविष्यत् काल का रूप जोड़ने से संभाव्य वर्त्तमान काल बनता है; जैसे—मैं जाता होऊँ । वह आता हो । वे आती हों ।

(ङ) वर्त्तमानकालीन कृदन्त के साथ सहकारी क्रिया के सामान्य भविष्यत् का रूप जोड़ने से संदिग्ध वर्त्तमान बनता है; जैसे—मैं जाता होऊँगा। वह जाता होगा। वे जाती होंगी।

(च) अपूर्ण संकेतार्थ काल बनाने के लिए वर्त्तमानकालीन कृदन्त के साथ सामान्य संकेतार्थ काल के रूप जोड़े जाते हैं; जैसे—आज यदि कुम्हार घड़ा तैयार न करते होते तो मेरी क्या दशा होती ?

इस काल में 'होना' क्रिया का प्रयोग नहीं होता क्योंकि उसके साथ 'होता' शब्द की व्यर्थ द्विरुक्ति होती है।

तृतीय वर्ग के छवों कर्त्तृवाच्य काल भूतकालीन कृदन्त के साथ 'होना' सहायक क्रिया के पूर्वोक्त पाँचों कालों के रूप जोड़ने से बनते हैं। इन कालों में 'बोलना' वर्ग की क्रियाओं के सिवा शेष सकर्मक क्रियाएँ कर्मणि प्रयोग या भावे प्रयोग में आती हैं। यहाँ केवल कर्त्तरि प्रयोग के उदाहरण दिये जाते हैं।

(१) सामान्य भूतकाल, भूतकालीन कृदन्त में कर्त्ता के पुरुष-लिंग-वचनानुसार रूपान्तर करने से बनता है। इसके साथ सहकारी क्रिया नहीं आती; जैसे—मैं गया। वह आया। वह बोला। वे बोलीं।

(२) आसन्नभूत बनाने के लिए भूतकालीन कृदन्त के साथ सहकारी क्रिया के सामान्य वर्त्तमान के रूप जोड़े जाते हैं; जैसे—वह बोला है। वह गया है। मैं आया हूँ। वे गयी हैं।

(३) पूर्ण भूतकाल भूतकालीन कृदन्त के साथ सहकारी क्रिया के सामान्य भूतकाल के रूप जोड़ने से बनते हैं; जैसे—वह गया था। वह आया था। वह बोली थी। वे बोली थीं।

(४) भूतकालीन कृदन्त के साथ सहकारी क्रिया के संभाव्य भविष्यत् काल के रूप जोड़ने से संभाव्य भूतकाल बनता है; जैसे—मैं बोला होऊँ। तू बोला हो। वह आया हो। हम आयी हों।

(५) भूतकालीन कृदन्त के साथ सहकारी क्रिया के सामान्य भविष्यत् काल के रूप जोड़ने से संदिग्ध भूतकाल बनता है; जैसे—मैं आया होऊँगा। वह आया होगा। हम आये होंगे। वे आयी होंगी।

(६) पूर्ण संकेतार्थ काल बनाने के लिए भूतकालीन कृदन्त के साथ सामान्य संकेतार्थ काल के रूप में जोड़े जाते हैं; जैसे—जो तू एक बार भी मुझे पुकारा होता तो तेरी पुकार मुझ तक अवश्य पहुँची होती।

(७) आकारान्त क्रियाओं में पुरुष के कारण भेद नहीं होता; जैसे—मैं गया। तू गया। वह गया। जब उनके साथ सहकारी क्रिया आती है, तब स्त्रीलिंग के बहुवचन का रूपान्तर केवल सहकारी क्रिया में होता है; जैसे–वह जाती है। मैं जाती हूँ। वे जाती हैं।

उत्तम पुरुष स्त्रीलिंग बहुवचन के रूप बहुधा बोल-चाल में पुल्लिग के समान होते हैं और भाषा में इसके प्रयोग मिलते हैं; जैसे—गौतमी–हम जाते हैं। रानी—अब हम महल में जाते हैं।

आगे कर्तृवाच्य के सब कालों में तीन क्रियाओं के रूप लिखे जाते हैं। इन क्रियाओं में एक अकर्मक, एक सहकारी और एक सकर्मक है। अकर्मक क्रिया हलन्त धातु की और सकर्मक क्रिया स्वरान्त धातु की है। सहकारी 'होना' क्रिया के कुछ रूप अनियमित होते हैं।

(अकर्मक) 'चलना' क्रिया (कर्तृवाच्य)

धातु	चल (हलन्त)।
कर्तृवाचक	चलनेवाला।
वर्त्तमान कालीन कृदन्त	चलता हुआ।
भूतकालीन कृदन्त	चला हुआ।
पूर्वकालिक कृदन्त	चलके, चलकर, चलकरके।
तात्कालिक कृदन्त	चलते ही।
अपूर्ण क्रिया द्योतक कृदन्त	चलते हुए।
पूर्ण क्रिया द्योतक कृदन्त	चले हुए।

(क) धातु से बने हुए काल-
कर्त्तरि प्रयोग

(१) संभाव्य भविष्यत् काल

एकवचन	बहुवचन
१. मैं चलूँ।	हम चलें।
२. तू चले।	तुम चलो।
३. वह चले।	वे चलें।

(२) सामान्य भविष्यत्-काल

कर्त्ता—पुल्लिग या स्त्रीलिंग

१. मैं चलूँगा (चलूँगी)।	हम चलेंगे (चलेंगी)।
२. तू चलेगा (चलेगी)।	तुम चलोगे (चलोगी)।
३. वह चलेगा (चलेगी)।	वे चलेंगे (चलेंगी)।

(३) प्रत्यक्ष विधिकाल (साधारण)

कर्त्ता—पुल्लिग या स्त्रीलिंग

१. मैं चलूँ।	हम चलें।
२. तू चल।	तुम चलो।
३. वह चले।	वे चलें।

(आदर-सूचक)

२ ✖ आप चलिये या चलियेगा

(४) परोक्ष विधिकाल (साधारण)

२. तू चलना या चलियो।	तुम चलना या चलियो।

(आदर-सूचक)

२ ✖ ×	आप चलियेगा।

(ख) वर्त्तमानकालीन कृदन्त से बने हुए काल-कर्त्तरि प्रयोग

(१) सामान्य संकेतार्थ काल

कर्त्ता—पुल्लिग या स्त्रीलिंग

१. मैं चलता (चलती) ।	हम चलते (चलतीं) ।
२. तू चलता (चलती) ।	तुम चलते (चलतीं) ।
३. वह चलता (चलती) ।	वे चलते (चलतीं) ।

(२) सामान्य वर्त्तमान काल

कर्त्ता—पुल्लिग या स्त्रीलिंग

१. मैं चलता हूँ (चलती हूँ) ।	हम चलते हैं (चलती हैं) ।
२. तू चलता है (चलती है) ।	तुम चलते हो (चलती हो) ।
३. वह चलता है (चलती है) ।	वे चलते हैं (चलती हैं) ।

(३) अपूर्ण भूतकाल

कर्त्ता—पुल्लिग या स्त्रीलिंग

१. मैं चलता था (चलती थी) ।	हम चलते थे (चलती थी) ।
२. तू चलता था (चलती थी) ।	तुम चलते थे (चलती थीं) ।
३. वह चलता था (चलती थी) ।	वे चलते थे (चलती थीं) ।

(४) संभाव्य वर्त्तमान काल

कर्त्ता—पुल्लिग या स्त्रीलिंग

१. मैं चलता होऊँ (चलती होऊँ) ।	हम चलते हों (चलती हों) ।
२. तू चलता हो (चलती हो) ।	तुम चलते हो (चलती होओ) ।
३. वह चलता हो (चलते हो)	वे चलते हों (चलती हों) ।

(५) संदिग्ध वर्त्तमान काल

कर्त्ता—पुल्लिग या स्त्रीलिंग

१. मैं चलता होऊँगा (चलती होऊँगी) ।	हम चलते होंगे (चलती होंगी) ।
२. तू चलता होगा (चलती होगी) ।	तुम चलते होगे (चलती होंगी) ।
३. वह चलता होगा (चलती होगी) ।	वे चलते होंगे (चलती होंगी) ।

(६) अपूर्ण संकेतार्थ

कर्त्ता—पुल्लिग (स्त्रीलिंग)

१. मैं चलता होता (चलती होती)। हम चलते होते (चलती होतीं)।
२. तू चलता होता (चलती होती)। तुम चलते होते (चलती होतीं)।
३. वह चलता होता (चलती होती)। वे चलते होते (जलती होतीं)।

कर्त्त रि प्रयोग

(१) सामान्य भूतकाल

कर्त्ता—पुल्लिग (स्त्रीलिंग)

एकवचन	बहुवचन
१. मैं चला (चली)।	हम चले (चलीं)।
२. तू चला (चली)।	तुम चले (चलीं)।
३. वह चला (चली)।	वे चले (चलीं)।

(२) आसन्न भूतकाल

कर्त्ता—पुल्लिग (स्त्रीलिंग)

१. मैं चला हूँ (चली हूँ)। हम चले हैं (चली हैं)।
२. तू चला है (चली है)। तुम चले हो (चली हो)।
३. वह चला है (चली है)। वे चले हैं (चली हैं)।

(३) पूर्ण भूतकाल

कर्त्ता—पुल्लिग (स्त्रीलिंग)

१. मैं चला था (चली थी)। हम चले थे (चली थीं)।
२. तू चला था (चली थी)। तुम चले थे (चली थीं)।
३. वह चला था (चली थी)। वे चले थे (चली थीं)।

(४) संभाव्य भूतकाल

कर्त्ता—पुल्लिग (स्त्रीलिंग)

१. मैं चला होऊं (चली होऊं)। हम चले हों (चली हों)।
२. तू चला हो (चली हो)। तुम चले होओ (चली होओ)।
३. वह चला हो (चली हो) वे चले हों (चली हों)।

(५) संदिग्ध भूतकाल

कर्त्ता—पुल्लिग (स्त्रीलिंग)

१. मैं चला होऊँगा (चली होऊँगी)। हम चले होंगे (चली होंगी)।
२. तू चला होगा (चली होगी)। तुम चले होगे (चली होंगी)।
३. वह चला होगा (चली होगी)। वे चले होंगे (चली होंगी)।

(६) पूर्ण संकेतार्थ

कर्त्ता—पुल्लिग (स्त्रीलिंग)

१. मैं चला होता (चली होती)। हम चले होते (चली होतीं)।
२. तू चला होता (चली होती)। तुम चले होते (चली होतीं)।
३. वह चला होता (चली होती)। वे चले होते (चली होतीं)।

सहकारी 'होना' (विकार दर्शक) क्रिया

धातु .... कर्तृवाच्य हो (स्वरान्त)

२. तू होता होगा (होती होगी)। तुम होते होगे (होती होगी)।
३. वह होता होगा (होती होगी)। वे होते होंगे (होती होंगी)।

(७) अपूर्ण संकेतार्थ काल

(इस काल में 'होना' क्रिया के रूप नहीं होते।)

कर्त्तरि प्रयोग

(१) सामान्य भूतकाल

कर्त्ता—पुल्लिग (स्त्रीलिंग)

१. मैं हुआ (हुई)।
२. तू हुआ (हुई)। हम हुए (हुई)।
३. वह हुआ (हुई)। तुम हुए (हुई)।
वे हुए (हुई)।

(२) आसन्न भूतकाल

कर्त्ता—पुल्लिग (स्त्रीलिंग)

१. मैं हुआ हूँ (हुई हूँ)।
२. तू हुआ है (हुई है)। हम हुए हैं (हुई हैं)।
३. वह हुआ है (हुई है)। तुम हुए हो (हुई हो)।
वे हुए हैं (हुई हैं)।

(३) पूर्ण भूतकाल

कर्त्ता—पुल्लिग (स्त्रीलिंग)

१. मैं हुआ था (हुई थी)। हम हुए थे (हुई थीं)
२. तू हुआ था (हुई थी)। तुम हुए थे (हुई थीं)।
३. वह हुआ था (हुई थी)। वे हुए थे (हुई थीं)।

(४) संभाव्य भूतकाल

कर्त्ता—पुल्लिग (स्त्रीलिंग)

१. मैं हुआ होऊँ (हुई होऊँ)। हम हुए हों (हुई हों)।
२. तू हुआ हो (हुई हो)। तुम हुए होओ (हुई होओ)।
३. वह हुआ होगा (हुई होगी)। वे हुए हों (हुई हों)।

(५) संदिग्ध भूतकाल

कर्त्ता—पुल्लिग (स्त्रीलिंग)

१. मैं हुआ होऊँगा (हुई होऊँगी)। हम हुए होंगे (हुई होंगी)।
२. तू हुआ होगा (हुई होगी)। तुम हुए होगे (हुई होंगी)।
३. वह हुआ होगा (हुई होगी)। वे हुए होंगे (हुई होंगी)।

(६) पूर्ण संकेतार्थ काल

कर्त्ता—पुल्लिग (स्त्रीलिंग)

१. मैं हुआ होता (हुई होती)। हम हुए होते (हुई होतीं)।
२. तू हुआ होता (हुई होती)। तुम हुए होते (हुई होतीं)।
३. वह " " " " वे " " " "

सकर्मक 'खाना' क्रिया (कर्त्तृ वाच्य)

धातु — खा (स्वरान्त)।
कर्त्तृ वाचक — खाने वाला।
वर्त्तमानकालीन कृदन्त — खाता हुआ।

× ⊠ ■

कर्त्तृ वाचक संज्ञा — होनेवाला।
वर्त्तमानकालीन कृदन्त — होता हुआ।
भूतकालीन कृदन्त — हुआ।
पौर्व कालिक कृदन्त — हो, हो कर।
तात्कालिक कृदन्त — होते ही।
अपूर्ण क्रिया द्योतक कृदन्त — होते हुए।
पूर्ण क्रिया द्योतक कृदन्त — हुए।

(क) धातु से बने हुए काल

(१) संभाव्य भविष्यत् काल

(२) सामान्य भविष्यत् काल

(३) (इन कालों के रूप लिखें जा चुके हैं।)

(३) प्रत्यक्ष विधि काल (साधारण)

कर्त्ता—पुल्लिंग या स्त्रीलिंग

१. मैं होऊँ। — हम हों, होवें।
२. तू हो। — तुम होओ, हो।
३. तू हो। — वे हों, होवें।

(आदर सूचक)

२. × × आप हूजिये या हूजियेगा, होइए, होइएगा।

(४) परोक्ष विधि काल (साधारण)

२. तू होना या हूजियो। — तुम होना या हूजियो।

(आदर सूचक)

२. ■ × आप हूजियेगा, हों, होवें।

(ख) वर्त्तमान कालीन कृदन्त से बने हुए काल-कर्त्तरि प्रयोग

(१) सामान्य संकेतार्थ काल

[इस काल के रूप लिख जा चुके हैं।]

(२) सामान्य वर्त्तमान काल

कर्त्ता—पुल्लिग या स्त्रीलिंग

१. मैं होता हूँ (होती हूँ)।	हम होते हैं (होती हैं)।
२. तू होता है (होती है)।	तुम होते हो (होती हो)।
३. वह होता है (होती है)	वे होते हैं (होती हैं)।

(३) अपूर्ण भूतकाल

कर्त्ता—पुल्लिग या स्त्रीलिंग

१. मैं होता था (होती थी)।	हम होते थे (होती थीं)।
२. तू होता था (होती थी)।	तुम होते थे (होती थीं)।
३. वह होता था (होती थी)।	वे होते थे (होती थीं)।

(४) संभाव्य वर्त्तमान काल

कर्त्ता—पुल्लिग या स्त्रीलिंग

१. मैं होता होऊँ (होती होऊँ)।	हम होते हों (होती हों)।
२. तू होता हो (होती हो)।	तुम होते होओ (होती होओ)।
३. वह होता हो (होती हो)।	वे होते हों (होती हों)।

(५) संदिग्ध वर्त्तमान काल

कर्त्ता—पुल्लिग या स्त्रीलिंग

१. मैं होता होऊँगा (होती होऊँगी)।	हम होते होंगे (होती होंगी)।
भूतकालीन कृदन्त	खाया हुआ।
पूर्वकालिक कृदन्त	खा, खा कर।
तात्कालिक कृदन्त	खाते ही।
अपूर्ण क्रियाद्योतक कृदन्त	खाते हुए।
पूर्ण क्रियाद्योतक कृदन्त	खाये हुए।

(क) धातु से बने हुए काल-
कर्त्तरि प्रयोग

(१) संभाव्य भविष्यत् काल

कर्त्ता—पुल्लिग या स्त्रीलिंग।

१. मैं खाऊँ।	हम खायें, खावें।
२. तू खाये, खावे।	तुम खाओ।
३. वह खाये, खावे।	वे खायें, खावें।

(२) सामान्य भविष्यत् काल

१. मैं खाऊँगा [खाऊँगी]।	एकवचन
२. तू खायेगा, खावेगा [खावेंगी, खायेंगी।]	
३. वह खायेगा, खावेगा [खायेगी, खावेगी।]	
१. हम खायेंगे, खावेंगे [खावेंगी, खावेंगी।]	बहुवचन
२. तुम खाओगे [खाओगी।]	
३. वे खायेंगे, खावेंगे [खायेंगी, खावेंगी।]	

(३) प्रत्यक्ष विधिकाल [साधारण]

कर्त्ता—पुल्लिग या स्त्रीलिंग

१. मैं खाऊँ।	हम खायें, खावें।
२. तू खा।	तुम खाओ।
३. वह खाये, खावे।	वे खायें, खावें।

[आदर-सूचक]

२. + आप खाइये या खाइयेगा।

(४) परोक्ष-विधिकाल [साधारण]

२. तू खाना या खाइयो।	तुम खाना या खाइयो।

आदर-सूचक

२. + आप खाइयेगा।

(ख) वर्त्तमानकालीन कृदन्त सेबने हुए काल

(१) सामान्य संकेतार्थ काल

कर्त्ता—पुल्लिग (स्त्रीलिंग)

१. मैं खाता (खाती) ।	हम खाते (खातीं) ।
२. तू खाता (खाती) ।	तुम खाते (खातीं) ।
३. वह खाता (खाती) ।	वे खाते (खातीं) ।

(२) सामान्य वर्त्तमानकाल

कर्त्ता—पुल्लिग (स्त्रीलिंग) ।

१. मैं खाता हूँ (खाती हूँ) ।	हम खाते हैं (खाती हैं) ।
२. तू खाता है (खाती है) ।	तुम खाते हो (खाती हो) ।
३. वह खाता है (खाती है) ।	वे खाते हैं (खाती हैं) ।

(३) अपूर्ण भूतकाल

कर्त्ता—पुल्लिग स्त्रीलिंग

१. मैं खाता था (खाती थी) ।	हम खाते थे (खाती थीं) ।
२. तू खाता था (खाती थी) ।	तुम खाते थे (खाती थीं) ।
३. वह खाता था (खाती थी) ।	वे खाते थे (खाती थीं) ।

(४) सम्भाव्य वर्त्तमानकाल

कर्त्ता—पुल्लिग (स्त्रीलिंग)

१. मैं खाता होऊँ (खाती होऊँ) ।	हम खाते हों (खाती हों) ।
२. तू खाता हो (खाती हो) ।	तुम खाते होओ (खाती होओ) ।
३. वह खाता हो (खाती हो) ।	वे खाते हों (खाती हों) ।

(५) संदिग्ध वर्त्तमान काल

कर्त्ता—पुल्लिग (स्त्रीलिंग)

१. मैं खाता होऊँगा (खाती होऊँगी) ।	हम खाते होंगे (खाती होंगी) ।
२. तू खाता होगा (खाती होगी) ।	तुम खाते होगे (खाती होगी) ।
३. वह खाता होगा (खाती होगी) ।	वे खाते होंगे (खाती होंगी) ।

(ग) भूतकालीन कृदन्त से बने हुए काल-कर्मणि प्रयोग

(१) सामान्य भूतकाल

कर्म—पुल्लिग, एकवचन

मैंने या हमने
तूने या तुमने } खाया
उसने या उन्होंने

कर्म—पुल्लिग, बहुवचन

मैंने या हमने
तूने या तुमने } खाये ।
उसने या उन्होंने

कर्म—स्त्रीलिंग, एकवचन

मैंने या हमने
तूने या तुमने } खायी ।
उसने या उन्होंने

कर्म—स्त्रीलिंग, बहुवचन

मैंने या हमने
तूने या तुमने } खायीं ।
उसने या उन्होंने

(२) आसन्न भूतकाल

कर्म—पुल्लिग, एकवचन

मैंने या हमने
तूने या तुमने } खाया है ।
उसने या उन्होंने

कर्म—पुल्लिग, बहुवचन

मैंने या हमने
तूने या तुमने } खाये हैं ।
उसने या उन्होंने

कर्म—स्त्रीलिंग, बहुवचन

मैंने या हमने
तूने या तुमने } खायी हैं ।
उसने या उन्होंने

कर्म—स्त्रीलिंग, एकवचन

मैंने या हमने
तूने या तुमने } खायी है ।
उसने या उन्होंने

(३) पूर्णभूतकाल

कर्म—पुल्लिग, एकवचन

मैंने या हमने
तूने या तुमने } खाया था ।
उसने या उन्होंने

कर्म—स्त्रीलिंग, एकवचन

मैंने या हमने
तूने या तुमने } खायी थी ।
उसने या उन्होंने

कर्म—पुल्लिग, बहुवचन

मैंने या हमने तूने या तुमने उसने या उन्होंने	खाये थे।

कर्म—स्त्रीलिंग, बहुवचन

मैंने या हमने तूने या तुमने उसने या उन्होंने	खायी थीं।

(४) संभाव्य भूतकाल

कर्म—पुल्लिग, एकवचन		बहुवचन
मैंने या हमने तूने या तुमने उसने या उन्होंने		खाये हों

कर्म—स्त्रीलिय, एकवचन		बहुवचन
मैंने या हमने तूने या तुमने उसने या उन्होंने	खायी हो।	खायी हों।

(५) संदिग्ध भूतकाल

कर्म—पुल्लिग, एकवचन		बहुवचन
मैंने या हमने तूने या तुमने उसने या उन्होंने	खाया होगा।	खाये होंगे।

कर्म—स्त्रीलिंग, एकवचन		बहुवचन
मैंने या हमने तूने या तुमने उसने या उन्होंने	खायी होगी।	खायी होंगी।

पूर्ण संकेतार्थकाल

कर्म—पुल्लिग, एकवचन		बहुवचन
मैंने या हमने तूने या तुमने उसने या उन्होंने	खाया होता।	खाये होते।

कर्म—स्त्रीलिंग, एकवचन		बहुवचन
मैंने या हमने तूने या तुमने उसने या उन्होंने	खायी होती।	खायी होतीं।

(२) कर्मवाच्य

कर्मवाच्य क्रिया बनाने के लिए सकर्मक धातु के भूतकालीन कृदन्त के आगे 'जाना' सहकारी क्रिया के सब कालों और अर्थों के रूप में जोड़े जाते हैं। कर्मवाच्य के कर्मणि प्रयोग में कर्म उद्देश्य होकर अप्रत्यय कर्त्ता कारक के रूप में होता है और क्रिया के पुरुष, लिंग और वचन कर्म के अनुसार होते हैं; जैसे—लड़का पुकारा गया है। लड़की पुकारी गयी है।

कमवाच्य के भावे प्रयोग में कर्म सप्रत्यय रहता है और क्रिया सदा अन्य पुरुष पुल्लिग; एकवचन में होती है; जैसे—लड़के को भेजा गया। लड़की को भेजा जायेगा।

आगे 'अवलोकना' सकर्मक क्रिया के कर्मवाच्य (कर्मणि प्रयोग) के केवल पुल्लिग रूप लिखे जाते हैं। स्त्रीलिंग रूप कर्त्तृवाच्य काल रचना के अनुकरण पर आसानी से बना लिए जा सकते हैं।

(सकर्मक) 'अवलोकना' क्रिया (कर्मवाच्य)

धातु···· ··· ···· ····अवलोका जा।

वर्त्तमानकालीन···· ···· ···अवलोका जाता हुआ।

भूतकालीन कृदन्त··· ··· ··· ···अवलोका गया (हुआ)।

पौर्वकालिक कृदन्त···· ··· ···· ····अवलोका जाकर।

तात्कालिक कृदन्त···· ·· ··· ··· ····अवलोके जाते ही।

अपूर्ण क्रियाद्योतक कृदन्त··· ··· ··· ····अवलोके जाते हुए। } कचित्

पूर्ण क्रियाद्योतक कृदन्त··· ···· ···· ····अवलोके गए। }

(क) धातु से बने हुऐ काल-कर्मणि प्रयोग, कर्म-पुल्लिग

(१) संभाव्य भविष्यत् काल

एकवचन	बहुवचन
१. मैं अवलोका जाऊँ ।	हम अवलोके जायें, जावें, जायँ ।
२. तू अवलोका जाये, जावे, जाय ।	तुम अवलोके जाओ ।
३. वह ,, ,, ,, ,,	वे अवलोके जायें, जावें, जायँ ।

(२] सामान्य भविष्यत् काल

एकवचन	बहुवचन
१. मैं अवलोका जाऊँगा ।	हम अवलोके जायेंगे, जावेंगे, जायँगे ।
२. तू अवलोका जायेगा, जावेगा, जायगा ।	तुम अवलोके जाओगे ।
३ वह ,, ,, ,,	वे अवलोके जायेंगे, जावेंगे, जायँगे ।

(३) प्रत्यक्ष विधिकाल (साधारण)

१. मैं अवलोका जाऊँ ।	हम अवलोके जायें, जावें, जायँ ।
२. तू अवलोका जा ।	तुम अवलोके जाओ ।
३. वह अवलोका जाये, जावे, जाय ।	वे अबलोके जायें, जावें, जायँ ।

(४) परोक्ष-विधि-काल (साधारण)

१. तू अवलोका जाना वा जाइयो ।	तुम अवलोके जाना वा जाइयो ।

[सूचना—कर्मवाच्य में बहुधा आदरसूचक परोक्ष विधि के रूप नहीं पाये जाते ।]

(ख) वर्त्तमानकालीन कृदन्त से बने हुऐ काल

(१) सामान्य सकेतार्थ काल

१. मैं अवलोका जाता ।	हम अवलोके जाते ।
२. तू अवलोका जाता ।	तुम अवलोके जाते ।
३. वह अवलोका जाता ।	वे अवलोके जाते ।

(२) सामान्य वर्त्तमानकाल

१. मैं अवलोका जाता हूँ। हम अवलोके जाते हैं।
२. तू अवलोका जाता है। तुम अवलोके जाते हो।
३. वह अवलोका जाता है। वे अवलोके जाते हैं।

(३) अपूर्ण भूतकाल

१. मैं अवलोका जाता था। हम अवलोके जाते थे।
२. तू अवलोका जाता था। तुम अवलोके जाते थे।
३. वह अवलोका जाता था। वे अवलोके जाते थे।

(४) संभाव्य वर्त्तमानकाल

१. मैं अवलोका जाता होऊँ। हम अवलोके जाते हों।
२. तू अवलोका जाता हो। तुम अवलोके जाते होओ।
३. वह अवलोका जाता हो। वे अवलोके जाते हों।

(५) संदिग्ध वर्त्तमानकाल

१. मैं अवलोका जाता होऊँगा। हम अवलोके जाते होंगे।
२. तू अवलोका जाता होगा। तुम अवलोके जाते होगे।
३. वह अवलोका जाता होगा। वे अवलोके जाते होंगे।

(६) अपूर्ण संकेतार्थ काल

१. मैं अवलोका जाता होता। हम अवलोके जाते होते।
२. तू अवलोका जाता होता। तुम अवलोके जाते होते।
३. वह अवलोका जाता होता। वे अवलोके जाते होते।

(ग) भूतकालीन कृदन्त से बने हुए काल-कर्मणि प्रयोग (कर्म—पुल्लिंग)

(१) सामान्य भूतकाल

१. मैं अवलोका गया। हम अवलोके गये।
२. तू अवलोका गया। तुम अवलोके गये।
३. वह अवलोका गया। वे अवलोके गये।

(२) आसन्न भूतकाल

१. मैं अवलोका गया हूँ । हम अवलोके गये हैं ।
२. तू अवलोका गया है । तुम अवलोके गये हो ।
३. वह अवलोका गया है । वे अवलोके गये हैं ।

(३) पूर्ण भूतकाल

१. मैं अवलोका गया था । हम अवलोके गये थे ।
२. तू अवलोका गया था । तुम अवलोके गये थे ।
३. वह अवलोका गया था । वे अवलोके गये थे ।

(४) संभाव्य भूतकाल

१. मैं अवलोका गया होऊँ । हम अवलोके गये हों ।
२. तू अवलोका गया हो । तुम अवलोके गये हो ।
३. वह अवलोका गया हो । वे अवलोके गये हों ।

(५) संदिग्ध भूतकाल

१. मैं अवलोका गया होऊँगा । हम अवलोके गये होंगे ।
२. तू अवलोका गया होगा । तुम अवलोके गये होंगे ।
३. वह अवलोका गया होगा । वे अवलोके गये होंगे ।

(६) पूर्ण संकेतार्थ काल

१. मैं अवलोका गया होता । हम अवलोके गये होते ।
२. तू अवलोका गया होता । तुम अवलोके गये होते ।
३. वह अवलोका गया होता । वे अवलोके गये होते ।

(३) भाववाच्य

भाववाच्य अकर्मक क्रिया का वह रूप है, जो कर्मवाच्य की भाँति होता है । भाववाच्य क्रिया में कर्म नहीं होता और उसका कर्त्ता करण कारक में आता है । भाववाच्य क्रिया सदा एकवचन पुल्लिंग अन्य पुरुष में होती है; जैसे—मुझ से खाया न गया । रातभर किसी से जगा नहीं जाता ।

भाववाच्य क्रिया सदा भावे प्रयोग में आती है और उसका उपयोग अशक्यता के अर्थ में 'न' या 'नहीं' के साथ होता है। भाववाच्य क्रिया सब कालों और कृदन्तों में नहीं आती।

जब अकर्मक क्रिया के आदरसूचक विधिकाल का रूप संभाव्य भविष्यत्काल के अर्थ में आता है, तब वह भाववाच्य होता है; जैसे—मन में आता है कि सब छोड़-छाड़ कर बैठ जाना चाहिए। यह भाववाच्य-क्रिया भी भावे प्रयोग में आती है।

यहाँ भाववाच्य के केवल उन्हीं कालों के रूप लिखे जाते हैं, जिनमें उनका प्रयोग होता है—

(अकर्मक) 'खाया जाना' क्रिया (भाववाच्य)

धातु..................................खाया जा।

[इस क्रिया से और कृदन्त नहीं बनते।]

(क) धातु से बने हुए काल
भावे प्रयोग

(१) संभाव्य भविष्यत् काल

१. मुझसे या हमसे
२. तुझसे या तुमसे
३. उससे या उनसे

} खाया जाये, जावे, जाय।

(२) सामान्य भविष्यत् काल

१. मुझसे या हमसे
२. तुझसे या तुमसे
३. उससे या उनसे

} खाया जायेगा, जावेगा, जायगा।

(ख) वर्त्तमानकालीन कृदन्त से बने हुए काल

भावे प्रयोग

(१) सामान्य संकेतार्थ

१. मुझसे या हमसे २. तुझसे या तुमसे ३. उससे या उनसे	खाया जाता।

(२) सामान्य वर्त्तमान

१. मुझसे या हमसे २. तुझसे या तुमसे ३. उससे या उनसे	खाया जाता है।

(३) अपूर्ण भूतकाल

१. मुझसे या हमसे २. तुझसे या तुमसे ३. उससे या उनसे	खाया जाता था।

(४) संभाव्य वर्त्तमान काल

१. मुझसे या हमसे २. तुझसे या तुमसे ३. उससे या उनसे	खाया जाता हो।

(५) संदिग्ध वर्त्तमान काल

१. मुझसे या हमसे २. तुझसे या तुमसे ३. उससे या उनसे	खाया जाता होगा।

(ग) भूतकालीन कृदन्त से बने हुए काल

भावे प्रयोग

(१) सामान्य भूतकाल

१. मुझसे या हमसे
२. तुझसे या तुमसे } खाया गया।
३ उससे या उनसे

(२) आसन्न भूतकाल

१. मुझसे या हमसे
२. तुझसे या तुमसे } खाया गया।
३ उससे या उनसे

(३) पूर्ण भूतकाल

१. मुझसे या हमसे
२. तुमसे या तुझसे } खाया गया था।
३. उससे या उनसे

(४) संभाव्य भूतकाल

१. मुझसे या हमसे
२. तुझसे या तुमसे } खाया गया हो।
३. उससे या उनसे

(५) संदिग्धभूतकाल

१. मुझसे या हमसे
२. तुझसे या तुमसे } खाया गया होगा।
३. उससे या उनसे

संयुक्त क्रियाएँ

दो या दो से अधिक धातुओं के मेल से जो क्रियाएँ बनती हैं और एक नवीन अर्थ का बोध कराती हैं, वे संयुक्त क्रियाएँ कहलाती हैं। इनमें प्रधानतः दो धातु होते हैं पर कभी-कभी तीन धातु भी होते हैं; जैसे—खा जाना, पी जाना, कर डालना, आया-जाया करना, लिखा-पढ़ी करना आदि।

संयुक्त क्रिया में आद्य क्रिया प्रधान होती है जो धातु रूप में या सामान्य भूतकाल की क्रिया के रूप में अथवा साधारण रूप में आती है, परन्तु काल, लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार ऐसी क्रिया के अन्तिम खण्ड में ही रूपान्तर होता है, जिसे सहायक क्रिया कहते हैं।

कृदन्त के आगे सहकारी क्रिया आने से सदा संयुक्त क्रिया नहीं बनती। 'घोड़ा खड़ा हो गया।' इस वाक्य में प्रमुख धातु या क्रिया 'होना' है 'जाना' नहीं, 'जाना' केवल सहकारी क्रिया है; इसलिए 'हो गया' संयुक्त क्रिया है। एक दूसरा उदाहरण लें—लड़का तुम्हारे घर 'हो गया।' इस वाक्य में 'हो' पूर्वकालिक कृदन्त 'गया' क्रिया की विशेषता बतलाता है; इसलिए यहाँ 'गया' इकहरी क्रिया ही मुख्य क्रिया है। जहाँ कृदन्त की क्रिया मुख्य होती है और काल की क्रिया उस कृदन्त की विशेषता बतलाती है, वहीं दोनों को संयुक्त क्रिया कहते हैं।

रूप के अनुसार संयुक्त क्रियाएँ आठ प्रकार की होती हैं—

(१) क्रियार्थक संज्ञा के मेल से निर्मित, (२) वर्त्तमानकालीन कृदन्त के मेल से निर्मित, (३) भूतकालीन कृदन्त के मेल से निर्मित, (४) पूर्वकालिक कृदन्त के मेल से निर्मित (५) अपूर्ण क्रियाद्योतक कृदन्त के मेल से निर्मित (६) पूर्ण क्रियाद्योतक कृदन्त के मेल से निर्मित, (७) संज्ञा या विशेषण के मेल से निर्मित और (८) पुनरुक्त संयुक्त।

संयुक्त क्रियाओं में ये क्रियाएँ आती हैं—आना, उठना, करना, चाहना, चुकना, जाना, देना, डालना, पड़ना, पाना, बनना, रहना, लगना, लेना, सकना, होना। इनमें से 'सकना' को छोड़कर शेष क्रियाएँ स्वतंत्र भी हैं और अर्थ के अनुसार दूसरी सहकारी क्रियाओं के मेल से संयुक्त क्रियाएँ स्वयं भी बनती हैं।

(३) क्रियार्थक संज्ञा के मेल से निर्मित संयुक्त क्रियाएँ।

भूतकालीन के आगे 'करना' क्रिया जोड़कर अभ्यास बोधक संयुक्त क्रिया बनायी जाती है; जैसे—

(क) 'तुम हमें देखो न देखो, हम तुम्हें देखा करें।'

(ख) 'बारह बरस दिल्ली रहे पर भाड़ ही झोंका किये।'

भूतकालीन कृदन्त के आगे 'चाहना' क्रिया जोड़कर इच्छाबोधक संयुक्त क्रिया बनायी जाती है; जैसे—मैं 'पन्त' की 'ग्रन्थि' नामक पुस्तक देखना चाहता हूँ। मैं उसे पढ़ना चाहता हूँ।

अभ्यासबोधक और इच्छाबोधक क्रियाओं में 'जाना' और 'मरना' के भूतकालीन कृदन्त क्रमशः 'जाया' और 'मरा' हो जाते हैं; जैसे—जाया करता है, मरा चाहता है आदि।

(४) पूर्वकालिक कृदन्त के मेल से निर्मित संयुक्त क्रियाएँ—पूर्वकालिक कृदन्त के मेल से तीन प्रकार की संयुक्त क्रियाएँ बनती हैं—(क) अवधारणबोधक, (ख) शक्तिबोधक और (ग) पूर्णताबोधक।

(क) अवधारणबोधक क्रिया से मुख्य क्रिया के अर्थ में अधिक निश्चय का बोध होता है। इस अर्थ में निम्नलिखित सहायक क्रियाएँ आती हैं—

(१) उठना—इस क्रिया से अचानकपन का बोध होता है, जिसका प्रयोग बहुधा स्थिति-दर्शक क्रियाओं के साथ होता है; जैसे—चौंक उठना, बोल उठना, काँप उठना, रो उठना आदि।

(२) बैठना—इस क्रिया का प्रयोग बहुधा धृटष्ता के अर्थ में होता है। यह कुछ विशेष क्रियाओं के ही साथ प्रयुक्त होती है; जैसे खो बैठना, मार बैठना, कह बैठना, चढ़ बैठना।

(३) आना—इससे सूचित होता है कि क्रिया का व्यापार वक्ता की ओर होता है; जैसे—(क) बादल घिर आये।

(ख) आज यह काल के गाल में बच आया।

(ग) 'बात हि बात कर्ष बढ़ि आई।

कभी-कभी बोलना, कहना, हँसना आदि क्रियाओं के साथ 'आना' का अर्थ 'उठना' के समान अचानकपन का होता है; जैसे—

'कह्यो चाहे कछ तो कछु कहि आव ।'

(४) जाना—यह क्रिया कर्मवाच्य बनाने में प्रयुक्त होती है, इसलिए अनेक सकर्मक क्रियाएँ इसके मेल से अकर्मक हो जाती हैं; जैसे—

सकर्मक	अकर्मक	सकर्मक	अकर्मक
कुचलना	कुचल जाना ।	खोना	खो जाना ।
छाना	छा जाना ।	लिखना	लिख जाना ।
पीना	पी जाना ।	खाना	खा जाना ।
छूना	छू जाना ।	पकड़ना	पकड़ जाना ।

इन क्रियाओं में 'जाना' के मेल से बहुधा शीघ्रता का बोध होता है; जैसे—खा जाना, निगल जाना, पी जाना, पहुँच जाना, जान जाना ।

(५) लेना—जिस क्रिया के व्यापार का लाभ कर्त्ता को ही प्राप्त होता है उसके साथ 'लेना' क्रिया प्रयुक्त होती है; जैसे—खा लेना, पी लेना, सुन लेना, छीन लेना, कर लेना, समझ लेना । 'होना' के साथ 'लेना' से पूर्णता का बोध होता है ।

(६) देना— यह क्रिया अर्थ में 'लेना' के विरुद्ध है और इसका प्रयोग तभी होता है, जब इसके व्यापार का लाभ दूसरे को प्राप्त होता है ।

यह क्रियार्थक संज्ञा दो रूपों में आती है—(क) साधारण रूप में और (ख) विकृत रूप में ।

(क) साधारण रूप के साथ 'पड़ना', 'होना' या 'चाहिए' क्रियाओं को जोड़कर आवश्यकता-बोधक संयुक्त क्रिया बनायी जाती है; जैसे—लिखना पड़ता है, पढ़ना चाहिए आदि ।

जब इन संयुक्त क्रियाओं में क्रियार्थक संज्ञा का प्रयोग विशेषण की भाँति होता है, तब ये बहुधा विशेष्य के लिंग और वचन के अनुसार विकृत होती हैं; जैसे—गरीबों की मदद करनी चाहिए । अमरेश को दवा पीनी पड़ेगी । जो होनी है सो होगी ।

(ख) क्रियार्थक संज्ञा के विकृत रूप से तीन प्रकार की संयुक्त क्रियाएँ बनती हैं—(१) आरम्भबोधक (२) अनुमति बोधक और (३) अवकाश-बोधक।

(१) 'लगना' क्रिया के योग से आरम्भबोधक क्रिया निर्मित्त होती है; जैसे—गोविन्द पढ़ने लगा।

(२) 'देना' क्रिया के योग से अनुमति बोधक क्रिया बनती है; जैसे—शैलकुमारी को पढ़ने दीजिये। गोपेश ने सुरेश को बोलने न दिया।

(३) अवकाशबोधक क्रिया अर्थ में अनुमतिबोधक क्रिया के प्राय: विरोधिनी है, जिनमें 'देना' की जगह 'पाना' क्रिया का मेल होता है; जैसे—वह यहाँ से जाने न पायगा। बात न होने पायी।

(अ) 'पाना' क्रिया कभी-कभी पूर्वकालिक कृदन्त के धातुवत् रूप के साथ भी आती है; जैसे—मैंने बड़ी कठिनाई से वहाँ आपको देख पाया।

वर्त्तमानकालीन कृदन्त के योग से निर्मित संयुक्त क्रियाएँ—वर्त्तमान-कालीन कृदन्त के आगे 'आना', 'जाना' या 'रहना' क्रिया जोड़ कर नित्यता-बोधक क्रिया बनायी जाती है। इस क्रिया में कृदन्त के लिंग-वचन विशेष्य के अनुसार बदलते हैं, जैसे—यह नियम पूर्व काल से चला आता है। बालक बढ़ता गया। पानी बरसता रहेगा।

(क) 'जाता रहना' का अर्थ बहुधा 'मर जाना', 'नष्ट होना' या 'चला जाना' होता है; जैसे—

(१) मेरे बाबा जाते रहे। (२) आभूषण की चमक जाती रही। (३) लड़का हाथ से जाता रहा।

(ख) 'रहना' के सामान्य भविष्यत् काल से कार्य की अपूर्णता की सूचना मिलती है, जैसे—जब नरेश यहाँ आयेगा तब विमल पढ़ता रहेगा। इस अर्थ में कुछ वैयाकरण इस संयुक्त क्रिया को अपूर्ण भविष्यत् काल मानते हैं।

(३) भूतकालीन कृदन्त से निर्मित संयुक्त क्रियाएँ—अकर्मक क्रियाओं के भूतकालीन कृदन्त के आगे 'जाना' क्रिया जोड़कर तत्परताबोधक संयुक्त क्रिया बनायी जाती है। यह क्रिया केवल वर्त्तमानकालीन कृदन्त से बने हुए

कालों में आती है—घोड़ा दौड़ता जाता है। बदबू के मारे सिर फटा जाता था। वह चिन्ता के कारण मरी जाती थी।

(क) 'जाना' के साथ 'जाना' सहकारी क्रिया नहीं आती। 'चलना' के साथ 'जाना' जोड़ने से बहुधा पिछली क्रिया का निश्चय सूचित होता है, जैसे—वह यहाँ से चला गया।

कह देना, छोड़ देना, समझा देना, खिला देना, सुना देना।

'देना' का मेल बहुधा सकर्मक क्रियाओं के साथ होता है। 'चलना', हँसना', 'रोना'. 'छींकना' आदि अकर्मक क्रियाओं के साथ इसका अर्थ बहुधा अचानकपन का होता है।

(७) पड़ना—अवधारणबोधक क्रियाओं में इसका अर्थ बहुधा 'जाना' की भाँति होता है और उसी की भाँति इसके मेल से अनेक सकर्मक क्रियाएँ अकर्मक हो जाती हैं; जैसे—सुनना—सुन पड़ना, समझना—समझ पड़ना।

अकर्मक क्रियाओं के साथ इसका अर्थ घटना होता है; जैसे—गिर पड़ना, चौंक पड़ना, कूद पड़ना, हँस पड़ना, आ पड़ना।

(८) डालना—यह क्रिया केवल सकर्मक क्रियाओं के साथ प्रयुक्त होती है जिससे बहुधा उग्रता का बोध होता है; जैसे—फोड़ डालना, काट डालना, मार डालना, फाड़ डालना, मोड़ डालना, कर डालना।

(९) रहना—यह क्रिया बहुधा भूतकालीन कृदन्तों से बने हुए कालों में प्रयुक्त होती है। इसके आसन्नभूत और पूर्णभूत कालों से क्रमशः अपूर्ण वर्त्तमान और अपूर्णभूत का बोध होता है; जैसे—विनय खेल रहा है। योगेश खेल रहा था।

एक ही कृदन्त के साथ भिन्न-भिन्न अर्थों में भिन्न-भिन्न सहकारी क्रियाओं के मेल से भिन्न-भिन्न अवधारणबोधक क्रियाएँ बनती हैं; जैसे—देख पड़ना, देख रखना, देख जाना, देख डालना, देख लेना आदि।

'सकना' के मेल से शक्तिबोधक क्रियाएँ बनती हैं; जैसे—खा सकना, मार सकना, दौड़ सकना, हो सकना आदि।

'चुकना' के मेल से पूर्णताबोधक क्रियाएँ बनती हैं, जैसे—खा चुकना, पढ़ चुकना, दौड़ चुकना, मार चकना आदि।

कई लेखक पूर्णताबोधक क्रिया के सामान्य भविष्यत् काल को अँगरेजी की रीति से पूर्ण भविष्यत् काल कहते हैं; जैसे—वह पढ़ चुकेगा । इस प्रकार के नाम पूर्णताबोधक क्रियाओं के सब कालों को ठीक-ठीक नहीं दिये जा सकते, इसलिए इसके सामान्य भविष्यत् के रूपों को भी संयुक्त क्रिया ही माननी चाहिए ।

(५) अपूर्ण क्रियाद्योतक कृदन्त से निर्मित संयुक्त क्रियाएँ—अपूर्ण क्रियाद्योतक कृदन्त के आगे 'बनना' क्रिया जोड़ने से योग्यता बोधक क्रिया बनती है, जैसे—लँगड़े से चलते नहीं बनता । लड़के से किताब पढ़ते नहीं बनता । इससे प्राय: भाववाच्य का अर्थ बोध होता है ।

(६) पूर्ण क्रियाद्योतक कृदन्त से निर्मित संयुक्त क्रियाएँ—पूर्ण क्रिया द्योतक कृदन्त से दो प्रकारों की संयुक्त क्रियाएँ बनती हैं, जैसे—(क) निरन्तरता बोधक और (ख) निश्चयबोधक ।

(क) सकर्मक क्रियाओं के पूर्ण क्रियाद्योतक कृदन्त के आगे 'जाना' क्रिया जोड़ने से निरन्तरता बोधक क्रिया बनती है; जैसे—यह मुझे घसीटे जाता है । इसे तू क्यों छोड़े जाता है ? मंजु कुमारी यह काम किये जाती है । लिखे जाओ । यह क्रिया बहुधा वर्तमानकालीन कृदन्त से बने हुए कालों में और विधि कालों में प्रयुक्त होती है ।

(ख) पूर्ण क्रियाद्योतक कृदन्त के आगे 'लेना', 'देना', 'डालना' और 'बैठना' जोड़ने से निश्चयबोधक संयुक्त क्रियाएँ बनती हैं । ये क्रियाएँ बहुधा सकर्मक क्रियाओं के साथ सामान्य वर्तमान कालों में प्रयुक्त होती हैं, जैसे—मैं यह बात कहे देता हूँ । मैं कुछ कहे बैठता हूँ ।

(७) संज्ञा या विशेषण के मेल से निर्मित संयुक्त क्रियाएँ—संज्ञा या विशेषण के साथ क्रिया जोड़ने से जो संयुक्त क्रियाएँ बनती हैं, वे नाम-बोधक क्रियाएँ कहलाती हैं, जैसे—भस्म होना, भस्म करना, स्वीकार होना, स्वीकार करना, विकसित होना ।

नामबोधक संयुक्त क्रियाओं में 'करना', 'होना' (कभी-कभी 'रहना') और 'देना' क्रियाएँ प्रयुक्त होती हैं ।

'करना' और 'होना' के साथ बहुधा संस्कृत की क्रियार्थक संज्ञाएँ और 'देना' के साथ हिन्दी की भाववाचक संज्ञाएँ प्रयुक्त होती हैं; जैसे—

(क) होना—स्वीकार होना, स्मरण होना, कण्ठ होना।

(ख) करना—स्वीकार करना, स्मरण करना, अंगीकार करना, नाश करना, आरंभ करना।

(ग) देना—दिखाई देना, सुनाई देना।

(८) पुनरुक्त संयुक्त क्रियाएँ।

जब दो समान अर्थवाली या समान ध्वनिवाली क्रियाओं का मेल होता है, तब वे पुनरुक्त संयुक्त क्रियाएँ कहलाती हैं; जैसे—पढ़ना-लिखना, करना-धरना समझना-बूझना।

(क) जो क्रिया केवल यमक (ध्वनि) मिलाने के लिए प्रयुक्त होती है, वह निरर्थक होती है; जैसे—ताछना, हवाना।

(ख) पुनरुक्त संयुक्त क्रियाओं में दोनों क्रियाओं का रूपान्तर होता है; परन्तु सहायक क्रिया सिर्फ पिछली क्रिया के साथ प्रयुक्त होती है; जैसे—अपना काम देखो-भालो, यह वहाँ आया-जाया करता है, मिल-जुल कर रहो।

संयुक्त क्रियाओं में कभी-कभी सहकारी क्रिया के आगे दूसरी सहकारी क्रिया आती है, जिससे तीन अथवा चार शब्दों की भी संयुक्त क्रिया बन जाती है; जैसे—उसे तत्काल देख लेना चाहिए। उसे यह काम करना पड़ रहा है। आप यह ग्रंथ उठा ले जा सकते हैं।

संयुक्त क्रियाओं में अन्तिम सहकारी क्रिया के धातु को पिछले कृदन्त या विशेषण के साथ मिलाकर संयुक्त धातु माना जाता है; जैसे—'उठा ले जा सकते हैं' क्रिया में 'उठा ले जा सकते' धातु माना जायगा।

कर्मवाच्य में केवल निम्नलिखित अकर्मक संयुक्त क्रियाएँ आती हैं—

(१) आवश्यकताबोधक क्रियाएँ जिनमें 'होना' और 'चाहिए' का मेल होता है; जैसे-पत्र लिखा जाता था। कविता पढ़ी जानी चाहिए।

(२) आरंभबोधक; जैसे—वह पण्डित समझा जाने लगा। वह भी कवियों में गिना जाने लगा।

(३) नित्यताबोधक; जैसे—काम किया जाता रहेगा—होता रहेगा।

(४) पुनरुक्त क्रियाएँ; जैसे—काम देखा-भाला नहीं गया।

(५) नामबोधक क्रियाएँ बहुधा संस्कृत क्रियार्थक संज्ञा के मेल से बनती हैं; जैसे—कथा श्रवण की जायेगी। यह घटना स्वीकार की जायेगी।

(६) पूर्णताबोधक क्रियाएँ; जैसे—पुस्तकें पढ़ी जा चुकीं।

(७) शक्तिबोधक क्रियाएँ; जैसे—यह पुस्तक पढ़ी जा सकती है।

(८) अवधारणबोधक क्रियाएँ 'लेना', 'देना' और 'डालना' के मेल से बनती हैं; जैसे—पत्र भेज दिया जाता है। काम कर लिया गया।

भाववाच्य में सिर्फ नामबोधक और पुनरुक्त अकर्मक क्रियाएँ प्रयुक्त होती हैं; जैसे—यह अन्याय देखकर किसी से चुप नहीं रहा जाता। उससे कैसे चला-फिरा जायेगा ?

अभ्यास

(१) वाच्य कितने हैं ? सोदाहरण समझाइये।

(२) काल किसे कहते हैं ?

(३) 'खाना' क्रिया का रूप उन कालों के दोनों लिंगों और दोनों वचनों में लिखें—जिनमें 'न' का प्रयोग होता है।

(४) क्रियाओं के प्रधानतः कितने अर्थ हैं ?

(५) तात्कालिक वर्त्तमान और तात्कालिक अपूर्ण भूतकाल की क्रियाएँ बनाने की क्या विधि है ?

(६) निम्नलिखित वाक्यों को शुद्ध करें—हमने पाँच लीची खाये। रामने दो आम खाया। सीता ने सोया। रामने उठा। रानी ने बोली। सीता ने सहेलियों को बुलायी। वह खाया।

(७) 'सोना' क्रिया का रूप भूतकाल के सब भेदों में लिखें।

(८) संयुक्त क्रिया किसे कहते हैं ?

(९) पाँच संयुक्त क्रिया का प्रयोग करें।

(१०) पाँच संयुक्त क्रियाओं का प्रयोग करें।

———

विकृत अव्यय

क्रियाविशेषण—जब आकारान्त विशेषणों का प्रयोग क्रियाविशेषणों की भाँति होता है, तब उसके रूप में बहुधा विकार होता है।

(क) परिमाणवाचक या प्रकारवाचक क्रियाविशेषण जिस विशेषण की विशेषता प्रकट करता है, उसी के विशेष्य के अनुसार उसमें विकार होता है; जैसे—जो जितने बड़े हैं उनकी ईर्ष्या उतनी ही बड़ी है। शास्त्राभ्यास उसका जैसा बढ़ा हुआ था, उद्योग भी उसका वैसा ही अद्भुत था।

(ख) अकर्मक क्रियाओं के कर्त्तरि प्रयोगों में आकारान्त क्रियाविशेषण कर्त्ता के लिंग और वचन के अनुसार बदलते हैं; जैसे—पेड़ आँधी से इतने हिल गये थे कि पैरों के एक आघात से धराशायी हो गये।

(ग) सकर्मक कर्त्तरि और कर्मणि प्रयोगों में ये क्रियाविशेषण कर्म के लिंग और वचन के अनुसार परिवर्त्तित होते हैं; जैसे—खंभे जमीन में सीधे गाड़े गये। एक बन्दर किसी व्यापारी के बाग में जाकर मनमाना कच्चे-पके फल खाता था।

अपवाद—जब सकर्मक क्रिया में कर्म की विवक्षा नहीं होती और उसका प्रयोग अकर्मक क्रिया की भाँति होता है, तब प्रकृत क्रियाविशेषण कर्त्ता के साथ अन्वित न होकर सदा पुल्लिंग एकवचन (अविकृत) रूप में होता है; जैसे—मैं इतना पुकारती हूँ पर तुम बोलते नहीं। विमला कुमारी अच्छा गाती है।

(घ) सकर्मक भावे प्रयोग में पूर्वोक्त क्रियाविशेषण विकल्प से विकृत अथवा अविकृत रूप में आते हैं और अकर्मक भावे प्रयोग में बहुधा अविकृत रूप में रहते हैं; जैसे—एकमात्र राधाकुमारी को मैंने वहाँ खड़ा देखा।

सम्बन्धसूचक अव्यय—जो सम्बन्धसूचक अव्यय मूल में विशेषण है। उनमें आकारान्त शब्द विशेष्य के लिंग-वचन के अनुसार बदलते हैं। विशेष्य विभक्त्यन्त किंवा सम्बन्धसूचकान्त हो तो सम्बन्धसूचक विशेषण विकृत रूप में भी आता है; जैसे—तुम सरीखे लड़के। यह आप ऐसे सज्जनों का ही काम है।

अभ्यास

(१) निम्नलिखित वाक्यों को शुद्ध करें—चादर सीधा ताना गया । सीता इतनी पुकारती है पर सावित्री बोलती नहीं । उसने छड़ी सीधा किया ।

(२) विकृत अव्यय में पाँच उदाहरण लिखें ।

—:०:—

व्युत्पत्ति

विषयारंभ

शब्द-विचार के तीन विभाग हैं—(१) वर्गीकरण, (२) रूपान्तर और (३) व्युत्पत्ति । इनमें से प्रथम दो विभागों की विवेचना हो चुकी है । अब व्युत्पत्ति या शब्द-रचना पर प्रकाश डाला जायगा ।

एक ही भाषा के किसी शब्द से जो दूसरे शब्द बनते हैं, वे बहुधा तीन प्रकारों से बनते हैं—

(१) कुछ शब्दों के पूर्व उपसर्ग जोड़ने से नये शब्द बनते हैं, (२) कुछ शब्दों के बाद प्रत्यय जोडने से नये शब्द बनते हैं और (३) कुछ शब्दों के साथ अन्य शब्द मिलाने से नये सामासिक शब्द बनते हैं ।

उपसर्ग, प्रत्यय और समास से बने हुए शब्दों के सिवा हिन्दी में दो प्रकार के यौगिक शब्द और हैं, जिन्हें क्रमशः पुनरुक्त और अनुकरणवाचक कहते हैं ।

पुनरुक्त शब्द किसी शब्द को दुहराने से बनते हैं; जैसे घर-घर, मारा-मारी काम-धाम, काट-कूट ।

अनुकरणवाचक शब्द किसी पदार्थ की वास्तविकता या कल्पित ध्वनि के अनुकरण पर बनाये जाते हैं; जैसे—मर्मर, टर्रटर्र, कर्कर, धड़ाम ।

प्रत्ययों से बने हुए शब्दों के प्रधानतः दो भेद हैं - कृदन्त और तद्धितान्त ।

कृदन्त और तद्धितान्त -- धातु में जिस प्रत्यय को जोड़ कर संज्ञा, विशेषण अथवा अव्यय बनता है, उस प्रत्यय को "कृत" प्रत्यय कहते हैं और उस प्रत्यय से बने हुए शब्द को "कृदन्त" कहते हैं । जैसे—स्था-स्थावर, तल्-तालु, कूदना-कूद, लिखना-लिखाई आदि । और संज्ञा, सर्वनाम अथवा विशेषण में जिन प्रत्ययों के लगाने से इनका (संज्ञा आदि का) अर्थ कुछ बदल जाता है, उन प्रत्ययों को तद्धित या तद्धितान्त प्रत्यय कहते हैं । जैसे—इतिहास-ऐतिहासिक, लघु-लघुता, भूख-भूखा, पंच-पंचायत आदि ।

उपसर्ग

हिन्दी में उपसर्गयुक्त जो तत्सम शब्द प्रयुक्त होते हैं, उन्हीं शब्दों के सम्बन्ध से संस्कृत उपसर्गों की विवेचना की जायगी ।

(क) संस्कृत उपसर्ग

(१) सु = अच्छा, सहज, अधिक; जैसे—सु + कुमार = सुकुमार, सु + गम्य = सुगम्य, सु + शिक्षित = सुशिक्षित, सु + कर्म = सुकर्म ।

(२) सम् = पूर्ण, अच्छा, साथ; जैसे—सम् + पूर्ण = सम्पूर्ण, सम् + तोष = सन्तोष, सम् + गम = संगम, सम् + आहार = समाहार ।

(३) वि = भिन्न, विशेष, अभाव; जैसे—वि + जय = विजय, वि + हार = विहार, वि + नोद = विनोद; वि + अर्थ = व्यर्थ, वि + उत्पन्न = व्युत्पन्न; वि + देश = विदेश, वि + वाद = विवाद ।

(४) प्रति = विरुद्ध, सामने, एक-एक; जैसे—प्रति + अक्ष = प्रत्यक्ष, प्रति + कूल = प्रतिकूल, प्रति + उत्पन्न = प्रत्युत्पन्न, प्रति + दिन = प्रतिदिन ।

(५) प्र = अधिक, आगे, ऊपर; जैसे—प्र + बल = प्रबल, प्र + उज्ज्वल = प्रोज्ज्वल, प्र + हार = प्रहार, प्र + काश = प्रकाश, प्र + चार = प्रचार, प्र + कट = प्रकट, प्र + ख्यात = प्रख्यात ।

(६) परि = पूर्ण, चारों ओर, आस-पास; जैसे—परि + पूर्ण = परिपूर्ण, परि + हार = परिहार, परि + तोष = परितोष, परि + क्रमा = परिक्रमा ।

(७) अति = अधिक, उस पार, ऊपर; जैसे—अति + अन्त = अत्यन्त, अति + रिक्त = अतिरिक्त, अति + उक्ति = अत्युक्ति, अति + आचार = अत्याचार ।

(८) अधि = ऊपर स्थान में, श्रेष्ठ; जैसे—अधि + अक्ष = अध्यक्ष, अधि + आहार = अध्याहार, अधि + कार = अधिकार, अधि + वास = अधिवास ।

(९) अनु = पीछे, सामान; जैसे—अनु + चर = अनुचर, अनु + ज = अनुज, अनु + करण = अनुकरण, अनु + कम्पा = अनुकम्पा, अनु + नय = अनुनय ।

(१०) अप = बुरा, हीन, विरुद्ध, अभाव; जैसे—अप + यश = अपयश, अप + मान = अपमान, अप + कीर्ति = अपकीर्ति, अप + वाद = अपवाद ।

(११) अभि = ओर, सामने, पास; जैसे—अभि + मुख = अभिमुख, अभि + वादन = अभिवादन, अभि + उदय = अभ्युदय, अभि + इष्ट = अभीष्ट ।

(१२) अव = नीचे, हीन, अभाव; जैसे—अव + काश = अवकाश, अव + तार = अवतार, अव + चेतना = अवचेतना, अव + धान = अवधान, अव + गुण = अवगुण, अव + गत = अवगत ।

(१३) आ = तक, समेत, उल्टा; जैसे—आ + सिन्धु = आसिन्धु, आ + जीवन = आजीवन, आ + समुद्र = आसमुद्र, आ + लोक = आलोक, आ + दान = आदान, आ + हार = आहार, आ + खेट = आखेट ।

(१४) उत् = ऊपर, ऊँचा, श्रेष्ठ; जैसे—उत् + हार = उद्धार, उत् + ज्वल = उज्ज्वल, उत् + तम = उत्तम, उत् + कर्ष = उत्कर्ष, उत् + अय = उदय, उत् + दाम = उद्दाम, उत् + कण्ठा = उत्कंण्ठा ।

(१५) उप = निकट, सदृश, गोण; जैसे—उप + अध्यक्ष = उपाध्यक्ष, उप + आहार = उपहार, उप + कार = उपकार, उप + देश = उपदेश ।

(१६) दुः या दुर या दुस् = बुरा, कठिन, दुष्ट, जैसे—दुः + कर्म = दुष्कर्म, दुः + कर = दुष्कर, दुः + आचार = दुराचार, दुः + गुण = दुर्गुण, दुः + साध्य = दुस्साध्य, दुः + शासन = दुश्शासन, दुः + गम्य = दुर्गम्य ।

(१७) नि = भीतर; नीचे, बाहर; जसे—नि + पात = विपात, नि + दर्शन = निदर्शन, नि + वारण = निवारण, नि + योग = नियोग, नि + योजना —नियोजना ।

(१८) निः या निर् या निस् = निषेध, बाहर; जैसे—निः + नय = निर्णय, निः + अपराध = निरपराध, निः + आनन्द = निरानन्द, निः + रोग = नीरोग, निः + व = नीरव, निः + छल = निश्छल, निः + श्वास = निःश्वास, निः + भय = निर्भय, निः + धन = निर्धन, निः + धारण = निर्धारण, निः + नीत = निर्णीत, निः + फल = निष्फल ।

(१९) परा = पीछे, उल्टा; जैसे—परा + जय = पराजय, परा + भव = पराभव, परा + क्रम = पराक्रम, परा + अधीन = पराधीन ।

(२०) अपि = नीचे, बाहर, भीतर; जैसे—अपि + धान = अपिधान ।

कभी-कभी एक शब्द के साथ दो-तीन उपसर्ग भी आते हैं; जैसे—निः + आ + करण = निराकरण, प्रति + उप + कार = प्रत्युपकार, सम् + आ + लोचना = समालोचना।

संस्कृत में अनेक विशेषण और अव्यय भी उपसर्गों की भाँति प्रयुक्त होते हैं—

(१) अ = अभाव, निषेध; जैसे—अशोक, अधर्म, अज्ञान, अन्याय।

टिप्पणी—स्वरादि शब्दों के पूर्व 'अ' की जगह 'अन्' होता है और 'अन्' के 'न्' में आगे का स्वर मिल जाता है; जैसे—अन् + एक = अनेक, अन् + अन्त = अनन्त, अन् + ईश्वर = अनीश्वर, अन् + अधिकार = अनधिकार।

(२) अधः = नीचे; जैसे—अधःपतन, अधोमुख, अधोगति, अधोभाग।

(३) अन्तः = भीतर; जैसे—अन्तःपुर, अन्तःकरण, अन्तर्जातीय, अन्तर्दाह।

(४) कु (का, कद) = बुरा; जैसे—कुकर्म, कापुरुष, कदाचार, कुमार्ग।

(५) चिर = बहुत, दीर्घ; जैसे—चिरकाल, चिरायु, चिरंजीव, चिरजीवन।

(६) न = अभाव; जैसे—नास्तिक, नास्ति, नेति, नपुंसक, नातिशीतोष्ण।

(७) पुरः = सामने, आगे; जैसे—पुरस्कार, पुरश्चरण, पुरोहित।

(८) पुरा = पहले; जैसे—पुरातन, पुरावृत्त, पुरातत्त्व, पुराण।

(९) पुनः = फिर; जैसे—पुनर्जन्म, पुनर्विवाह, पुनर्मिलन, पुनरुक्त।

(१०) बहिः = बाहर; जैसे—बहिष्कार, बहिर्द्वार, बहिःस्थ।

(११) स = सहित; जैसे—सजीव, सफल, सगोत्र, सानन्द।

(१२) सत् = अच्छा; जैसे—सज्जन, सद्धर्म, सत्पात्र, सद्गुरु।

(१३) सह = साथ; जैसे—सहोदर, सहचर, सहजीवन, सहगमन।

(१४) स्व = अपना (निजी); जैसे—स्वदेश, स्वजीवन, स्वराज्य, स्वभाव, स्वतंत्र।

(ख) हिन्दी उपसर्ग

हिन्दी के उपसर्ग अधिकांशतः संस्कृत उपसर्गों के अपभ्रंश हैं और विशेषतः तद्भव शब्दों के पूर्व आते हैं—

(१) अ = अभाव, निषेध; जैसे—अजान, अचेत, अलग, अछूता, अटल, अथाह।

टिप्पणी—संस्कृत में स्वरादि शब्दों के पहले 'अ' को जगह 'अन्' हो जाता है, परन्तु हिन्दी में 'अन' व्यंजनादि शब्दो के पूर्व आता है; जैसे—अनमोल, अनबन, अनभल, अनजान।

(२) अध (संस्कृत—अर्द्ध) = आधा; जैसे—अधकच्चा, अधपका।

(३) औ (संस्कृत—अव) = हीन, निषेध; जैसे—औगुन, औघट।

(४) नि (संस्कृत—निः) रहित; जैसे—निडर, निकम्मा।

(५) भर = पूरा, ठीक; जैसे—भरपेट, भरपूर, भरसक।

(६) सु (संस्कृत—सु) = अच्छा; जैसे—सुडौल, सुजान, सपूत।

(७) कु = खराब; जैसे—कुठौर, कुडौल, कुढंगा, कपूत।

(८) स - सहित; जैसे—सवेरा, सलग, सचेत, सहेली, साढ़े (सं०—सार्द्ध)।

(ग) उर्दू उपसर्ग

(१) कम = थोड़ा, हीन; जैसे—कमजोर, कमबख्त।

(२) खुश = अच्छा; जैसे—खुशमिजाज, खुशदिल, खुशकिस्मत।

(३) गैर = भिन्न; जैसे—गैरमुल्क, गैरहाजिर।

(४) ना = अभाव; जैसे—नाराज, नापसन्द, नालायक, नामर्द।

(५) ब = ओर, में, अनुसार; जैसे—बनाम, बइजलास, बदस्तूर।

(६) बद = बुरा; जैसे—बदमाश, बदबू, बदनाम।

(७) बा = साथ; जैसे—बाकायदा, बातमीज।

(८) बे = बिना; जैसे—बेचारा (हिन्दी-विचारा), बेईमान, बेतरह, बेचैन, बेजोड़, बेसुरा। इस उपसर्ग का प्रयोग हिन्दी शब्दो के साथ भी होता है।

(९) सर = मुख्य; जैसे—सरताज, सरदार, सरकार।

(१०) हर = प्रत्येक; जैसे— हरमाह, हररोज, हरसाल।

इस उपसर्ग का प्रयोग हिन्दी शब्दों के साथ अधिकता से होता है; जैसे—हर काम, हर घड़ी, हर बार, हर एक, हर कोई।

(११) ऐन = ठीक, निश्चित; जैसे—ऐन वक्त, ऐन मौका।

(१२) हम = साथ; जैसे—हमउम्र, हमदर्द, हमराही।

(१३) ला = बिना; जसे—लासानी, लाचारी, लाजवाब।

(१४) बिला = बिना; जैसे—बिलाकसूर, बिलाशक ।
(१५) फी = प्रति; जैसे—फी मन, फी गज ।
(१६) दर = में; जैसे—दर अस्ल, दर हकीकत ।

(घ) अँगरेजी उपसर्ग

(१) सब = उप; जैसे—सब इन्सपेक्टर, सब रजिष्ट्रार आदि ।
(२) हेड = प्रधान; जैसे—हेड पण्डित, हेड मौलवी, हेड मास्टर आदि ।

हिन्दी प्रत्यय

(क) हिन्दी कृदन्त

(१) आकारान्त धातु और शून्य प्रत्यय के मेल से भाववाचक संज्ञाएँ बनती हैं; जैसे—

खेलना	खेल ।	मरना	मार ।
जाँचना	जाँच ।	समझना	समझ ।
पहुँचना	पहुँच ।	चमकना	चमक ।
पकड़ना	पकड़ ।	टालना	टाल ।
माँगना	माँग ।	हारना	हार ।
लूटना	लूट ।	साजना	साज ।

(क) किसी-किसी धातु के उपान्त्य ह्रस्व 'इ' और 'उ' का गुणादेश होता है; जैसे—

हिलना—मिलना—हेलमेल ।

(ख) किसी-किसी धातु के उत्पान्त्य 'अ' की वृद्धि होती है; जैसे—

अड़ना	आड़ ।	मरना	मार ।
चलना	चाल ।	बढ़ना	बाढ़ ।

(२) 'अक्कड़' प्रत्यय के योग से कर्तृवाचक शब्द बनता है; जैसे—

पीना	पियक्कड़ ।	कूदना	कुदक्कड़ ।
भूलना	भुलक्कड़ ।	बूझना	बुझक्कड़ ।

(३) 'अन्त' प्रत्यय के योग से विशेषण बनता है; जैसे—

गढ़ना	गढ़न्त ।	रटना	रटन्त ।
पढ़ना	पढ़न्त ।	लड़ना	लड़न्त ।
चढ़ना	चढ़न्त ।	लिखना	लिखन्त ।

(क) 'अन्त' प्रत्यय के योग से भी संज्ञा बनती है; जैसे—भिड़ना—भिड़न्त ।

(४) 'आ' प्रत्यय के योग से बहुधा भाववाचक संज्ञाएँ बनती हैं; जैसे—

जोड़ना	जोड़ा ।	घेरना	घेरा ।
फेरना	फेरा ।	लिखना	लेखा ।

(क) किसी-किसी धातु के उपान्त्य में गुण होता है; जैसे—

मिलना	मेला ।	घटना	घाटा ।
टूटना	टोटा ।	झुकना	झोंका ।

(ख) 'आ' प्रत्यय के योग से करणवाचक संज्ञाएँ भी बनती हैं; जैसे—

झूलना	झूला ।	ठेलना	ठेला ।
घेरना	घेरा ।		

(५) 'आई' प्रत्यय के योग से भाववाचक संज्ञाएँ बनती हैं; जैसे—

पिसना	पिसाई ।	छापना	छपाई ।
लिखना	लिखाई ।	चढ़ना	चढ़ाई ।
लड़ना	लड़ाई ।	सिलना	सिलाई ।

(क) 'आना' क्रिया से भाववाचक संज्ञा 'अवाई' बनती है जिसका प्रयोग कविवर श्री आरसी प्रसाद सिंह ने यों किया है—

"आज अवाई है ऋतुपति की,
सरस समीरण डोल रहा ।"

(ख) यदि आद्य स्वर 'आ' हो तो 'अ' में, 'ओ' हो तो 'उ' में और 'ई' हो तो 'इ' में बदलता है; जसे—

काटना	कटाई ।	चाटना	चटाई ।
खोदना	खुदाई ।	लादना	लदाई ।
ढालना	ढलाई ।	सींचना	सिंचाई ।
पीटना	पिटाई ।	घोटना	घुटाई ।

(६) 'आऊ' प्रत्यय के योग से विशेषण बनता है; जैसे—

टिकना	टिकाऊ।	बिकना	बिकाऊ।
खाना	खाऊ।	उड़ना	उड़ाऊ।

(७) 'ऊ' प्रत्यय के योग से संज्ञा बनती है; जैसे—झाड़ना—झाड़ू।

(८) 'वैया' प्रत्यय के योग से पुल्लिग संज्ञा बनती है; जैसे—

खेना	खेवैया।	गाना	गवैया।
रखना	रखवैया।	बजना	बजवैया।

(९) 'वाँ' प्रत्यय के योग से विशेषण बनता है; जैसे—ढालना—ढालवाँ।

(१०) 'ना' प्रत्यय के योग से पुल्लिग संज्ञा बनती है, जैसे—

बेलना	बेलना।	ओढ़ना	ओढ़ना

(क) किसी-किसी धातु का आद्य स्वर दीर्घ होते ह्रस्व में बदल जाता है; जैसे—

बाँधना	बँधना।	छानना	छनना।
कूटना	कुटना।	लादना	लदना।

(ख) 'ना' पुल्लिग वाची प्रत्यय का स्त्रीलिंगवाची प्रत्यय 'नी' है; जैसे—

ओढ़ना	ओढ़नी।	रोना	रोनी।
करना	करनी।	धौंकना	धौंकनी।
चाटना	चटनी।	कतरना	कतरनी।
बेलना	बेलनी।	सूँघना	सूँघनी।

(११) 'न' प्रत्यय के योग से संज्ञा बनती है; जैसे—

बेलना	बेलन।	देना	देन।
लेना	लेन।	झाड़ना	झाड़न।
बुहारना	बुहारन।	जलना	जलन।

(१२) 'ती' प्रत्यय के योग से स्त्रीलिंग भाववाचक संज्ञा बनती है, जैसे—

घटना	घटती।	बढ़ना	बढ़ती।

(१३) 'त' प्रत्यय के योग से स्त्रीलिंग संज्ञा बनती है; जैसे—

बचना	बचत।	खपना	खपत।
रंगना	रंगत।		

(१४) 'की' प्रत्यय के योग से स्त्रीलिंग संज्ञा बनती है; जैसे—

डूबना डुबकी ।

(१५) 'क' प्रत्यय के योग से विशेषण या पुल्लिग संज्ञा बनती है; जैसे—

मारना मारक । घालना घालक ।

(१६) 'औवल' प्रत्यय के योग से भाववाचक पुल्लिग संज्ञा बनती है; जैसे—

बूझना बुझौवल ।

(१७) 'अंकू' प्रत्यय के योग से कर्त्तृवाचक शब्द बनता है; जैसे—

उड़ना उड़ंकू ।

(१८) 'आक' प्रत्यय के योग से कर्त्तृवाचक शब्द बनता है; जैसे—

तैरना तैराक ।

(१९) 'आकू' प्रत्यय के योग से कर्त्तृवाचक शब्द बनता है; जैसे—

लड़ना लड़ाकू ।

(२०) 'आका' प्रत्यय के योग से कर्त्तृवाचक शब्द बनता है; जैसे—

लड़ना लड़ाका ।

(२१) 'आन' प्रत्यय के योग से भाववाचक संज्ञा बनती है; जैसे—

उठना उठान । उड़ना उड़ान ।

(२२) 'आप' प्रत्यय के योग से भाववाचक पुल्लिग संज्ञा बनती है; जैसे—

मिलना मिलाप ।

(२३) 'आपा' प्रत्यय के योग से भाववाचक पुल्लिग संज्ञा बनती है; जैसे—

अपनाना अपनापा । पूजना पुजापा ।

(२४) 'आव' प्रत्यय के योग से भाववाचक पुल्लिग संज्ञा बनती है; जैसे—

चढ़ना चढ़ाव । बहना बहाव ।
लगना लगाव । छिड़कना छिड़काव ।
बचना बचाव । सुझाना सुझाव ।

(२५) 'आवा' प्रत्यय के योग से भाववाचक पुल्लिग संज्ञा बनती है; जैसे—

बहकाना बहकावा । भुलाना भुलावा ।
बुलाना बुलावा चढ़ाना चढ़ावा ।

(२६) 'आवट' प्रत्यय के योग से भाववाचक स्त्रीलिंग संज्ञा बनती है; जैसे—

लिखना	लिखावट ।	सजना	सजावट ।
बनना	बनावट ।	रुकना	रुकावट ।
थकना	थकावट ।	मिलना	मिलावट ।

(२७) 'आवना' या 'आवनी' प्रत्यय के योग से पुल्लिग या स्त्रीलिंग विशेषण बनता है; जैसे—

डराना—डरावना या डरावनी ।
लुभाना—लुभावना या लुभावनी ।
सुहाना—सुहावना या सुहावनी ।

(२८) 'आहट' प्रत्यय के योग से भाववाचक स्त्रीलिंग संज्ञा बनती है; जैसे—

चिकनाना	चिकनाहट ।	चिल्लाना	चिल्लाहट ।
गुर्राना	गुर्राहट ।	भिन्नाना	भिन्नाहट ।
घबराना	घबराहट ।	अकुलाना	अकुलाहट ।
गडगड़ाना	गड़गड़ाहट ।	टर्रटराना	टर्रटर्राहट ।

(२९) 'इयल' प्रत्यय के योग से विशेषण बनता है; जैसे—

अड़ना	अड़ियल ।	सड़ना	सड़ियल ।

(३०) 'ई' प्रत्यय के योग से भाववाचक स्त्रीलिंग संज्ञा बनती है; जैसे—

हँसना	हँसी ।	बोलना	बोली ।
धमकाना	धमकी ।	घुड़कना	घुड़की ।

(क) कारणवाचक; जैसे—रेतना—रेती । फाँसना—फाँसी ।

(३१) 'इया' प्रत्यय के योग से विशेषण बनता है; जैसे—

बढ़ना	बढ़िया ।	घटना	घटिया ।

(क) कर्त्तृवाचक; जैसे—जडना जड़िया । मढ़ना—मढ़िया ।
धुनना घुनिया । बनना—बनिया ।

(३२) 'एरा' प्रत्यय के योग से संज्ञा बनती है; जैसे—

लूटना	लुटेरा ।	कमाना	कमेरा ।

(३३) 'ऐया' प्रत्यय के योग से पुल्लिग संज्ञा बनती है; जैसे—
परोसना परोसैया।

(३४) 'एत' प्रत्यय के योग से पुल्लिग संज्ञा बनती है; जसे—
लड़ना लड़ैत। चढ़ना चढ़ैत।

(३५) 'ओड़' प्रत्यय के योग से विशेषण बनता है; जैसे—
हँसना हँसोड़।

(३६) 'औता' या औती' प्रत्यय के योग से पुल्लिग या स्त्रीलिंग संज्ञा बनती है; जैसे—
समझना समझौता। मनाना मनौती।

(३७) 'औना' या 'औनी' या 'अवनी' प्रत्यय के योग से पुल्लिग या स्त्रीलिंग संज्ञा बनती है; जैसे—
खेलना खिलौना। बिछाना बिछौना।
ओढ़ना उढ़ौना। छाना छावनी।

संस्कृत तद्धितान्त

(१) 'इक' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—

व्यक्ति	वैयक्तिक।	न्याय	नैयायिक।
व्यवहार	व्यावहारिक।	समाज	सामाजिक।
रज (स्)	राजसिक।	तम (स्)	तामसिक।
मन (स)	मानसिक	सत्त्व	सात्त्विक।
युग	यौगिक।	मास	मासिक।
वर्ष	वार्षिक।	मनुष्य	मानुषिक।
इतिहास	ऐतिहासिक।	भूगोल	भौगोलिक।
समर	सामरिक।	जाल	जालिक।
काल	कालिक।	साहस	साहसिक।
वेद	वैदिक।	नीति	नैतिक।
आयुर्वेद	आयुर्वेदिक।	राजनीति	राजनीतिक।
विज्ञान	वैज्ञानिक।	साहित्य	साहित्यिक।

व्यास	वैयासिक ।	धर्म	धार्मिक ।
रस	रसिक ।	अध्यात्म	आध्यात्मिक ।
पिता	पैतृक ।	माता	मातृक ।
भ्राता	भ्रातृक ।	उद्योग	औद्योगिक ।
वसन्त	वासन्तिक ।	समुद्र	सामुद्रिक ।
विषय	वैषयिक ।	इन्द्रजाल	ऐन्द्रजालिक ।

(२) 'आयन' प्रत्यय के योग से संज्ञा; जैसे—

गर्ग	गार्ग्यायिण ।	वत्स	वात्स्यायन ।
द्वीप	द्वैपायन ।	बोध	बोधायन ।
अश्वल	आश्वलायन ।	दक्ष	दाक्षायण ।

कात्य—कात्यायन । लाट्य—लाट्यायन

(३) 'एय' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—

गंगा—गांगेय । कुलटा—कौलटेय

(क) 'एय' प्रत्यय के योग से संज्ञा; जैसे—

कुन्ती—कौन्तेय । राधा—राधेय ।
भगिनी—भागिनेय । विमाता—वैमात्रेय ।
अतिथि—आतिथेय । पुरुष—पौरुषेय ।

(४) 'ता' या 'त्व' प्रत्यय के योग से स्त्रीलिंग या पुंल्लिग संज्ञा; जैसे—

नर—नरता या नरत्व । मनुष्य—मनुष्यता या मनुष्यत्व ।
लघु—लघुता या लघुत्व । मधुर—मधुरता या मधुरत्व ।
मूर्खता या मूर्खत्व । साधु—साधुता या साधुत्व ।

(५) 'अ' प्रत्यय के योग से संज्ञा; जैसे—

रघु—राघव । मृदु—मार्दव ।
सुष्ठु—सौष्ठव । शिशु—शैशव ।
मनस्—मानस । तिल—तैल ।
चोर—चौर । पुत्र—पौत्र ।

वसुदेव—वासुदेव ।	पाण्डु—पाण्डव ।
कुरु—कौरव ।	वत्स—वात्स ।

(क) अपत्यवाचक प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—

मुनि—मौन ।	पृथ्वी—पार्थिव ।
शंकर—शांकर ।	विष्णु—वैष्णव ।

(६) 'य' प्रत्यय के योग से संज्ञा; जैसे—

कवि—काव्य ।	सखा—सख्य ।
प्रवीण—प्रावीण्य ।	सुजन—सौजन्य ।
सम्राट्— साम्राज्य ।	चोर—चौर्य ।
सुन्दर—सौन्दर्य ।	मधुर—माधुर्य ।

(क) 'य' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—

प्रतिपद—प्रतिपाद्य ।	भोग—भोग्य ।
योग—योग्य ।	सभा—सभ्य ।
वायु—वायव्य ।	आयुष—आयुष्य ।
अवाची—अवाच्य ।	प्राची—प्राच्य ।

(७) 'क' प्रत्यय के योग से विशेषण या संज्ञा; जैसे—

विशेष—विशेषक ।	मीमांसा—मीमांसक ।
रूप्य—रूप्यक ।	अवश्य—आवश्यक ।
लोष्ट—लोष्टक ।	पिष्ट—पिष्टक ।

(८) 'ईय' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—

मानव—मानवीय ।	दानव—दानवीय ।
स्वर्ग—स्वर्गीय ।	शास्त्र—शास्त्रीय ।
वायु—वायवीय ।	जल—जलीय ।
भारत—भारतीय ।	जाति—जातीय ।

(९) 'मान्' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—

श्री—श्रीमान् ।	धी—धीमान् ।
मति—मतिमान् ।	बुद्धि—बुद्धिमान् ।

(क) 'त्र' प्रत्यय के योग से; जैसे—

एक—एकत्र । सर्व सर्वत्र ।

(१०) ईयस प्रत्यय के योग से; जैसे—

वर—वरीयान् (वरीय) । लघु—लघीयान् (लघीय) ।

कन—कनीयान् (कनीय) । महत्—महीयान् (महीय) ।

(११) 'कल्प' प्रत्यय के योग से; जैसे—

काया—कायाकल्प । कवि—कविकल्प ।

(१२) 'चित्' प्रत्यय के योग से; जैसे—कदाचित्, किंचित्, क्वचित् ।

(१३) 'तः' प्रत्यय के योग से; जैसे—

तत्व—तत्वतः । सर्वांश—सर्वांशतः ।

स्व—स्वतः । प्रधान—प्रधानतः ।

(१४) 'था' प्रत्यय के योग से; जैसे—

सर्व—सर्वथा । अन्य—अन्यथा ।

(१५) दा प्रत्यय के योग से; जैसे—सर्वदा, यदा, कदा ।

(१६) 'धा' प्रत्यय के योग से; जैसे—शतधा, बहुधा, द्विधा ।

(१७) 'मात्र' प्रत्यय के योग से जैसे—क्षणमात्र, पलमात्र, नाममात्र ।

(१८) 'आवल' प्रत्यय के योग से; जैसे—

दन्त—दन्तावल । शिखा—शिखावल ।

(१९) 'शः' प्रत्यय के योग से; जैसे—क्रमशः, अक्षरशः, कोटिशः ।

(२०) 'सात्' प्रत्यय के योग से; जैसे—

भूमि—भूमिसात । भस्म—भस्मसात् ।

अग्नि—अग्निसात् । आत्मा—आत्मसात् ।

(२१) 'वत्' प्रत्यय के योग से; जैसे—पुत्र—पुत्रवत्, आत्मा—आत्मवत् ।

(२२) 'व' प्रत्यय के योग से; जैसे—

केश—केशव । राजी—राजीव ।

अर्णस्—अर्णव ।

(२३) 'तन' प्रत्यय के योग से जैसे;—पुरा—पुरातन । चिरं—चिरन्तन ।

(२४) 'इनी' प्रत्यय के योग से; जैसे—

पुष्कर—पुष्करिणी : तरंग—तरंगिणी :

(२५) 'मह' प्रत्यय के योग से; जैसे—

मातृ—मातामह । पितृ—पितामह ।

(२६) 'इक' प्रत्यय के योग से; विशेषण, जैसे—धन—धनिक, केश—केशिक ।

(२७) 'मी' प्रत्यय के योग से विशेषण, जैसे—वाक्—वाग्मी :

(२८) 'इमा' प्रत्यय के योग से, भाववाचक संज्ञा; जैसे—

अरुण	अरुणिमा ।	नील	नीलिमा ।
पीत	पीतिमा ।	हरित	हरीतिमा ।
गुरु	गरिमा ।	लघु	लघिमा ।
रक्त	रक्तिमा ।	महत्	महिमा ।

(२९) 'वान्' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—

ज्ञान	ज्ञानवान् ।	बल	बलवान् ।
रूप	रूपवान् ।	धन	धनवान् ।

(३०) 'कट' प्रत्यय के योग से विशेषण, जैसे—

प्र—प्रकट, वि—विकट, सम्—संकट, उत्—उत्कट ।

(३१) 'मय' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—

जल	जलमय ।	बल	बलमय ।
मधु	मधुमय ।	सुख	सुखमय ।
दु:ख	दुख:मय ।	रस	रसमय ।

(३२) 'र' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—

मुख	मुखर ।	मधु	मधुर ।
पाण्डु	पाण्डुर ।	सिन्धु	सिन्धुर ।

(३३) 'वी' प्रत्यय के योग से विशेषण, जैसे—

यशस्	यशस्वी ।	मनस्	मनस्वी ।
माया	मायावी ।	तपस्	तपस्वी ।
तेजस्	तेजस्वी ।	ओजस्	ओजस्वी ।

(३४) 'इत' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—

जीव	जीवित।	तारक	तारकित।
शंका	शंकित।	झंकार	झंकारित।
विरह	विरहित।	पूजा	पूजित।
सम्मान	सम्मानित।	विलोप	विलोपित।

(३५) 'म' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—

मध्य	मध्यम।	आदि	आदिम।

(३६) 'ई' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—

ज्ञान	ज्ञानी।	बल	बली।
दान	दानी।	मान	मानी।
विहार	बिहारी।	विज्ञान	विज्ञानी।

(३७) 'इम' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—

अन्त	अन्तिम।	अन्तर	अन्तरिम।

(३८) 'इल' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—

बोझ	बोझिल।	पंक	पंकिल।
फेन	फेनिल।	धूम	धूमिल।

(३९) 'ल' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—

अंस	अंसल।	ऊर्मि	ऊर्मिल।
पांसु	पांसुल।	शीत	शीतल।
मांस	मांसल।	श्याम	श्यामल।

(४०) 'ईन' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—

पार	पारीण।	कुल	कुलीन।
ग्राम	ग्रामीण।	काल	कालीन।

(४१) 'आलु' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—

दया	दयालु।	कृपा	कृपालु।

(४२) 'श' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—

कर्क	कर्कश ।	रोम	रोमश ।

(४३) 'इष्ठ' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—

बल	बलिष्ठ ।	गुरु	गरिष्ठ ।

(४४) 'ठ' प्रत्यय के योग स विशेषण; जैसे—कर्म—कर्मठ ।

प्रत्ययवत् प्रयुक्त संस्कृत शब्द

(१) ज्ञ—अज्ञ, विज्ञ, अभिज्ञ, भूगोलज्ञ, नीतिज्ञ, इतिहासज्ञ, विज्ञानज्ञ ।

(२) हीन—बलहीन, धनहीन, सम्पत्तिहीन, बुद्धिहीन, भाग्यहीन ।

(३) हर, हर्त्ता, हारक, हारी—तापहर, तापहारक, तापहर्त्ता, तापहारी, शोकहर, वित्तहर शापहर, शोकहर्त्ता ।

(४) धर—जलधर, भूधर, पयोधर, गिरिधर, वंशीधर, वारिधर ।

(५) स्थ—तटस्थ, गृहस्थ, उदरस्थ, कूटस्थ ।

(६) अर्थ—दानार्थ, ज्ञानार्थ, लाभार्थ, धर्मार्थ, प्रकाशनार्थ ।

(७) अन्वित—गौरवान्वित, महिमान्वित ।

(८) आर्थी—शिक्षार्थी, विद्यार्थी, ज्ञानार्थी ।

(९) अन्तर—विषयान्तर, अर्थान्तर, मतान्तर, देशान्तर, भाषान्तर, रूपान्तर ।

(१०) आक्रान्त—रोगाक्रान्त, पदाक्रान्त, शोकाक्रान्त ।

(११) अधीन—पराधीन, स्वाधीन ।

(१२) भेद—कारकभेद, मित्रभेद, शत्रुभेद, बुद्धिभेद, ज्ञानभेद, मतभेद ।

(१३) रहित—बलरहित, बुद्धिरहित, चेतनारहित ।

(१४) भाव—मित्रभाव, पुत्रभाव, शत्रुभाव ।

(१५) परायण—स्वार्थपरायण, धर्मपरायण, नीतिपरायण ।

(१६) रूप—देवरूप, पशुरूप, दानवरूप, मानवरूप ।

(१७) पर—तत्पर, स्वार्थपर ।

(१८) शील—विनयशील, कर्मशील, बलशील, विचारशील ।

(१९) निष्ठ—धर्मनिष्ठ, ब्रह्मनिष्ठ ।

(२०) शून्य—बुद्धिशून्य, धर्मशून्य, चेतनाशून्य ।

(२१) नाशक—बालनाशक, वीर्यनाशक, दुःखनाशक, रोगनाशक ।

(२२) वीर—दयावीर, धर्मवीर, दानवीर, सत्यवीर, कर्मवीर ।

(२३) शूर—दयाशूर, धर्मशूर, कर्मशूर, सत्यशूर ।

(२४) धर्म – पितृ-धर्म, मातृ-धर्म, मानव-धर्म ।

(२५) साध्य—कष्टसाध्य, यत्नसाध्य ।

(२६) धार—सूत्रधार, कर्णधार ।

(२७) गत—मनोगत, दृष्टिगत, अन्तर्गत, कण्ठगत, हृदयगत ।

(२८) ग—तुरग, आशुग, बिलग, उरग, भुजग, अग, नग, विहग ।

(२९) ग्रस्त—लोभग्रस्त, मोहग्रस्त, अभावग्रस्त, रोगग्रस्त ।

(३०) कालीन—पूर्वकालीन, भूतकालीन, भविष्यत्कालीन, समकालीन ।

(३१) कार—स्वर्णकार, कलाकार, घटकार, साहित्यकार, उपन्यासकार, ग्रंथकार ।

(३२) घ्न—शत्रुघ्न, तमोघ्न, कृतघ्न ।

(३३) कर—दिनकर, सुखकर, दुःखकर, शान्तिकर ।

(३४) चर—जलचर, नभचर, भूचर, खेचर, सहचर ।

(३५) उत्तर—लोकोत्तर, पश्चिमोत्तर, कालोत्तर ।

(३६) चिन्तक—हितचिन्तक, शुभचिन्तक ।

(३७) आढ्य—धनाढ्य, गुणाढ्य ।

(३८) जन्य—लोभजन्य, मोहजन्य, बुद्धिजन्य ।

(३९) आस्पद—निन्दास्पद, हास्यास्पद, लज्जास्पद ।

(४०) ज—जलज, वारिज, मनोज, सरोज, अब्ज, नीरज, पंकज ।

(४१) उन्मुख—मरणोन्मुख, पतनोन्मुख ।

(४२) अध्यक्ष—दानाध्यक्ष, कोषाध्यक्ष ।

(४३) अनुसार—समयानुसार, नियमानुसार, आज्ञानुसार ।

(४४) अतीत—कल्पनातीत, आशातीत ।

(४५) अनुरूप—आज्ञानुरूप ।

(४६) दायक—सुखदायक, दुःखदायक, मुक्तिदायक, कल्याणदायक ।

(४७) आतुर—चिन्तातुर, कामातुर ।

(४८) दायी—सुखदायी, दुःखदायी ।

(४९) आकुल—शोकाकुल- चिन्ताकुल, दुःखाकुल ।

(५०) आचार—शिष्टाचार, धर्माचार, लोकाचार, पापाचार ।

(५१) दर्शी—त्रिकालदर्शी, स्वप्नदर्शी, आत्मदर्शी ।

(५२) द्रष्टा—स्वप्नद्रष्टा, भविष्यत्द्रष्टा ।

(५३) आपन्न—संकटापन्न, स्थानापन्न ।

(५४) द—सुखद, दुःखद, नीरद, जलद, वारिद ।

(५५) वाह—जलवाह, वारिवाह, नीरवाह ।

(५६) वह—गन्धवह ।

(५७) जीवी—बुद्धिजीवी, श्रमजीवी ।

(५८) आर्त्त—शोकार्त्त, दुःखार्त्त ।

(५९) जाल—मायाजाल, शब्दजाल, इन्द्रजाल ।

(६०) आशय—जलाशय, महाशय, सदाशय ।

(६१) शाली—बलशाली, गौरवशाली ।

हिन्दी तद्धितान्त

(१) 'आ' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—
भूख = भूखा । प्यास = प्यासा । मैल = मैला ।

(२) 'आ' प्रत्यय के योग से संज्ञा; जैसे—
जोड़ = जोड़ा । बोझ = बोझा । चूर = चूरा ।

(३) 'आई' प्रत्यय के योग से भाववाचक संज्ञा; जैसे—
अच्छा = अच्छाई । भला = भलाई । बुरा = बुराई ।

(४) 'आऊ' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—
घर = घराऊ । चाल = चलाऊ । उपज = उपजाऊ । आगे = अगाऊ ।
पण्डित = पण्डिताऊ । जड़ = जड़ाऊ ।
'आना' प्रत्यय के योग से स्थानवाचक; जैसे—

राजपूत = राजपूताना। हिन्दू = हिन्दुआना। तिलंग = तिलंगाना। उड़िया = उड़ियाना।

(५) 'आयत' प्रत्यय के योग से स्त्रीलिंग संज्ञा; जैसे—बहुत = बहुतायत। पंच = पंचायत।

(६) 'आर' प्रत्यय के योग से पुल्लिग जातिवाचक संज्ञा; जैसे-सोना-सोनार। लोहा—लोहार। काम—कमार। चाम—चमार। गाँव—गँवार।

(७) 'आल' प्रत्यय के योग से स्त्रीलिंग संज्ञा; जैसे—नाना—ननिहाल; ससुर—ससुराल।

(क) 'अल' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—दाढ़ी—दढ़ियल।

(८) 'आस' प्रत्यय के योग से स्त्रीलिंग संज्ञा; जैसे—मीठा—मिठास। खट्टा—खटास।

(९) 'आलू' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—झगड़ा—झगड़ालू। लाज—लजालू।

(१०) 'आवट' प्रत्यय के योग से स्त्रीलिंग संज्ञा; जैसे—आम—अमावट।

(११) 'ई' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—ऊन—ऊनी ? रेशम—रेशमी।

(क) 'ई' प्रत्यय के योग से ऊनवाचक संज्ञा; जैसे घाट—घाटी। पहाड़—पहाड़ी। ढोलक—ढोलकी। डोरा—डोरी। टोकरा—टोकरी। रस्सा—रस्सी। प्याला—प्याली।

(ख) 'ई' प्रत्यय के योग से व्यापारवाचक पुल्लिंग संज्ञा; जैसे—तेल—तेली, माला—माली।

(ग) 'ई' प्रत्यय के योग से समुदायवाचक संज्ञा; जैसे—बीस—बीसी। बत्तीस—बत्तीसी। छत्तीस—छत्तीसी।

(घ) 'ई' प्रत्यय के योग से स्त्रीलिंग भाववाचक संज्ञा; जैसे—रंगीन—रंगीनी। खेत—खेती। चोर—चोरी।

(ङ) 'ई' प्रत्यय के योग से भूषणार्थक संज्ञा; जैसे—अँगूठा—अँगूठी। कण्ठ—कण्ठी ! पहुँचा—पहुँची। पैर—पैरी।

(१२) 'एल' प्रत्यय के योग से संज्ञा; जैसे नाक—नकेल। फूल—फुलेल।

(१३) 'एल' या 'ऐला' प्रत्यय के योग से संज्ञा या विशेषण; जैसे—वन—वनैला। विष—विषैला। एक—अकेला। आधा—अधेला। सौत—सौतेला। बाघ—बघेला।

(१४) 'औटा' या 'औटी' या 'ओट' प्रत्यय के योग से संज्ञा; जसे—लँगोट, मुखौटा, चमोटी, लँगोटा, लँगोटी।

(१५) 'औड़ी' प्रत्यय के योग से स्त्रीलिंग संज्ञा; जैसे—हाथ—हथौड़ी।

(१६) 'औड़ा' प्रत्यय के योग से पुल्लिग संज्ञा; जैसे—हाथ—हथौड़ा।

(१७) 'औती' प्रत्यय के योग से विभिन्न शब्द रूप; जैसे—काठ—कठौती। बाप—बपौती।

(१८) 'वाँ' प्रत्यय के योग से क्रमवाचक विशेषण; जैसे—पाँचवाँ, सातवाँ, आठवाँ।

(१९) 'आँ' प्रत्यय के योग से अव्यय; जैसे—यह—यहाँ। वह—वहाँ।

(२०) 'ही' प्रत्यय के योग से विभिन्न शब्दरूप; जैसे—तब—तभी ['ब' और 'ह' मिलकर 'भ' होते हैं]। जब—जभी। वह—वही। यह—यही। तुम—तुम्हीं। उस—उसी। जिन—जिन्हीं। किन—किन्हीं।

(२१) 'दार' प्रत्यय के योग से उपाधिवाचक; जैसे-पोत-पोद्दार, पोतदार।

(२२) 'हारा' „ „ „ „ पुल्लिग संज्ञा; जैसे—
लकड़ी—लकड़हारा। चूड़ी—चूड़िहारा।

(२३) 'हरा' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—
एक—इकहरा। दो—दोहरा। तीन—तिहरा।

(२४) 'सरा' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—दो-दूसरा। तीन-तीसरा।

(२५) 'हला' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—रूपा—रूपहला। सोना—सुनहला। नौ—नहला। दस—दहला। प्रथम—पहला।

(२६) 'सा' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—चाँद-सा, दूध-सा।

(२७) 'वाँ' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—बीस-बीसवाँ, तीस-तीसवाँ।

(२८) 'ईला' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—

लाज लजीला। हठ हठीला। चमक चमकीला।
साज सजीला। रंग रंगीला। रस रसीला।

(२९) 'आहट' प्रत्यय के योग से स्त्रीलिंग संज्ञा; जैसे;—

चिकना चिकनाहट। कड़वा कड़वाहट।

(३०) 'इया' प्रत्यय के योग से कर्तृवाचक संज्ञा; जैसे—

आढ़त आढ़तिया। माखन मखनिया।

(क) 'इया प्रत्यय के योग से ऊनवाचक संज्ञा; जैसे—

खाट खटिया। बूढ़ा बुढ़िया।
लोटा लुटिया। डिब्बा डिबिया।

(ख) 'इया प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—

कलकत्ता कलकतिया। पटना पटनिया।

(३१) 'ऊ' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—

गरज गरजू। धर धरू। ढाल ढालू।
बाजार बाजारू। पेट पेटू।

(३२) 'एरा' प्रत्यय के योग से सम्बन्धवाचक संज्ञा; जैसे—

साँप सँपेरा। काँसा कँसेरा।

(क) 'एरा प्रत्यय के योग से कर्तृवाचक संज्ञा; जैसे—

मामा ममेरा। फूफा फुफेरा।

(३३) 'एड़ी' प्रत्यय के योग से कर्तृवाचक संज्ञा; जैसे—

गाँजा गँजेड़ी। भाँग भँगेड़ी।

(३४) 'ऐत' प्रत्यय के योग से संज्ञा; जैसे—

बाना बानैत। कमान कमनैत। लट्ठ लठैत।

(३५) 'ऐल' प्रत्यय के योग से विशेषण: जैसे—

खपरा खपरैल। दूध दुधैल।

(३६) 'औता' प्रत्यय के योग से पुंल्लिग संज्ञा; जैसे—

काठ कठौता। काजर कजरौटा।

(३७) 'ड़ी' प्रत्यय के योग से स्त्रीलिंग संज्ञा; जैसे—

चाम चमड़ी।

दाम दमड़ी।

(३८) 'ड़ा' प्रत्यय के योग से पुल्लिग संज्ञा; जैसे—चाम—चमड़ा।

(३९) 'नी' ,, ,, ,, स्त्रीलिंग संज्ञा; जैसे—

चाँद चाँदनी। पाँव पैंजनी।

(४०) 'वाहा' प्रत्यय के योग से पुल्लिग संज्ञा; जैसे—हल—हलवाहा। भैंस—भैंसवाहा।

(४१) 'ली' प्रत्यय के योग से ऊनवाचक संज्ञा; जैसे टीका—टिकली।

(४२) 'वन्त' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—दया—दयावन्त। धन—धनवन्त।

(४३) 'वाल' प्रत्यय के योग से उपाधिवाचक संज्ञा; जैसे—

गया—गयावाल। प्रयाग—प्रयागवाल। पल्ली—पल्लीवाल।

(४४) 'वाला' प्रत्यय के योग से कर्त्तृवाचक पुल्लिग संज्ञा; जैसे—दूधवाला।

(४५) 'वाली' ,, ,, ,, ,, ,, स्त्रीलिंग ,,—दूधवाली।

(४६) 'स' प्रत्यय के योग से भाववाचक संज्ञा; जैसे—आप—आपस,—ऊष्म—ऊमस।

(४७) 'सों' प्रत्यय के योग से पूर्व दिनवाचक संज्ञा; जैसे—पर—परसों।

(४८) 'हर' प्रत्यव के योग से स्थानवाचक संज्ञा; जैसे—खंड—खंडहर, पी—पीहर।

(४९) 'उआ' प्रत्यय के योग से विशेषण या संज्ञा; जैसे—माछ—मछुआ। गेरू—गेरूआ। फाग—फगुआ।

(५०) 'आरी' या 'आरा' या 'आड़ी'—ये तीनों प्रत्यय 'आर' प्रत्यय के समानार्थक हैं; जैसे—खेल—खेलाड़ी। भीख—भिखारी।

(५१) 'आटा' 'आका' प्रत्यय का समानार्थक है; जैसे—खर्र—खर्राटा। सन्न—सन्नाटा। घर्र—घर्राटा।

(५२) 'आका' प्रत्यय का योग अनुकरणवाचक शब्दों के साथ होता है; जैसे—धम—धमाका। घड़—घड़ाका। पड़—पड़ाका।

(५३) 'ला' प्रत्यय के योग से गुणवाचक; जैसे—आगे—अगला। पीछे—पिछला। एक—इकला।

(५४) 'री' प्रत्यय के योग से ऊनवाचक; जैसे—कोठा—कोठरी। छत—छतरी।

(५५) 'पा' प्रत्यय के योग से पुल्लिग भाववाचक; जैसे—बूढ़ा—बुढ़ापा। अपना—अपनापा। पूजा—पुजापा।

(५६) 'पन' प्रत्यय के योग से पुल्लिग भाववाचक संज्ञा; जैसे—लड़का—लड़कपन। पीला—पीलापन। काला—कालापन।

(५७) 'टा' प्रत्यय के योग से ऊनवाचक पुल्लिग संज्ञा; जैसें—रोआँ—रोंगटा।

(५८) 'टी' प्रत्यय के योग से ऊनवाचक स्त्रीलिंग संज्ञा; जैसे—बहू—बहूटी।

(५९) 'का' प्रत्यय के योग से पुल्लिग संज्ञा; जैसे—माय—मायका। माटी—मटका। लाड़—लड़का।

(क) 'का' प्रत्यय के योग से विभिन्न शब्द; जैसे—एक—इक्का। दो—दुक्का। चुप—चुपका।

उर्दू तद्धितान्त (अरबी)

(१) 'आनी' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—जिस्म—जिस्मानी। रूह—रूहानी।

(२) 'इयत' प्रत्यय के योग स भाववाचक स्त्रीलिंग संज्ञा; जैसे—इन्सान—इन्सानियत। हैवान—हैवानियत।

(३) 'ई' प्रत्यय के योग से भाववाचक संज्ञा; जैसे—परेशान—परेशानी।

(क) 'ई' प्रत्यय के योग से विशेषण; जैसे—इल्म—इल्मी।

(४) 'ची' प्रत्यय 'वाला' का समानार्थक है; जसे—गुल—गुलची।

(५) 'ए' प्रत्यय शब्दों के मध्य में प्रयुक्त होता है; जैसे—कैसर-ए-हिन्द। यह प्रत्यय हिन्दी में पच गया है; जैसे—शेरे बिहार। कोहेनूर।

उर्दू तद्धितान्त (फारसी)

(१) 'मन्द'—अक्लमन्द, हुनरमन्द आदि।

(२) 'आवर'—दिलावर, जोरावर आदि।

(३) 'वार'—माहवार, उम्मीदवार, तारीखवार आदि ।

(४) 'इन्दा'— कारिन्दा, शर्मिन्दा आदि ।

(५) 'खोर'—हरामखोर, चुगलखोर आदि ।

(६) 'बाज'—हिम्मतबाज, दगाबाज आदि ।

(७) 'गीर'—राहगीर, जहाँगीर, दिलगीर आदि ।

(८) 'सार'—खाकसार, मिलनसार, चलनसार आदि ।

(९) 'दाँ' (दान)—कद्रदाँ, इलमदाँ आदि ।

(१०) 'नामा'—इकरारनामा, वकालतनामा, मुख्तारनामा आदि ।

(११) 'नुमा'--किश्तीनुमा, कुतुबनुमा, मस्जिदनुमा आदि ।

(१२) 'दार'—जमींदार, दूकानदार, जिम्मेदार, मजेदार ।

(१३) 'नवीस'—नकलनवीस ।

(१४) 'बान'—मेहरबान, मेजबान, बागबान ।

(१५) 'नशीन'—पर्दानशीन, तख्तनशीन ।

(१६) 'दान'—खानदान, शमादान, कलमदान ।

(१७) 'बन्द'— गलाबन्द, कमरबन्द, हथियारबन्द ।

(१८) 'गर' या 'गार'— सौदागर, गुनहगार, यादगार, कारीगर ।

(१९) 'पोश'— सफेदपोश, जीनपोश ।

(२०) 'कार'—पेशकार, सलाहकार, काश्तकार, आदि ।

(२१) 'साज'—जीनसाज, घड़ीसाज ।

(२२) 'नाक'—दर्दनाक, खौफनाक ।

(२३) 'बीन'—दूरबीन, खुर्दबीन, तमाशबीन ।

(२४) 'गीन—गमगीन ।

(२५) 'बाद'—जिन्दाबाद; मुर्दाबाद, मुबारकबाद, सलामतबाद ।

(२६) 'ई'—खुशी, सियाही, नेकी, बदी, बुराई, दोस्ती, खूनी ।

(२७) 'खाना'—दवाखाना, फीलखाना, कारखाना ।

(२८) 'आना'—नजराना, बचाना, हर्जाना, मर्दाना, जमाना, सालाना ।

(२९) 'गाह'—दरगाह, चरागाह, ईदगाह, बन्दरगाह ।

(३०) 'चा'—बागीचा, सन्दूकचा आदि ।
(३१) 'सिताँ'—गुलिस्ताँ, बोस्ताँ, दास्ताँ ।

अभ्यास

(१) निम्नलिखित विशेषणों से संज्ञाएँ और संज्ञाओं से विशेषण बनायें—गौरव, मनोहर, स्वर्ग, नरक, न्याय, विनय, छवि, रूप, निर्दय, लाली, पीला, दु:ख, सुखद, ऐश्वर्य, विश्वास, यत्न, कृपण, दान, दौलत, प्यासा, नारी, मूर्त्ति ।

(२) निम्नलिखित शब्दों से विशेषण बनायें—नीति, सौन्दर्य, चन्द्र, सूर्य, अग्नि, शोभा, हृदय, हँसना, खाना ।

(३) निम्नलिखित शब्दों से संज्ञा बनायें—चतुर, हृदयहीन, धार्मिक, विमल, लाल, भीषण, संकुचित, विस्तृत, घेरना, जाँचना, खेलना, लिखना ।

(४) निम्नलिखित उपसर्गों से तीन-तीन शब्द बनावें—
प्र, वि, आ, नि:, उत्, परा ।

(५) निम्नलिखित उपसर्गों से पाँच-पाँच शब्द बनावें—
ता, त्व, पन, य, इमा ।

समास

परस्पर-अन्वय विशिष्ट दो या अधिक शब्दों का संयोग समास कहलाता है । जिन शब्दों में समास होता है वे सामासिक शब्द कहलाते हैं, जैसे—जिसकी ग्रीवा शंख के समान हो । समास से उत्पन्न शब्द समस्त पद कहलाता है, जैसे—कम्बुग्रीव । समस्त पद के अंगीभूत शब्द समस्यामान पद कहलाते हैं, जैसे—'कम्बु' आर 'ग्रीवा' ।

समास और संधि—"समास" दो या दो से अधिक शब्दों के परस्पर संबंध बतलाने वाले शब्दों अथवा प्रत्ययों के लोप होने पर उन दो या अधिक शब्दों से जो एक स्वतंत्र शब्द बनता है, उस शब्द को सामासिक शब्द कहते हैं और उन दो या अधिक शब्दों का जो संयोग होता है वह "समास" कहलाता है । जैसे—राजपुत्र—राजा का पुत्र ।

संधि—दो वर्णों के मेल को "संधि" कहते हैं। संधि में जब दो वर्ण या अक्षर मिलते हैं, तो शब्दों में विकार उत्पन्न होता है। जैसे—तथा + एव = तथैव।

समास और संधि का मूल अन्तर यह है कि संधि में वर्णों का मेल होता है और समास में शब्दों या पदों का।

समास और संधि दोनों में पदों को तोड़ा जाता है। समास में शब्दों को तोड़ने की क्रिया को "विग्रह" कहते हैं और सन्धि में इस क्रिया को "विच्छेद" कहते हैं।

समास का विपरीतार्थ शब्द व्यास कहलाता है। वाक्य की सहायता से विश्लिष्ट शब्दों को व्यास-वाक्य कहते हैं, जैसे—जिसकी ग्रीवा शंख के समान हो।

समास में पूर्व-पद, उत्तर-पद दो होते हैं, इसलिए पद-प्राधान्य की दृष्टि से समास के चार भेद माने गए हैं—

(१) पूर्व-पद प्रधान (पहला पद प्रधान)—अव्ययीभाव।
(२) उत्तर-पद प्रधान (अन्तिम पद प्रधान)—तत्पुरुष।
(३) ऊभय-पद प्रधान (दोनों पद प्रधान)—द्वन्द्व।
(४) उभय-पद अप्रधान (दोनों पद अप्रधान)—बहुव्रीहि।

तत्पुरुष समास के दो भेद हैं—समानाधिकरण और व्यधिकरण।

समानाधिकरण के दो भेद हैं—कर्मधारय और द्विगु। इस प्रकार समास के छः भेद हो जाते हैं।

अव्ययीभाव (पूर्व-पद प्रधान)

(१) अव्ययीभाव—इस समास में प्रायः एक पद "अव्यय" और दूसरा पद "संज्ञा" रहता है। इसमें पूर्व-पद के अर्थ की प्रधानता रहती है। जैसे—

यथाशक्ति—शक्ति के अनुसार, शक्ति भर

प्रतिदिन	दिन-दिन
आजन्म	जीवनभर
अनुरूप	रूप के योग्य
उपकूल	कूल के समीप

उपनेत्र	नेत्र के समीप
प्रतिबिम्ब	बिम्ब के सदृश
निर्विघ्न	विघ्नों का अभाव
दुर्भिक्ष	भिक्षा का अभाव
बेलाग	जिसमें कोई लाग न हो

हररोज, रातों-रात, पहले-पहल, बार-बार आदि।

तत्पुरुष (उत्तर पद प्रधान)

(२) तत्पुरुष समास—इस समास में उत्तर (अन्तिम पद) का अर्थ प्रधान होता है। इसके दो भेद हैं—

(क) समानाधिकरण—जिसके दोनों शब्द एक ही विभक्ति के हों, इसी भेद का दूसरा नाम "कर्मधारय" है।

(ख) व्यधिकरण—जिसके दोनों शब्द भिन्न-भिन्न विभक्तियों के हों। व्यधिकरण तत्पुरुष के ६ भेद हैं—

(क) द्वितीया तत्पुरुष (कर्म तत्पुरुष)

दु:खप्राप्त	दु:ख को प्राप्त
गंगा प्राप्ति	गंगा की प्राप्ति
गोपाल	गो को पालनेवाला
गृहगत	गृह को गया हुआ
पाकिटमार	पाकिट को मारनेवाला
गिरहकट	गिरह को काटनेवाला
घड़ीचोर	घड़ी को चुरानेवाला
मछलीमार	मछली को मारनेवाला
जेबकतरा	जेब को कतरनेवाला

(ख) तृतीया तत्पुरुष (करण तत्पुरूष)

मदान्ध	मद से अंधा
श्रम साध्य	श्रम से साध्य

रसहीन	रस से हीन
वाग्युद्ध	वचन से युद्ध
गुणहीन	गुणों से हीन
शोकाकुल	शोक से आकुल
मोहान्ध	मोह से अंधा
वाक्कलह	वचन से कलह
कर्महीन	कर्म से हीन
मनमाना	मन से माना
मदमाता	मद से मत्त
मनगढ़न्त	मन से गढ़ा हुआ

(ग) चतुर्थी तत्पुरूष (संप्रदान तत्पुरूष)

पुत्र-सुख	पुत्र के लिए सुख
धर्मशाला	धर्म के लिए शाला (घर)
आत्म-कल्याण	आत्मा के लिए कल्याण
पुत्र-शोक	पुत्र के लिए शोक
ज्ञान-चिन्तन	ज्ञान के लिए चिन्तन
मार्ग-व्यय	मार्ग के लिए व्यय
पति-भक्ति	पति के लिए भक्ति
रसोई घर	रसोई के लिए घर
रेलभाड़ा	रेल के लिए भाड़ा
देशभक्ति	देश के लिए भक्ति
हथकड़ी	हाथ के लिए कड़ी
सिनेमा-टिकट	सिनेमा के लिए टिकट

(घ) पंचमी तत्पुरूष (आपादान तत्पुरूष)

पदच्युत	पद से च्युत
बन्धन मुक्त	बन्धन से मुक्त

पथ-भ्रष्ट	पथ से भ्रष्ट
धर्मच्युत	धर्म से च्युत
मृत्युभय	मृत्यु से भय
ऋणमुक्त	ऋण से मुक्त
देहचोर	देह से चोर
देश निकाला	देश से निकाला
जेल-भागा	जेल से भागा

(ङ) षष्ठी तत्पुरुष (संबंध तत्पुरुष)

देशरत्न	देश का रत्न
राजगृह	राजा का गृह
राजनाथ	राजाओं के नाथ
रामायण	राम का अयण (घर)
श्रमदान	श्रम का दान
आनन्दाश्रम	आनन्द का आश्रम
हिमालय	हिम का आलय
राजहंस	हंसों का राजा
देवलोक	देवों का लोक
देवराज	देवों का राजा
गंगाजल	गंगा का जल
सेनापति	सेनाओं के पति
घुड़दौड़	घोड़ा का दौड़
धनखेत	धान का खेत
ठाकुरबाड़ी	ठाकुर की बाड़ी
माल गोदाम	माल का गोदाम

(च) सप्तमी तत्पुरूष (अधिकरण तत्पुरुष)

नराधम	नरों में अधम

शरणागत	शरण में आया हुआ
वनवास	वन में वास
पुरुषोत्तम	पुरुषों में उत्तम
कार्य कुशल	कार्य में कुशल (चतुर)
रण पंडित	रण में पंडित
कलाप्रवीण	कला में प्रवीण
दानवीर	दान में वीर
मनमौजी	मन में मौज करनेवाला
घरवास	घर में वास
आप बीती	अपने पर बीती

कर्मधारय (समानाधिकरण तत्पुरूष) समास

इस समास को "समानाधिकरण" इसलिए कहा जाता है कि इसमें दोनों पदों के अर्थ का निवास स्थान एक ही होता है। जैसे—"कृष्णसर्प" शब्द में दो पदार्थ हैं, किन्तु दोनों का निवास सर्प में ही है। साथ ही इसके दोनों पद प्रथमा विभक्ति में ही है। व्यधिकरण तत्पुरुष में दोनों पदों के अर्थ का निवास भिन्न-भिन्न रहता है तथा दोनों में प्रथमा विभक्ति नहीं रहती। जैसे—"राज-पुत्र" राज का निवास राजा में है और पुत्र का बेटा में। साथ ही यहाँ "राजन्" शब्द में षष्ठी है। यही दोनों में भेद है।

कर्मधारय (समानधिकरण तत्पुरुष) के कुछ भेद निम्नांकित हैं—

(क) विशेषण पूर्वपद कर्मधारय— जब पहला शब्द विशेषण और दूसरा शब्द विशेष्य हो तो वह विशेषण पूर्वपद कर्मधारय समास कहलाता है। जैसे—

पीताम्बर	पीत + अम्बर (पीला कपड़ा)
महापुरुष	महान + पुरुष (बड़ा आदमी)
नीलकमल	नील + कमल (नीला कमल)
महात्मा	महान + आत्मा (जो आत्मा महान है)

(ख) "कुत्सित" (बुरे) शब्द का जब किसी से समास होता है तो उसका कहीं रूप "कु" 'का' और "कत्" हो जाता है ?

जैसे—कुपुरुष	बुरा आदमी
कापुरुष	कायर पुरुष
कदन्न	बुरा अनाज

(ग) नीचे लिखे स्त्रीलिंग शब्दों का समास करने पर उनके विशेषण शब्दों में लगे हुए स्त्रीलिंग-प्रत्यय का लोप हो जाता है और वह पुल्लिग ही रह जाता है। जैसे—महानवमी—दशहरे के पहले दिन की नवमी।

कृष्ण चतुर्दशी	(कृष्ण पक्ष की चौदस)
पंचम भार्या	(पांचवी स्त्री)

(घ) उपमान-पूर्व-पद कर्मधारय—जब समास का पहला शब्द उपमान और दूसरा उपमेय हो तो उसे "उपमान-पूर्व-पद कर्मधारय" कहते हैं।

जैसे कमलनयन	कमल के समान नयन
घनश्याम	घन (मेघ) के समान श्याम
चन्द्रमुख	चन्द्रमा की तरह मुख
चन्द्रवदन	चन्द्रमा के समान वदन
मृग चपल	मृग की तरह चपल (चंचल)

(ङ) उपमित-कर्मधारय—जब किसी की प्रशंसा के लिए 'सिंह, व्याघ्र, कुंजर' आदि शब्द जोड़े जायँ तो वह उपमित कर्मधारय समास कहलाता है और उपमान रूप से सिंहादि शब्द अन्त में लगते हैं।

जैसे—पुरुष व्याघ्र	बाघ के समान वीर पुरुष
नरसिंह	सिंह के समान वीर पुरुष
करकमल	कमल के समान हाथ
नरकेसरी	केसरी के समान नर

(च) विशेषण उभयपद कर्मधारय—एक ही विशेष्य के दो विशेषणों का जब समास होता है तो उसे "विशेषण उभयपद कर्मधारय" समास कहते हैं।

जैसे—नीलपीत — जो नीला और पीला है (कमल)

श्यामसुन्दर — जो श्याम और सुन्दर है (कृष्ण)

इसी प्रकार शीतोष्ण, ऊँच-नीच, कठिन-कोमल, भला-बुरा, मोटा-ताजा आदि।

(छ) रूपक कर्मधारय—जब एक पदार्थ को दूसरे से अभिन्न मानकर समास होता है तो उसे रूपक कर्मधारय कहते हैं।

जैसे—संसारसागर — संसार रूपी सागर

विद्याधन — विद्या रूपी धन

दुःखसमुद्र — दुःख रूपी समुद्र

इसी प्रकार शोकसागर, ज्ञानालोक, मुखशशि आदि।

(ज) मध्यम-पद लोपी कर्मधारय—विग्रह के समय बीच में रहनेवाले शब्द का जहाँ लोप हो तो उसे मध्यमपद लोपी या शाक-पार्थिव समास कहते हैं।

जैसे—यमयातना — यम द्वारा दी जानेवाली यातना

सुवर्ण कंकण — सुवर्ण-निर्मित कंकण

घृतान्न — घृत-मिश्रित अन्न

दूधभात — दूध मिला भात

गोबरगणेश — गोबर से बना गणेश

दहीबड़ा — दही में मिला हुआ बड़ा

इसी प्रकार हेमहार, पर्णकुटीर, भिक्षान्न, डाकगाड़ी, नमक-भात आदि।

द्विगु समास

जब कर्मधारय समास में पहला पद संख्यावाचक हो और दूसरा पद कोई संज्ञा हो तो उसे द्विगु समास कहते हैं।

इसके तीन भेद हैं—

(क) समाहार द्विगु—जिसमें प्रथम पद संख्यावाचक हो और सम्पूर्ण शब्द से समाहार (समूह) का अर्थ निकले। जैसे—

त्रिलोकी — तीन लोकों का समूह

त्रिभुवन — तीनों भुवनों का समूह

त्रिफला	तीनों फलों का समूह
नवग्रह	नवग्रहों का समूह

(ख) तद्धितार्थ द्विगु—जब द्विगु समास तद्धित के अर्थ में प्रयुक्त होता है। जैसे—

पंचगु	पाँच गाएँ देकर खरीदा हुआ
षण्मातुर	छः माताओं के समूह का पुत्र

(ग) उत्तर पद द्विगु—जब द्विगु समास में कोई उत्तर-पद हो। जैसे—

पंचगवधन	पाँच गाय हैं धन जिसका

इसी प्रकार-हिन्दी में दोअन्नी (दो आनों का योग) चौराहा, बारहमासा, दोपहर, चौपाई, चौहद्दी, चौमुहानी आदि।

तत्पुरूष के कुछ अन्य भेद

नञ् तत्पुरुष

(क) नञ् तत्पुरुष—निषेधवाचक 'न' के अर्थ में जो समास होता है, वह नञ् तत्पुरुष समास कहलाता है। और यह 'न' यदि व्यंजन के पहले हो तो 'अ' और स्वर के पहले हो तो 'अन्' में बदल जाता है जैसे—

अनादि	न आदि
अयोग्य	न योग्य
अनन्त	न अन्त
अलक्षित	न लक्षित
अनावश्यक	न आवश्यक (आवश्यक नहीं)
अधर्म	न धर्म
अनमोल	न मोल

इसी प्रकार अनदेखा, अनपढ़, अनजान, अनरीत आदि।

उपपद तत्पुरूष

(ख) उपपद तत्पुरुष—जिसका पहला शब्द ऐसा हो, जिसके बिना दूसरे शब्द का वह रूप ही न रह सके तब ऐसे समास को उपपद तत्पुरुष कहते हैं।

जैसे—कुम्भकार घड़ा बनानेवाला (कुम्हार)

स्वर्णकार — सोना से अलंकार बनानेवाला .सुनार)
चर्मकार — चमड़ा का काम करनेवाला (चमार)

मध्यमपदलोपी तत्पुरूष

(ग) मध्यम-पद लोपी तत्पुरुष समास—ऐसे समास को कहते हैं, जिनमें से कोई ऐसा शब्द बीच में से लुप्त (गायब) हो गया हो जो विग्रह के समय दोनों पदों के बीच में रहता हो। जैसे—

शाक पार्थिव — साग प्रिय राजा, (प्रिय का लोप है)
देवब्राह्मण — पुजारी, (पूजक का लोप है)

अलुक् समास

(घ) अलुक् समास—जिस समास में विभक्ति के प्रत्यय का लोप नहीं होता। जैसे—वनेचर — वन में रहनेवाला

सरसिज — सर में जन्म लेनेवाला (कमल)
खेचर — आकाश में चलनेवाला (पक्षी)
मनसिज — मन में पैदा लेनेवाला (कामदेव)
युधिष्ठिर — युद्ध में स्थिर रहने वाला

(ङ) मयूर-व्यंसकादि तत्पुरुष—तत्पुरुष समास के कुछ ऐसे शब्द जो साधारण नियमों का उल्लंघन करते हों। जैसे—

मयूर व्यंसक—चालाक मोर, इस शब्द में साधारण नियमानुसार 'व्यंसक' शब्द विशेषण है इसे विशेष्य के पहले आना चाहिए था, पर यहाँ विशेष्य के बाद में आया है। इसी प्रकार—

राजान्तर	दूसरा राजा।	युगान्तर	अन्ययुग।
देशान्तर	दूसरा देश।	रूपान्तर	अन्यरूप।

समानान्तर, कल्पनान्तर, लोभार्थ, स्थानान्तर आदि।

(च) प्रादि तत्पुरुष—जब प्रथम शब्द "प्र, परा, प्रति" आदि कोई उपसर्ग हो तो प्रादि तत्पुरुष कहलाता है। जैसे—

प्राचार्य — प्रगत + आचार्य (बहुत बड़ा विद्वान्)
प्रत्यक्ष — प्रतिगत + अक्ष (आँखों के सामने आया हुआ)

प्रकाश — प्रगत + काश (अधिक प्रकाश)

इसी प्रकार उच्छृंखल, अभ्यर्थना, प्रगाढ़, उद्धार आदि ।

द्वन्द्व समास (दोनों पद प्रधान)

(३) द्वन्द्व समाहार—इसमें दोनों पद का अर्थ प्रधान रहता है ।

इस समास के तीन भेद हैं—

(क) इतरेतर द्वन्द्व—जब समास में आयी हुई दोनों संज्ञाएँ अपनी प्रधानता रखती हैं तो उसे इतरेतर द्वन्द्व समास कहा जाता है । जैसे—

सीताराम	सीता और राम
पाप-पुण्य	पाप और पुण्य
लोटा-डोरी	लोटा और डोरी

(ख) समाहार द्वन्द्व —जब दो या दो से अधिक संज्ञाएँ 'और' पद से जुड़ती हों और वे अपने अर्थ के साथ-साथ समाहार (समूह) के अर्थ का भी बोध कराती हों तब उनका नाम समाहार द्वन्द्व होता है । जैसे—

नखदन्त	नख और दन्त का समाहार (समूह)
पाणिपाद	पानी और पाद का समाहार
गंगा-यमुना	गंगा और यमुना का समाहार
भूल-चूक	भूल और चूक का समाहार

इसी प्रकार—रुपया-पैसा, देव-पितर, मुँह नाक आदि ।

(ज) एक शेष द्वन्द्व—जब दो या दो से अधिक शब्दों के द्वन्द्व समास में केवल एक ही शब्द शेष रह जाय तथा बाकी शब्दों का लोप हो जाय तो उसे एक शेष द्वन्द्व कहते हैं ।

जैसे—दम्पति—पति और पत्नी

इसी प्रकार—संतान, परिवार, माता-पिता, गो-जाति आदि ।

द्वन्द्व समास के कुछ अन्य नियम—

(१) बैकल्पिक द्वन्द्व इसमें विकल्प से परस्पर-विरोधी शब्दों का मेल होता है ।

जैसे—पाप-पुण्य, धर्माधर्म, ऊँचा-नीचा, शीतोष्ण, नीलपीत आदि ।

(२) द्वन्द्व समास में लघु (छोटा) शब्द पहले रहता है।
जैसे—शिव-केशव, गंगा-यमुना, उमा-शंकर आदि।

(४) उभय-पद अप्रधान (दोनों पद अप्रधान) बहुव्रीहि

बहुव्रीहि—जब समास में आए हुए सारे शब्द किसी अन्य शब्द के विशेषण हो जाते हैं तो उसे बहुव्रीहि समास कहते हैं। कर्मधारय समास और बहुव्रीहि में भेद यही है कि कर्मधारय में समास के अन्तर्गत आए हुए शब्दों में ही प्रथम शब्द द्वितीय शब्द का विशेषण होता है। जैसे—"कृष्णसर्प" में कृष्ण पद सर्प का विशेषण है और दोनों शब्द समास में मौजूद हैं। किन्तु बहुव्रीहि समास में आए हुए सारे शब्द किसी अन्य पदार्थ के ही विशेषण हो जाते हैं। जैसे—"पीताम्बर" पीला है कपड़ा जिसका अर्थात् पीला कपड़ा पहनने वाला (विष्णु, कृष्ण)

बहुव्रीहि समास में अन्य पदार्थ की ही प्रधानता रहती है, समास में आए हुए किसी भी शब्द की नहीं। इसके मुख्य भेद दो हैं—

(क) समानाधिकरण बहुव्रीहि—जिसका पूर्वपद विशेषण हो तथा उत्तर-पद विशेष्य हो तो उसे सामानाधिकरण बहुव्रीहि समास कहते हैं। जैसे—

पीताम्बर	पीला है कपड़ा जिसका वह (कृष्ण)
नीलकण्ठ	नीला है कण्ठ जिसका वह (शिव)

(ख) व्यधिकरण बहुव्रीहि—जिसके पूर्व और उत्तर दोनों पद भिन्न-भिन्न विभक्तियों से युक्त हों तो उसे व्यधिकरण बहुव्रीहि समास कहते हैं। जैसे—

चन्द्रशेखर	चन्द्र हो शेखर (ललाट) पर जिनके वह (शिव)
चक्रपाणि	चक्र है पाणि में जिनके वह (विष्णु)
मकरध्वज	मकर है ध्वज में जिसके वह (कामदेव)

इसी प्रकार शूलपाणि, चन्द्रमौलि, वीणापाणि आदि।

समानाधिकरण बहुव्रीहि के छः भेद होते हैं —

(१) द्वितीया (कर्म) समानाधिकरण बहुव्रीहि—प्राप्तोदक

(२) तृतीया (करण) समानाधिकरण बहुव्रीहि— कृत कार्य—किया गया है कार्य जिसके द्वारा

दत्त चित्त —दिया गया है चित्त जिसके द्वारा

(३) चतुर्थी (सम्प्रदान) समानाधिकरण बहुव्रीहि—

दत्तधन—दिया गया धन जिसको

(४) पंचमी (अपादान) समानाधिकरण बहुव्रीहि—

निर्धन—निकल गया है धन जिससे

विमल—नष्ट हो गया है मल जिससे

इसी प्रकार निर्जल, निर्जन, निर्भय आदि।

(५) षष्ठी (संबंध) समानाधिकरण बहुव्रीहि—

दशानन	दश हैं आनन (मुख) जिसके (रावण)
पीताम्बर	पीला है वस्त्र जिसका (कृष्ण)
चतुर्भुज	भुजाएँ हैं चार जिनके (विष्णु)

इसी प्रकार नीलकंठ, कमलनयन, दुधमुँहा, कनफटा आदि।

(६) सप्तमी (अधिकरण) समानाधिकरण बहुव्रीहि—

प्रफुल्लकमल	खिले हैं कमल जिसमें, वह (तालाब)
इन्द्रादि	इन्द्र हैं आदि में जिसके, वे

इसी प्रकार चन्द्रशेखर, पतझड़, सतखंडा आदि।

बहुव्रीहि के दो भेद और भी हैं—

(क) तुल्ययोगे बहुव्रीहि—समस्तपद के पूर्व "स" होता है और जो अव्यय की तरह प्रयुक्त होता है, उसे तुल्ययोगे बहुव्रीहि समास कहते हैं। जैसे—

सहृदय	हृदय के साथ वर्त्तमान
ससीत	सीता के साथ वर्त्तमान
सपरिवार	परिवार के साथ वर्त्तमान

इसी प्रकार—सानुरोध, सानन्द सपत्नीक आदि ।

(ख) व्यतिहार बहुव्रीहि—युद्ध का बोध कराने के लिए । तृतीया या सप्तमी विभक्तिवाले पदों का अपने समान पद के साथ जब समास होता है तो उसे व्यतिहार बहुव्रीहि समास कहते हैं । (परस्पर सापेक्ष्य क्रिया बोध—पुनरुक्ति द्वारा)

जैसे—केशाकेशि—केश पकड़-पकड़ कर लड़ाई करना

मुष्टामुष्ठि—मुट्ठी-मुट्ठी से हुई जो लड़ाई

इसी प्रकार लाठालाठी, मारा-मारी, घूसा-घूसी, मुक्का-मुक्की आदि ।

बहुव्रीहि समास के कुछ अन्य भेद—

(क) संख्यावाचक बहुव्रीहि—जिसका पूर्वपद संख्यावाचक हो ।

जैसे—त्रिनेत्र—तीन हैं नेत्र जिनके वह शिव (शिव)

चतुरानन—चार हैं आनन (मुख) जिनके वह (ब्रह्मा)

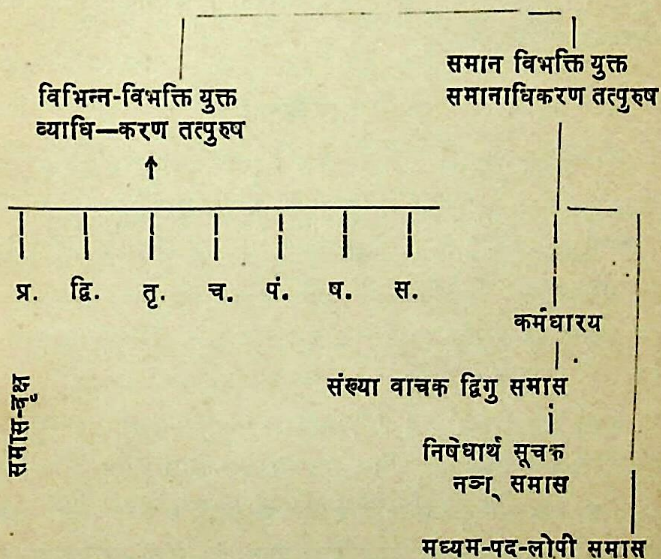
इसी प्रकार—पंचवदन, षट्रस, नवरत्न, दशावतार, द्विज, दशानन, षडानन आदि ।

(ख) मध्यमपद लोपी बहुव्रीहि—जब बीच का पद लुप्त (गायब) होता है, तब मध्यमपद लोपी बहुव्रीहि समास होता है । जैसे—

मृगनेत्री—मृग के नेत्रों की तरह नेत्र हैं जिस स्त्री के, इसमें बीच के नेत्र पद लुप्त है ।

इसी प्रकार मृगाक्षी, गजवदन, मुद्राराक्षस, मीनाक्षी, शशिवदना, कोकिलकण्ठी आदि ।

पूर्व-पद-प्रधान
—————————→ अव्ययीभाव समास
उत्तर-पद-प्रधान
—————————→ तत्पुरुष समास



उभय-पद-अप्रधान
—————————→ बहुव्रीहि समास
उभय-पद-प्रधान
—————————→ द्वन्द्व समास

अभ्यासार्थ प्रश्न

(१) संधि और समास में क्या भेद है ?
(२) कर्मधारय और बहुव्रीहि समास में क्या भेद है ?
(३) समानाधिकरण तत्पुरुष और व्यधिकरण तत्पुरुष में क्या भेद है ?
(४) निम्नलिखित शब्दों का सविग्रह समास निर्णय करें।

प्रतिदिन, अधरोष्ठ, आजन्म, यथाशक्ति, चिड़ीमार, गुणहीन, मार्गव्यय, रसोई-घर, धर्मच्युत, सेनापति, वनवास, मनसिज, पीताम्बर, देशान्तर, नराधम, आपबीती, कापुरुष, महानवमी, नरसिंह, नीलपीत, मोटा-ताजा। विद्याधन, दहीवड़ा, नवग्रह, अलक्षित, कुम्भकार, युधिष्ठिर, युगान्तर, नखदन्त, दम्पति, मकरध्वज, निर्जल, सपरिवार, मारामारी, षडानन, मृगाक्षी, अष्टावक्र, शशिवदना, चौपाई, अव्यय।

द्विरुक्ति

द्विरुक्ति को पुनरुक्ति भी कहते हैं। इसके दोनों खण्ड समान भी होते हैं और असमान भी। द्विरुक्ति चूंकि दो या अधिक सार्थक खण्डों में विभाजित हो सकती है, इसलिए यौगिक कहलाती है और कई शब्दों के संयोग से बनती है, इसलिए समास के अन्तर्गत भी आती है।

द्विरुक्ति या पुनरुक्ति शब्दों के तीन प्रकार हैं—(क) पूर्ण, (ख) अपूर्ण, और (ग) अनुकरणवाची।

(क) जब सार्थक शब्द की द्विरुक्ति या पुनरुक्ति होती है तब पूर्ण द्विरुक्त या पुनरुक्त शब्द बनता है, जैसे—गृह-गृह, देश-देश।

(ख) जब समान ध्वनिवाले सार्थक या निरर्थक शब्दों का योग होता है, तब अपूर्ण पुनरुक्त या द्विरुक्त शब्द बनता है; जैसे—आमने-सामने, आगे-पीछे, आस-पास आदि।

(ग) वस्तु की ध्वनि के अनुकरण के प्रयत्न से अनुकरणवाची पुनरुक्त या द्विरुक्त शब्द बनता है; जैसे—टर्रटर्राहट, गड़गड़ाहट, भनभनाहट आदि।

संज्ञा की द्विरुक्ति से 'प्रत्येक' का बोध होता है; जैसे—

'मैंने घर घर जा-जा देखा।'—'दिनकर'

(१) यदि संज्ञा की विभक्ति के बीच में 'ही' का प्रयोग हो, तो 'केवल' या 'अभ्यन्तर' का बोध होता है; जैसे राम ही राम कहें। मन ही मन विचार करें।

(२) यदि संज्ञा की द्विरुक्ति के बीच में किसी सम्बन्ध-चिह्न का प्रयोग

होता है, तो 'लगातार' या 'अत्यन्त' या 'पूर्णता' का बोध होता है; जैसे—दल के दल विद्यार्थी आये। झुण्ड के झुण्ड चले गये।

(३) यदि द्विरुक्ति का प्रथम खण्ड बहुवचन का संस्कार रखता है तो 'लगातार' का बोध होता है; जैसे—यह वस्तु हाथों हाथ मिल जायगी। यह बात कानों कान फैल जायगी।

विशेषण की द्विरुक्ति से 'अत्यन्त' और समस्त का बोध होता है; जैसे—कमल मीठी-मीठी बोली बोलता है। तीन-तीन आम खाओ।

(१) यदि विशेषण की द्विरुक्ति के बीच में 'से' का प्रयोग होता है तो उत्कृष्टता या निकृष्टता का बोध होता है; जैसे—श्याम के पास अच्छे-से-अच्छे चित्र हैं।

(२) यदि विशेषण की द्विरुक्ति के बीच में सम्बन्ध-चिह्न का प्रयोग हो तो समुदाय का बोध होता है; जैसे—कमलेश दोनों आम खा गया।

(३) सौ से अधिक की किसी संख्या की द्विरुक्ति सिर्फ इकाई और अपूर्णांक संख्या की मुख्य संख्या को दुहराने से होती है; जैसे—एक सौ रुपये तीन-तीन आने प्रत्येक आदमी को मिले।

अपवाद—सवा-सवा, डेढ़-डेढ़ ढाई-ढाई।

क्रिया और अव्यय की द्विरुक्ति से 'बराबर', 'निश्चय' और 'धीरे-धीरे का बोध होता है; जैसे—बछड़ा दूध पी-पी जाता है।

अभ्यास

द्विरुक्ति किसे कहते हैं?

कारकान्त प्रत्यय या विभक्तियाँ और उनके प्रयोग

१. शून्य चिह्न का प्रयोग निम्नलिखित अवस्थाओं में होता है—

(क) उक्त कर्त्ता में; जैसे—महेन्द्र सोया। अखिलेश आम खाता है।

(ख) उक्त कर्म में; जैसे—सीता ने आम खाया। पुस्तक सतीश के द्वारा खरीदी गयी। रावण राम के द्वारा मारा गया।

(ग) वस्तु के उल्लेख या अर्थ मात्र में; जैसे—सम्राट्, सम्राज्ञी, विद्वान् आदि।

(घ) द्विकर्मक क्रिया के जब दोनों कर्म हों तब मुख्य कर्म में जैसे–डाक्टर ने रोगियों को दवा पिलायी। मेरे मित्र ने मुझे एक पत्रिका दी।

(ङ) विधेय भाव में जैसे—महात्मा गाँधी की जय की ध्वनि राष्ट्रीय नारा बन गयी है। बालिका सूख कर काँटा हो गयी।

(च) उद्देश्य भाव; जैसे—विद्या सम्पत्ति है।

(छ) सम्बोधन में; जैसे—नरेश तू कहाँ जाता है?

(ज) उद्देश्यपूर्त्ति में; जैसे—राष्ट्रकवि दिनकर पद्म-भूषण की उपाधि से विभूषित किये गये।

(झ) संख्या, परिमाण, दर, लिंग, वचन आदि के अर्थ में; जैसे— दो मन धान। चार रुपये सेर घी आदि।

(ञ) कुछ कालवाचक संज्ञाओं के कर्त्ताकारक के बहुवचन रूप में; जैसे—वर्षों बीते, मैंने तुमसे यह बात कही थी। युगों बीते, यह घटना घटी थी। महीनों बीते, यह बात हुई थी।

कर्त्ता के 'ने' चिह्न का प्रयोग कहाँ-कहाँ होता है?

कर्त्ता के 'ने' चिह्न का प्रयोग निम्नांकित अवस्थाओं में होता है—

(१) समस्त सकर्मक क्रिया के सामान्य भूतकाल, आसन्न भूतकाल, पूर्ण भूतकाल एवं संदिग्ध भूतकाल में कर्त्ता के 'ने' चिह्न का प्रयोग होता है। यथा—

(क) सामान्य भूत	मैंने पढ़ा।
(ख) आसन्न भूत	मैंने पढ़ा है।
(ग) पूर्णभूत	मैंने पढ़ा था।
(घ) संदिग्धभूत	मैंने पढ़ा होगा।

(२) इच्छाबोधक क्रिया में भी कर्त्ता के 'ने' चिह्न का प्रयोग होता है। जैसे—मैंने पढ़ना चाहा।

(३) अनुमति बोधक क्रिया में भी 'ने' चिह्न का प्रयोग होता है। जैसे—आपने उसे पढ़ने नहीं दिया।

(४) अवधारणा बोधक में भी 'ने' चिह्न का प्रयोग होता है। जैसे—लड़के ने कमीज पकड़ ली।

(५) 'डालना' और 'देना' क्रिया के पूर्व में कर्त्ता के 'ने' चिह्न का प्रयोग होता है। जैसे—

(क) आपने इसे कहाँ फेंक डाला था।

(ख) उसने दे डाला।

(६) अपवाद—बकना, बोलना, भूलना, आदि सकर्मक क्रियाओं में 'ने' चिह्न नहीं आता है, किन्तु लाना, सोचना समझना, पुकारना आदि में विकल्प से आता है। जैसे—

उसने सोचा, समझा। किसी ने पुकारा।

(७) छींकना, कहना, खाँसना, थूकना, अकर्मक क्रियाओं के पूर्वोक्त चारों भूतकालों में कर्त्ता के 'ने' चिह्न का प्रयोग होता है; जैसे—उसने खाँसा था। मैंने छींका। उसने कहा। मैंने थूका।

'को' का प्रयोग निम्नलिखित अवस्थाओं में होता है।

(क) अनुक्त कर्म में; जैसे—सुधीर उसको देखता है।

टिप्पणी—अप्राणिवाचक और क्षुद्र जन्तुवाचक कर्मों के साथ 'को' चिह्न बहुधा लुप्त होता है; जैसे—गाय घास खाती है।

(ख) व्यक्तिवाचक, अधिकारवाचक और व्यापार कर्तृवाचक कर्म में; जैसे—अखिल को लिखने दीजिये। वह प्रधान मंत्री को बतलाएगा। मालिक को बुलाओ।

(ग) गौण कर्म या सम्प्रदान कारक में; जैसे—मुरारी ने कौशल्या को एक आम दिया। उसने राम को क्या कहा था? तूने उसे पुस्तकें खरीद दीं।

(घ) चाहिए, होना, सूझना, शोभना, सुहाना लगना, रुकना, मिलना, भाना, पढ़ना, पचना, छलना, आदि के मेल में; जैसे—आपको क्या सूझता है? मुझको भोजन पचता है। मुझे यह भोजन रुचता है।

(ङ) आवश्यकता, निमित्त और अवस्था-द्योतन में; जैसे—उमेश राम से मिलने को गया है। वह स्नान करने को जाता है।

टिप्पणी—निमित्त-बोधक क्रिया के बाद 'को' विकल्प से प्रयुक्त होता है; जैसे—मैं स्नान करने जाता हूँ।

(च) योग्य, उपयुक्त, उचित, आवश्यक, धिक्कार, नमस्कार, धन्यवाद

आदि और इनके सम्मानार्थं, अन्य शब्दों के योग में, जैसे—उसको धिक्कार है। आपको प्रणाम है।

टिप्पणी—योग्य, उचित, उपर्युक्त, आवश्यक शब्दों के साथ 'के' और 'के लिए' का भी प्रयोग होता है; जैसे—आपके योग्य है। उनके लिए उचित है।

(छ) समय, स्थान और विनिमय-द्योतन में; जैसे—वह घर को गया। तुम रात को आये।

टिप्पणी—इसकी जगह 'में' का प्रयोग व्याकरण-सम्मत है, जैसे—प्रफुल्ल रात में आया। 'विनोद घर को गया।' इस वाक्य में 'को' का लोप करना चाहिए; जैसे—विनोद घर गया। इसी प्रकार देशकाल के साथ भी 'को' का लोप कहीं-कहीं होता है; जैसे—प्रफुल्ल कल रात आया।

टिप्पणी—(१) पूछना, कहना, होना, खुलना, लगाना, समाना आदि के योग में 'का' की जगह कहीं-कहीं 'में' और कहीं-कहीं 'पर' प्रयुक्त होता है तथा पूछना, कहना, डरना आदि के योग में 'को' की जगह 'से' भी।

(२) होना क्रिया के साथ अस्तित्व के अर्थ में 'को' के स्थान पर 'के' का प्रयोग होता है; जैसे—श्याम के पुत्र हुआ है। उसके पुत्र है। उसके दाढ़ी है। उसके एक पत्नी है।

'से' का प्रयोग निम्नलिखित अवस्थाओं में होता है

(क) करण कारक में; जैसे—उसने कलम से पत्र लिखा।

(ख) अनुक्त कर्त्ता में; जैसे—मुझसे गाया नहीं जाता। धरणीधर से आम खाया गया।

(ग) प्रेरककर्त्ता में, जैसे—मैं तुमको उससे सिखवाता हूँ।

(घ) क्रिया करने की रीति या प्रकार बतलाने में, जैसे—भगवान् की पूजा हृदय से करता है।

(ङ) मूल्यवाचक संज्ञा और प्रकृति बोध में; जैसे—धन से सर्वदा आनन्द नहीं मोल लिया जा सकता। अरहर किस भाव से बिकती है? दस रुपयों से मयूर खरीदे गये है। छूने से शीतलता का बोध होता है।

टिप्पणी—ऐसी जगहों में कहीं-कहीं 'में' और कहीं-कहीं 'पर' का प्रयोग होता है ।

(च) कारण, उत्पत्ति, निषेध, विकार, द्वारा और साथ में; जैसे—वह आलस्य से वहाँ नहीं गया । वह दया से द्रवित हुआ । वह अपने पुत्र से पुस्तकें भेजेगा । सूत से वस्त्र बनता है । वह एक आँख से अन्धा है ।

टिप्पणी—विकार, साथ, निषेध आदि में 'से' के स्थान पर 'का' या 'की' या 'के' या 'में' का भी प्रयोग होता है; जैसे—एक कान का बहरा । एक आँख का अन्धा । ऐसा उपाय करें जिसमे सफलता मिले ।

(छ) अपादान कारक में; जैसे—दीवार से लड़का गिर गया ।

(ज) पकाना, कहना, दूहना आदि क्रियाओं के गौण कर्म में, जैसे— मैं आपसे पूछता हूँ । वह गाय से दूध दूहता है ।

टिप्पणी—ऐसे स्थानों पर 'से' की जगह 'को' भी प्रयोग होता है; किन्तु कहीं-कहीं मुख्य कर्म लुप्त होता है (पीछे देखिये) ।

(झ) ऊपर, नीचे, पीछे, दूर, आगे, हीन, बाहर, रहित, आरंभ, परे, तुलना, अतिरिक्त, लाज, रक्षा, भय, निकालना, परिचय, भिन्नता आदि और इन्हीं शब्दों के पर्यायवाची शब्दों के योग में; जैसे—यह उससे भिन्न है। स्वास्थ्य धन से श्रेष्ठ है । वह बुद्धि से हीन है ।

टिप्पणी—ऊपर, नीचे, पीछे, आगे आदि और दिशावाचक शब्दों के योग में 'से' के स्थान पर सम्बन्ध का चिह्न भी प्रयुक्त होता है ।

(ट) समय और स्थान की दूरी बतलाने में; जैसे—आज से बीस दिन पहले की बात है । गोरौल से मुजफ्फरपुर पन्द्रह कोस दूर है ।

(ठ) लक्षण के अर्थ में; जैसे—कबीर दास जाति से जुलाहा थे और स्वभाव से अक्खड़ थे ।

टिप्पणी-ऐसी जगह 'से' के स्थान पर 'का', 'के', 'की' का भी प्रयोग होता है ।

(ड) दिशावाचक शब्दों के योग में; जैसे—मैं इधर से आया हूँ ।

(ढ) पूर्वकालिक क्रिया के अर्थ में; जैसे—कोठे से देखो (कोठे पर चढ़ कर) ।

(ण) निश्चय या निर्धारण में, जैसे—एवरेस्ट सबसे ऊँचा शिखर है ।

टिप्पणी—इस अर्थ में 'से' के पहले अधिकरण कारक का चिह्न भी प्रयुक्त होता है, जैसे—इन आमों में से किसको पसन्द करते हो ? ऐसी स्थिति में 'से' लुप्त भी होता है, जैसे—इन आमों में किसको पसन्द करते हो ?

निम्नलिखित प्रकार के वाक्यों में 'से' या 'पर' बहुधा लुप्त रहता है—

(१) इस कारण या हेतु वह यहाँ आया था। (२) इस प्रकार या भाँति उसका टहलना उचित नहीं है। (३) उसके द्वारा यह कार्य सम्पन्न हुआ था। (४) अनाज किस भाव वेचोगे ? (५) इकबाल के साथ पुस्तकें भेजी गयी थीं। (६) यह आँखों देखी घटना थी और कानों सुनी बात थी। (७) वे दाँतों उँगलियाँ काटने लगे। (८) खिल गयी उसके दिल की कली। (९) वह काम आप ही आप हुआ था। (१०) यह काम उसके हाथों होगा। (११) यह घुटनों चलता है। (१२) किसके भरोसे या सहारे वह जीयेगा ? (१३) सर्प छाती के बल चलता है। (१३) किसके मुँह खबर भेजी गयी थी ? (१५) मेरी ओर श्याम है।

'में' या 'पर' निम्नलिखित अवस्थाओं में प्रयुक्त होता है—

(क) अधिकरण कारक में, जैसे—घड़े में घी है। पेड़ पर कौआ है। ईश्वर में ध्यान स्थिर करो।

(ख) मूल, कारण, भीतर, निर्धारण, द्वारा, भेद और अवस्था अर्थ में, जैसे—नदियों में मिसिसीपी सर्वाधिक लम्बी है। ऐसा प्रयत्न करें जिसमें सफलता मिले। मैं एक महीने में पहुँचूँगा। राम और मोहन में भेद नहीं है। तुमने यह कुर्त्ता कितने में खरीदा है ?

टिप्पणी—मूल्य-निर्धारण और कारण वतलाने में दूसरे चिह्न भी प्रयुक्त होते हैं। (पीछे देखिये।)

(ग) अनन्तर, ऊपर, संलग्न, दूरी और अनुसार के अर्थों में, बातचीत के प्रसंग में एवं आवृत्ति अर्थ में 'पर' का प्रयोग होता है; जैसे—इसपर तुम क्या बोले ? वह दरवाजे पर खड़ा है। इक्के पर चढ़िये। यहाँ से चार कोस पर मिश्रपुर नामक गाँव है, जो सुलतानगंज स्टेशन के निकट है। खत पर खत भेजे किन्तु उत्तर नहीं मिला। समय पर काम करना चाहिए।

(घ) गत्यर्थ धातुओं के साथ; जैसे—मैं आपकी शरण में गया था। यहाँ 'शरण' के बाद 'में' का लोप भी होता है; जैसे—वह आपकी शरण गया।

(ङ) निम्नलिखित प्रकार के वाक्यों में 'में' या 'पर' का लोप हो जाता है—

(१) तुम इस समय कहाँ जाओगे ?

(२) दायें-बायें मत ताकिये।

(३) वह तुम्हारे पैरों पड़ा था।

(४) इस जगह यह प्रयोग ठीक है।

(५) उसे क्या हाथ लगेगा ?

(६) उसका गिड़गिड़ाना कुछ काम नहीं आया।

(७) इस बार आप लौट जायँ।

(८) आठों प्रहर खेलना अनुचित है।

(९) प्राचीन काल में चार आने सेर अन्न मिलता था।

(१०) पीछे आइये।

(११) आगे जाइये।

(१२) सामने आइये।

'का' चिह्न निम्नलिखित अवस्थाओं में प्रयुक्त होता है—

(क) कृदन्त शब्दों के कर्त्ता या कर्म के अर्थ में आनेवाले शब्दों के योग में; जैसे—श्याम के जाने से राम आ गया।

टिप्पणी—(१) कभी-कभी सम्बन्धी का लोप होता हैं; जैसे—मन की मन में ही रही।

(२) सम्बन्ध का चिह्न केवल समास की स्थिति में लुप्त होता है; जैसे—यमुना का जल—यमुना-जल।

(ख) विशेषण उपमान हो तो उपमेय में; जैसे—सुख का सागर, प्रेम बन्धन आदि।

(ग) प्रति, योग, बाहर, ऊपर, आगे, समीप, तुल्य, अधीन, ओर, पीछे, नीचे, बायाँ, दाहिना, अनुसार, साथ आदि और इनके समानार्थक शब्दों तथा अव्ययों के योग में; जैसे—उसके साथ। उसके अधीन। उसके अनुसार। उसके प्रति।

टिप्पणी—उपर्युक्त कई शब्दों के योग में 'से' का भी प्रयोग होता है (उदाहरण पीछे देखिये)।

(घ) सम्बन्ध कारक में; जैसे—श्री जगदीशचन्द्र माथुर का 'कोणार्क' नाटक। कवि आरसी प्रसाद सिंह की 'नयी दिशा'। हाथ की उँगलियाँ। रानी की दासी। चाँदी का गहना।

(ङ) मूल्य, परिमाण, अवस्था, बदला, स्थान, योग्यता, भविष्यत्, आधार, शुद्धता, लक्षण, सम्पूर्णता, समय, व्याप्ति, दर, केवल, प्रकार, शक्ति के साथ, कारण, निश्चल, भाव, शीघ्रता आदि में; जैसे—सच्चे का सच्चा और झूठे का झूठा। काम बात-की-बात में हो गया। दूध का दूध और पानी का पानी। राई का पर्वत। पन्द्रह वर्ष की बालिका। चार दिन की चाँदनी, फिर अँधेरी रात। दस रुपये की थाली। सब के सब चले गये।

टिप्पणी—आधार में 'का' के पहले 'में' या 'पर' और लक्षण में 'का' के स्थान पर 'से' का भी प्रयोग होता है।

८. सम्बन्ध के चिह्न 'हे' का प्रयोग दोनों लिंगों और दोनों वचनों में होता है, 'अरे' का प्रयोग दोनों वचनों में पुल्लिंग में और 'अरी' का प्रयोग दोनों वचनों में स्त्रीलिंग में होता है। सम्बोधन बिना चिह्न के भी प्रयुक्त होता है; जैसे—हे बालिकाओ, इधर आओ। मोहन, उधर जाना।

कारक-चिह्न के भेद से अर्थ-भेद

(१) { उसके पुत्री नहीं है—अपनी पुत्री नहीं है।
उसकी पुत्री नहीं है—दूसरे की पुत्री है।

(२) { मैं चार दिनों पर आया—चार दिनों के बाद आया।
मैं चार दिनों में आया—चार दिनों के भीतर आया।

विभिन्न रूपों में कतिपय शब्दों के प्रयोग

(१) बहुत—(क) संज्ञा—बहुतों का यह कहना है।
(ख) विशेषण—यहाँ बहुत आदमी हैं।
(ग) क्रिया-विशेषण—यह बहुत खाता है।

(२) की—(क) सम्बन्ध का चिह्न—राम की कलम खो गयी है।
(ख) क्रिया—उसने बात की।

(३) इसलिए—(क) क्रिया-विशेषण—गोपाल इसलिए दौड़ता है कि धूप नहीं है।
(ख) समुच्चायक—चूँकि वर्षा हुई, इसलिए विद्यार्थी नहीं आये।

(४) दोनों—(क) विशेषण—दोनों आम सड़ गये।
(ख) संज्ञा—दोनों का यह कहना है।
(ग) सर्वनाम—दुविधा में दोनों गये, माया मिली न राम।

(५) खाक—(क) संज्ञा—वीर वन-वन की खाक छानते हैं, परन्तु युद्ध से मुँह नहीं मोड़ते।
(ख) अव्यय—वह उसकी मदद खाक करेगा।

(६) साथ—(क) संज्ञा—मित्र, मित्र की विपत्ति में साथ देता है।
(ख) क्रिया-विशेषण—गोविन्द और भूपेन्द्र साथ खेलते हैं।
(ग) अव्यय—वह आप के साथ गया।

(७) बली—(क) संज्ञा—बली से कौन लड़ेगा ?
(ख) विशेषण—बली आदमी से कौन लड़ेगा ?

(८) सीधा—(क) संज्ञा—सीधे का मुँह कुत्ता चाटता है।
(ख) विशेषण—यह सीधा रास्ता है।
(ग) क्रिया-विशेषण—वह यहाँ से सीधे गया।

(९) हाँ—(क) संज्ञा—मैंने 'हाँ' कही।
(ख) क्रिया-विशेषण—क्या आपने आम खाया ? हाँ खाया।
(ग) अव्यय—हाँ-हाँ, मत कहो।

(१०) यह—(क) सर्वनाम—यह किसकी पुस्तक है ?

(ख) विशेषण—यह पुस्तक मेरी है ।

(ग) क्रिया-विशेषण—लो, मैं यह पहुँचा ।

(११) अन्धा-(क) संज्ञा—अन्धा नहीं देखता ।

(ख) विशेषण—अन्धा आदमी गाता है ।

(१२) अन्धा—(क) संज्ञा—गुरु ने यह शिक्षा दी है ।

(ख) विशेषण—यह गुरु भार मैं नहीं उठाऊँगा ।

(१३) दुष्ट—(क) संज्ञा—दुष्टों की संगति में नहीं रहिये ।

(ख) विशेषण—दुष्ट आदमी क्या नहीं करता ?

(१४) सुख—(क) वह सुख पाता है ।

(ख) विशेषण—दुनिया सुख-शय्या नहीं है ।

(१५) अच्छा—(क) संज्ञा—अच्छों की संगति में रहिये ।

(ख) विशेषण—तुमने यह अच्छा काम किया ।

(ग) क्रिया-विशेषण—वह अच्छा खेलता है ।

(घ) अव्यय—अच्छा, मैं कहूँगा ।

(१६) बुरा—(क) संज्ञा—बुरों की संगति में नहीं रहिये ।

(ख) विशेषण—वह बुरा आदमी है ।

(ग) क्रिया-विशेषण—उसने यह बुरा किया ।

(१७) आगे—(क) क्रिया-विशेषण—मैं आगे गया ।

(ख) सम्बन्धबोधक अव्यय—मन्दिर वृक्ष के आगे है ।

(१८) और—(क) संज्ञा—औरों की बात मैं नहीं जानता ।

(ख) विशेषण—मुझे और आम चाहिए ।

(ग) क्रिया-विशेषण—मुझे आम और दो ।

(घ) अव्यय—कार्त्तिक और रमेश पढ़ते हैं ।

(१९) आज—(क) संज्ञा—'आज' अखबार वाराणसी से निकलता है।
(ख) मैं आज मंगलवार को पटना जाऊँगा।
(ग) अव्यय—आज एक नाटक होगा।

(२०) उल्टा—(क) संज्ञा—आकाश का उल्टा पाताल है।
(ख) विशेषण—यह उल्टा काम होता है।
(ग) क्रिया-विशेषण—यह काम उल्टा होता है।

(२१) एक—(क) संज्ञा—एक जाता है, एक आता है।
(ख) विशेषण—मुझे एक पुस्तक चाहिए।
(ग) सर्वनाम—आमों में एक भी अच्छा नहीं है!
(घ) क्रिया-विशेषण—एक-एक कर विद्यार्थी चले गये।

(२२) केवल—(क) विशेषण—केवल शक्ति सर्वदा कार्य नहीं करती।
(ख) क्रिया-विशेषण—वह केवल खाता है।
(ग) अव्यय—सब आम ले लें; केवल इसे छोड़ दें।

(२३) कुछ—(क) संज्ञा—इस घटना के पीछे कुछ रहस्य है।
(ख) विशेषण—मुझे कुछ आम चाहिए।
(ग) सर्वनाम—विद्यार्थियों में कुछ गये हैं और कुछ हैं।
(घ) क्रिया-विशेषण—अभी कुछ वर्षा होगी।

(२४) ऐसा—(क) संज्ञा—ऐसों की बात आप जानें।
(ख) विशेषण—ऐसी पोशाक आपको नहीं फबती।
(ग) क्रिया-विशेषण—कोई पूछे तो ऐसा कहना।

(२५) कोई—(क) सर्वनाम—यहाँ कोई है या नहीं?
(ख) विशेषण—आपकी कोई पुस्तक अच्छी नहीं है।
(ग) क्रिया-विशेषण – इस पुस्तक में कोई ५० पृष्ठ हैं।

(२६) क्या—(क) सर्वनाम—आपने वहाँ क्या पढ़ा?
(ख) विशेषण—वहाँ क्या बात हुई?
(ग) क्रिया-विशेषण—घोड़ा दौड़ा क्या है, उड़ आया है।

(२७) जो--(क) सर्वनाम--विद्यार्थी जो पढ़ता था, वहाँ गया है।

(ख) विशेषण--जो आम चाहो, लो।

(ग) अव्यय--किसमें शक्ति है जो मुझे रोके ?

(२८) अरुण--(क) संज्ञा--अरुण उदित हुआ।

(ख) विशेषण--प्राची अरुण हो उठी।

अभ्यास

(१) सकर्मक और अकर्मक से बनी कैसी संयुक्त क्रियाओं में 'ने' चिह्न प्रयुक्त होता है ?

(२) 'ने' चिह्न का प्रयोग कहाँ-कहाँ होता है ? सोदाहरण लिखें।

(३) निम्नलिखित वाक्यों को शुद्ध करें--

अर्जुन और भीम ने जो वाणों को चलाये थे उसे भीष्म ने खण्ड़ित कर दिय। सावित्री ने रातभर सिनेमा देखा किया। उसने चल दिये। सीता रो दी। सावित्री मुस्कुरा दी। जिसका लाठी, उसका भैंस। राम ने श्याम को कहे कि मैं तुमको गणित नहीं पढ़ायेंगे क्योंकि तूने मेरी उस किताब को चुरा लीये थे जिसे मैंने सोनपुर के मेला में खरीदे थे।

(४) एक ऐसा वाक्य बनावें जिसमें सातो कारकों का प्रयोग हो।

(५) कर्त्ता के 'से' चिह्न का प्रयोग कर चार वाक्य बनायें।

(६) अपादान और सम्प्रदान कारकों के चिह्नों का प्रयोग करते हुए पाँच-पाँच वाक्य बनावें।

(७) किन्हीं पाँच शब्दा का प्रयोग भिन्न-भिन्न रूपों में करें।

अशुद्धि-संशोधन

अशुद्ध--शुद्ध

मिमांसा--मीमांसा

श्रीवान्--श्रीमान्

भागिरथी--भागीरथी

अशुद्ध--शुद्ध

दुरावस्था--दुरवस्था

सहाय्य--साहाय्य

वाल्मीकी--वाल्मीकि

अशुद्ध—शुद्ध	अशुद्ध—शुद्ध
सिन्दुर—सिन्दूर	मुहुर्त्त—मुहूर्त्त
महत्व—महत्त्व	उरु—उरू
दधिची—दधीचि	अकाट्ट्य—अकाट्य
अधिन—अधीन	आवश्यकीय—आवश्यक
ग्रहीत—गृहीत	उर्ध—ऊर्ध्व
सुन्दरतम—सुन्दरतम	उपरोक्त—उपर्युक्त
हिन्दूस्तान—हिन्दुस्तान	व्योहार—व्यवहार
उत्कर्स—उत्कर्ष	यथेष्ठ—यथेष्ट
प्रत्यूत—प्रत्युत	पूर्वाह्ल—पूर्वाह्ण
वाहनी—वाहिनी	त्रिवार्षिक—त्रैवार्षिक
आयुर्दिक—आयुर्वेदिक	चतुर्वेदिक—चातुर्वेदिक
सर्वकालिक—सार्वकालिक	सर्वजनीन—सार्वजनीन
दर्शण—दर्शन	जात्याभिमानी—जात्यभिमानी
गत्यावरोध—गत्यवरोध	नीत्यानुसार—नीत्यनुसार
नुपुर—नूपुर	श्राप—शाप
सोधित—शोधित	मुठ्ठी—मुट्ठी
स्वास्थ—स्वास्थ्य	एकत्रित—एकत्र
लक्ष्मीमान्—लक्ष्मीवान्	ईच्छा—इच्छा
नरायन—नारायण	जागृत—जागरित
निसित—निशित	महत्वाकांक्षा—महत्त्वाकांक्षा
शोनित—शोणित	शिवी—शिवि
अत्योक्ति—अत्युक्ति	आधीन—अधीन
इतिपूर्व—इतःपूर्व	अनुग्रहीत—अनुगृहीत
च्यूत्—च्युत	उच्छास—उच्छ्वास
वृज—व्रज	हिन्दु—हिन्दू
व्यवहृरित—व्यवहृत	कृतघ्नी—कृतघ्न

(२७) जो--(क) सर्वनाम--विद्यार्थी जो पढ़ता था, वहाँ गया है।
(ख) विशेषण--जो आम चाहो, लो।
(ग) अव्यय--किसमें शक्ति है जो मुझे रोके ?
(२८) अरुण--(क) संज्ञा--अरुण उदित हुआ।
(ख) विशेषण--प्राची अरुण हो उठी।

अभ्यास

(१) सकर्मक और अकर्मक से बनी कैसी संयुक्त क्रियाओं में 'ने' चिह्न प्रयुक्त होता है ?

(२) 'ने' चिह्न का प्रयोग कहाँ-कहाँ होता है ? सोदाहरण लिखें।

(३) निम्नलिखित वाक्यों को शुद्ध करें -

अर्जुन और भीम ने जो वाणों को चलाये थे उसे भीष्म ने खण्डित कर दिय। सावित्री ने रातभर सिनेमा देखा किया। उसने चल दिये। सीता रो दी। सावित्री मुस्कुरा दी। जिसका लाठी, उसका भैंस। राम ने श्याम को कहे कि मैं तुमको गणित नहीं पढ़ायेंगे क्योंकि तूने मेरी उस किताब को चुरा लीये थे जिसे मैंने सोनपुर के मेला में खरीदे थे।

(४) एक ऐसा वाक्य बनावें जिसमें सातो कारकों का प्रयोग हो।

(५) कर्त्ता के 'से' चिह्न का प्रयोग कर चार वाक्य बनायें।

(६) अपादान और सम्प्रदान कारकों के चिह्नों का प्रयोग करते हुए पाँच-पाँच वाक्य बनावें।

(७) किन्हीं पाँच शब्दा का प्रयोग भिन्न-भिन्न रूपों में करें।

अशुद्धि-संशोधन

अशुद्ध—शुद्ध
मिमांसा—मीमांसा
श्रीवान्—श्रीमान्
भागिरथी—भागीरथी

अशुद्ध--शुद्ध
दुरावस्था—दुरवस्था
सहाय्य—साहाय्य
बाल्मीकी—वाल्मीकि

अशुद्ध—शुद्ध
सिन्दुर—सिन्दूर
महत्व—महत्त्व
दधिची—दधीचि
अधिन—अधीन
ग्रहीत—गृहीत
सुन्दरतम—सुन्दरतम
हिन्दूस्तान—हिन्दुस्तान
उत्कर्स—उत्कर्ष
प्रत्यूत—प्रत्युत
वाहनी—वाहिनी
आयुदिक—आयुर्वैदिक
सर्वकालिक—सार्वकालिक
दर्शण—दर्शन
गत्यावरोध—गत्यवरोध
नुपुर—नूपुर
सोधित—शोधित
स्वास्थ—स्वास्थ्य
लक्ष्मीमान्—लक्ष्मीवान्
नरायन—नारायण
निसित—निशित
शोनित—शोणित
अत्योक्ति—अत्युक्ति
इतिपूर्व—इतःपूर्व
च्यूत्—च्युत
वृज—व्रज
व्यवहरित—व्यवहृत

अशुद्ध—शुद्ध
मुहुर्त्त—मुहूर्त्त
उरु—उरू
अकाट्टय—अकाट्य
आवश्यकीय—आवश्यक
उर्ध—ऊर्ध्व
उपरोक्त—उपर्युक्त
व्योहार—व्यवहार
यथेष्ठ—यथेष्ट
पूर्वाह्न—पूर्वाह्‌ण
त्रिवार्षिक—त्रैवार्षिक
चतुर्वेदिक—चातुर्वेदिक
सर्वजनीन—सार्वजनीन
जात्याभिमानी—जात्यभिमानी
नीत्यानुसार—नीत्यनुसार
श्राप—शाप
मुठ्ठी—मुट्ठी
एकत्रित—एकत्र
ईच्छा—इच्छा
जागृत—जागरित
महत्वाकांक्षा—महत्त्वाकांक्षा
शिवी—शिवि
आधीन—अधीन
अनुग्रहीत—अनुगृहीत
उच्छास—उच्छ्‌वास
हिन्दु—हिन्दू
कृतघ्नी—कृतघ्न

अशुद्ध—शुद्ध
घनिष्ट—घनिष्ठ
बरन—वरन्
विभीसिका—विभीषिका
वेदिक—वैदिक
वर्तमानकालीन—वर्त्तमानकालीन
अनाधिकार—अनधिकार
हरीतिमा—हरितिमा
स्रापित—शापित, शप्त
पुष्टी—पुष्टि
सन्मुख—सम्मुख
क्षत्र—छत्र
उपर—ऊपर
गुणि—गुणी
धैर्यता—धैर्य, धीरता
कौतुहलता—कुतूहल, कौतूहल
निरास—निराश
अक्षोहिनी—अक्षौहिणी
प्रतिकार—प्रतीकार
रमायन—रामायण
अनिष्ठ—अनिष्ट
प्रांगन—प्रांगण
पश्वाधम—पश्वधम
वारंवार—बारंबार
उज्वल—उज्ज्वल
मरन—मरण
प्रशाद—प्रसाद

अशुद्ध—शुद्ध
सुश्रुषा—शुश्रूषा
जगबन्धु—जगद्बन्धु
द्विमासिक—द्वैमासिक
वैदकालिक—वेदकालिक
दारिद्रता—दरिद्रता
उऋण—अनृण
गर्द्धभ—गर्दभ
आकरसित—आकर्षित, आकृष्ट
पुहकर—पुष्कर
पिचास—पिशाच
द्वारिका नाथ—द्वारकानाथ
मात्रीक—मात्रिक, मातृक
दरोगा—दारोगा
धीरजता—धीरज, धीरता
निर्दोषी—निर्दोष
शसि—शशी
परिक्षण—परीक्षण
निरोगी—नीरोग
अपरान्ह—अपराह्ण
कल्यान—कल्याण
क्षन—क्षण
प्रवृत—प्रवृत्त
भरथ—भरत
पुरष्कार—पुरस्कार
मृन्मय—मृण्मय
प्रनाम—प्रणाम

अशुद्ध - शुद्ध	अशुद्ध—शुद्ध
प्रनेता—प्रणेता	भागवत्—भागवत
भ्रातागण—भ्रातृगण	मनोकष्ट—मनःकष्ट
महानता—महत्ता	वहिण—वह्नि
अग्रगन्य—अग्रगण्य	बाह्मन—ब्राह्मण
पाणो—पाणि	प्रसण्ण—प्रसन्न
वीना—वीणा	विसम—विषम
शेक-सेक	बहिस्कार—बहिष्कार
बद्री—बदरी	पैत्रिक—पैतृक
आशिर्वाद—आशीर्वाद	तलाब—तालाब
सरवर—सरोवर	छितीश—क्षितीश
तरवर—तरुवर	निरपराधी—निरपराध
निराशा—नैराश्य	निर्धनी—निर्धन
शशीधर—शशिधर	परिक्षा—परीक्षा
निरिक्षण—निरीक्षण	निर्लज्जी—निर्लज्ज
गनना—गणना	मध्याहृण—मध्याह्न
वानिज्य—वाणिज्य	मुसिक—मूषिक
आँगण—आँगन	कंकन—कंकण
छन—क्षण	गनित—गणित
पारवतीय—पर्वतीय, पार्वतीय	फाल्गुण—फाल्गुन
बाहुल्यता—बाहुल्य, बहुलता	दशहारा—दशहरा
भीस्म—भीष्म	आमिश—आमिष
चिणमय—चिन्मय	रूग्न—रुग्ण
विसाद—विषाद	प्रनिपात—प्रणिपात
प्रनय—प्रणय	भाग्यवान—भाग्यवान्
मनोकामना—मनःकामवा, मनस्कामना	महदुपकार—महोपकार
वनिक—वणिक	गगण—गगन

अशुद्ध—शुद्ध	अशुद्ध—शुद्ध
वानी—वाणी	विसन्न—विषण्ण
वर्न—वर्ण	तिरष्कार—तिरस्कार
अभिसेक—अभिषेक	अभिसिक्त—अभिषिक्त
अनुसंगिक—आनुषंगिक	निर्दयी—निर्दय
भष्म—भस्म	षुप्ति—सुप्ति
परिस्कार—परिष्कार	निसाद—निषाद
आविस्कार—आविष्कार	पितृस्वसा—पितृष्वसा
सिंघ—सिंह	सिंचन—सेचन
सशंकित—शंकित, सशंक	मनयोग—मनोयोग
सम्बन्धीय—सम्बन्धी, सम्बन्धित	षष्टम—षष्ठ
अन्तष्करण—अन्त:करण	अधगति—अधोगति
जग-जननी—जगज्जननी	जग-जीवन—जगज्जीवन
मनहर—मनोहर	व्याकुलित—व्याकुल
विद्यमान्—विद्यमान	शिरारोग—शिरोरोग
अत्याधिक—अत्यधिक	संबन्ध—सम्बन्ध
शरदेन्दु—शरदिन्दु	हिमृतु—हिमर्तु, हिमऋतु
प्रताड़ण—प्रताड़ना, प्रताड़न	शिरोमनि—शिरोमणि
प्रतिछाया—प्रतिच्छाया	निरव—नीरव
सद्यजात—सद्योजात	विहंगिनी—विहंगी
सम्बरण—संवरण	गायकी—गायिका
प्रतिविम्व—प्रतिबिम्ब	विछेद—विच्छेद
दिगम्वरी—दिगम्बरी	आष्पद—आस्पद
प्रतिहारिणी—प्रतिहारी	नभमण्डल—नभोमण्डल
श्वेतांगिनी—श्वेतांगी	मृयमान—म्रियमाण
शुरभी—सुरभी, सुरभि	द्वैपाद—द्विपाद
निर्मोही—निर्मोह	सुसुप्ति—सुषुप्ति

अशुद्ध—शुद्ध	अशुद्ध—शुद्ध
सुसमा—सुषमा	विसाद—विषाद
भासन—भाषण	वास्प—वाष्प
सौन्दर्यता—सौन्दर्य, सुन्दरता	शमाहर्त्ता—समाहर्त्ता
साम्यता, साम्यत्व—साम्य, समता	तरुन—तरुण
सम्वत—संवत्	सदोपदेश—सदुपदेश
शालिग्राम—शालग्राम	निर्वान—निर्वाण
यशलाभ—यशोलाभ	जग-जलधि—जगज्जलधि
नीरामय—निरामय	मनोसाधना—मनःसाधना
विद्यामान्—विद्यावान्	व्याकरणी—वैयाकरण
सम्बाद—संवाद	निस्फल—निष्फल
सरद्—शरद्, शरत्	हृद्पिण्ड—हृत्पिण्ड
शिरछेद—शिरश्छेद	जगरनाथ—जगन्नाथ
नमष्कार—नमस्कार	कृशांगिनी—कृशांगी
पुलीन—पुलिन	मनीसा—मनीषा
चक्षूरोग—चक्षुरोग	पात्री—पात्र
सुलोचनी—सुलोचना	परिछेद—परिच्छेद
गोपिनी—गोपी	पयोपान—पयःपान
अप्सरी—अप्सरा	किम्वदन्ती—किंवदन्ती
पिशाचिनी—पिशाची	आलस्यता—आलस्य
ज्ञानमान्—ज्ञानवान्	अस्तमान—अस्तायमान
कम्पायमान—कम्पमान	पूज्यास्पद—पूजास्पद
अशहनीय—असहनीय, असह्य	स्वातंत्र—स्वातन्त्र्य, स्वातंत्र्य
भाग्यमन्त—भाग्यवान	प्रजोजन—प्रयोजन
गौरवत्व—गौरव, गुरुता	पतिनी—पत्नी
संभ्रान्तशाली—संभ्रान्त	नैन—नयन
पिताभक्ति—पितृभक्ति	महात्मागण—महात्मगण

अशुद्ध—शुद्ध

माता भक्ति—मातृभक्ति
पक्षीगण— पक्षिगण
महाराजा—महाराज
पिताविहीन - पितृविहीन
सविनयपूर्वक - सविनय, विनयपूर्वक
दुरात्मागण—दुरात्मगण
सकुशल पूर्वक—सकुशल, कुशलपूर्वक
सचेष्टित—सचेष्ट
सकृतज्ञ—कृतज्ञ
भुजंगिनी—भुजंगी
वसिष्ट—वसिष्ठ, वशिष्ठ
हरेक—हरएक
सत्व—सत्त्व
दोहराना—दुहराना
एकहरा—इकहरा
तेबारा—तिवारा
यूं—यों
अनसन—अनशन
अन्तर्ध्यान—अन्तर्धान
व्यालिना—व्याली
सानन्दित—आनन्दित, सानन्द
राजागण—राजगण
रोगीसेवा—रोगिसेवा
हस्तीयूथ—हस्तियूथ
मन्त्रीमंडल — मन्त्रिमंडल
दैन्यता—दैन्य, दीनता

अशुद्ध—शुद्ध

अष्टवक्र—अष्टावक्र
हंसराज—राजहंस
कालीदास—कालिदास
देविदास—देवीदास
निर्गुणी — निर्गुण
शिक्षार्थीगण—शिक्षार्थिगण
स्वामीभक्त—स्वामिभक्त
जगधात्री—जगद्धात्री
अधिकारी वर्ग—अधिकारिवर्ग
मतान्तर—मतान्तर
श्वेत यजुर्वेद—शुक्ल यजुर्वेद
क्यू—क्यों
दो बारा—दुबारा
दो रंगा—दुरंगा
दोहरा—दुहरा
कँटीली आँखें—कटीली आँखें
सौदामिनी—सोदामनी
श्याम यजुर्वेद—कृष्ण यजुर्वेद
भ्रातागण—भ्रातृगण
कालिमाता—कालीमाता
शिरोपीड़ा—शिर:पीड़ा
योगीवर—योगिवर
मंत्रीवर—मंत्रिवर
दिवारात्रि—दिवारात्र
सापराधी—सापराध
मातादेवी—मातृदेवी

अशुद्ध—शुद्ध	अशुद्ध—शुद्ध
राजापथ—राजपथ	भ्रातापुत्र—भ्रातुष्पुत्र
अहर्निशि —अहर्निश	सत विचार—सद्विचार
अहोरात्रि—अहोरात्र	हस्ताक्षेप – हस्तक्षेप
सूरता—शूरता, शौर्य	अधतल—अधस्तल
दारशथी—दाशरथि	पौरुषता—पुंस्त्व, पुरुषत्व, पौरुष
सौजन्यता—सौजन्य, सुजनता	अश्रुवती—अश्रुमती
सृजना—सर्जन	मान्यनीय - मान्य, माननीय
हस्यास्पद—हास्यास्पद	मैत्रता—मित्रता, मैत्री
अमावस—अमा, अमावस्या, आमावस्या	

अभ्यास

(१) निम्नलिखित वाक्यों को शुद्ध करें—

आपकी सौजन्यता सराहनीय है। राम और श्याम में मैत्रता है। यह कार्य हस्यास्पद है। निर्गुणी भगवान की पूजा करनी चाहिए। हरेक कार्य को मन से करना चाहिए। वह अन्तर्ध्यान हो गया। तू यह कार्य क्यूं करता है ? आप से सविनयपूर्वक अनुरोध है। वे दुरात्मागण हैं। वह पिताविहीन बालक है। वह ज्ञानमान व्यक्ति है। मुझे पुस्तकें एकत्रित करना है। उन्होंने उसे सदोपदेश दिया। वह जात्याभिमानी है। वह निर्दय व्यक्ति है। यह निर्मोही आदमी है। उसकी दुरावस्था पर ध्यान दें। यह कार्य महत्वपूर्ण है। उपरोक्त शब्दों को शुद्ध कीजिये। साहित्य में आजकल गत्यावरोध है। उसका स्वास्थ ठीक नहीं है। यह दूध यथेष्ट है। उसने उसे श्राप दिया। उसकी ईच्छा बलवान् है। वह उसके आधीन है। तुम कृतघ्नी है। यह गर्द्धभ रेकती है। दुख में मनुष्य को धैर्यता धारण करना चाहिए।

(२) पांच ऐसे शब्द लिखें जो व्याकरण से अशुद्ध हों और हिन्दी में प्रयुक्त होते हों।

श्रुतिसम भिन्नार्थक शब्द

अभिराम—सुन्दर। अविराम—लगातार।
अनु—एक उपसर्ग, पीछे। अणु—सूक्ष्मतम कण।
अन्त—समाप्ति। अन्त्य—निम्न, निकृष्ट, अन्तिम।
अंश—भाग। अंस—कन्धा।
इति—समाप्त। ईति—शस्य-विघ्न।
कुल—वंश। कूल—किनारा।
कृत—किया हुआ। क्रीत—खरीदा हुआ।
केसर—सिंह की गर्दन के बाल। केशर—कुंकुम।
चिर—दीर्घ। चीर—वस्त्र।
च्युत—अलग, भ्रष्ट। चूत—आम का वृक्ष।
तरणी—नौका। तरुणी—युवती। तरणि—सूर्य।
दार—पत्नी। द्वार—दरवाजा।
दारा—भार्या। द्वारा—हेतु।
दिन—दिवस। दीन—दरिद्र।
द्विप—हाथी। द्वीप—टापू।
दूत—संवाददाता। द्यूत—जुआ।
देश—मुल्क। द्वेष—शत्रुता।
नीड़—घोंसला। नीर—पानी।
पाणि—हाथ। पानी—जल।
परुष—कठोर। पुरुष—नर।
प्रसाद—अनुग्रह। प्रासाद—महल।
प्रकृत—यथार्थ, स्वाभाविक। प्राकृत—भाषा विशेष।
वसन—वस्त्र। व्यसन—विषयानुरक्ति।
बलि—पूजोपहार। बली—बलशाली।
बिना—अभाव में। वीणा—बाजा।

लक्ष—लाख । लक्ष्य—उद्देश्य ।
शंकर—शिव । संकर—जारज, मिश्रित, बुहारन ।
शव—लाश, रात । सब—कुल ।
शम—शान्ति । सम—बराबर ।
शर—तीर । सर—तालाव ।
सुत—पुत्र । सूत—सारथी ।
शुचि—पवित्र । सूचि—सूई । सूची—तालिका ।
शूर—वीर । सूर—सूर्य । सुर—देवता, आवाज
शित—तीक्ष्ण । सित—उजला ।
शुल्क—फीस । शुक्ल—उजला ।
शर्व – शिव, विष्णु । सर्व—समस्त ।
पाश—जाल । पास—निकट ।
प्रणय—प्रेम । परिणय—विवाह ।
परिक्षा — कीचड़ । परीक्षा—जांच ।
परिमेय—जो नापा जा सके । प्रमेय—प्रमाणित होने योग्य ।

अभ्यास

निम्नलिखित युग्म-शब्दों में प्रयोग के द्वारा अर्थ-भिन्नता स्पष्ट करें—

(१) नीर-नीड़, (२) शित-सित, (३) द्विप-द्वीप, (४) अनु-अणु (५) कुल-कूल ।

पर्यायवाची शब्द

कमल—अम्बुज, अंभोज, अब्ज, अरविन्द, उत्पल, कोकनद, जलज, तामरस, नीरज, पंकज, पद्म, वनज, राजीव, शतदल, श्रीपर्णज, सरसिज, सरोज, वारिज ।

अन्धकार—तमः, तमिस्रा, तिमिर, ध्वान्त ।

आग—अंगार, अनल, कृशानु, दहन, पावक, वह्नि, हिरण्यरेता, हुताशन, अग्नि ।

पाप—अघ, कलुष, पातक, पंक, किल्बिष ।

असुर—इन्द्रारि, दनुज, दानव, दितिसुत, देवारि, दैतेय, दैत्य, निशिचर, यातुधान ।

आँख—अक्षि, चक्षु, नयन, नेत्र, लोचन ।

आकाश—अन्तरिक्ष, अम्बर, अभ्र, गगन, नभ, व्योम ।

किरण—अंशु, ज्योति, मयूख, मरीचि, रश्मि ।

गंगा—जाह्नवी, त्रिपथगा, देवापगा, भागीरथी, सुरापगा, सुरसरिता ।

घोड़ा—अश्व, तुरग, घोटक, तुरंग, हय ।

चन्द्र—अब्ज, इन्दु, कलाधर, कलानिधि, कुमुदबन्धु, चन्द्रमा, नक्षत्रेश, निशाकर, निशापति, राकेश, विधु, शशधर, शशांक, सुधांशु, शशि, सुधाकर, सोम, हिमांशु ।

जल—अमृत, अम्बु, अम्भस्, उदक, तोय, नीर, पयः, वारि, सलिल ।

नदी—तटिनी, तीरिनी, तरंगिनी, शैवालिनी, सरिता, स्रोतस्विनी ।

पंडित—कोविद, बुध, मनीषी, विद्वान्, सुधी, विचक्षण ।

पृथ्वी—अवनि, क्षिति, क्षोणी, धरणि, धरणी, धरा, धरित्री, वसुन्धरा, वसुधा, वसुमती, भू, भूमि, मही, मेदिनी, रत्नगर्भा ।

हाथी—करी, कुंजर, गज, दन्ती, द्विप, द्विरद, नाग, मातंग, हस्ती ।

स्त्री—अबला, कान्ता, कामिनी, नारी, वनिता, वामा, भामिनी, महिला, रमणी, सीमंतिनी, दार, अंगना, योषा, योषित् ।

सोना—कंचन, कनक, सुवर्ण, हाटक, हिरण्य, हेम ।

सूर्य—अंशुधर, अंशुमाली, अरुण, अर्क, आदित्य, तपन, दिनकर, दिनमणि, दिनेश, दिवाकर, नलिनीपति, पंकजेश, प्रभाकर, भानु, भास्कर, मार्तण्ड, मरीचिमाली मित्र, रवि, सविता, सहस्रांशु, सूर ।

बिजली—क्षणप्रभा, चंचला, चपला, तडित, दामिनी, विद्युत, सोदामनी ।

भ्रमर—अलि, भृंग, भौंरा, मधुकर, मधुप, षट्पद ।

मेघ—अभ्र, अम्बुवाह, घन, जलद, जलधर, जीमूत, धाराधर, बलाहक, बादल, वारिद, नीरद, अब्ज, पयोद ।

रात—क्षपा, तमस्विनी, निशा, निशीथिनी, यामिनी, रजनी, रात्रि, विभावरी, शर्वरी, त्रियामा, क्षणदा ।

राजा—अधिपति, अवनिपति, नरपति, नरेश, नृपति, भूपति, महीपति, लोकेश, पृथ्वीपति, भूपाल आदि ।

शिव—कामारि, गंगाधर, चन्द्रशेखर, त्रिपुरारि, त्रिनेत्र, दिगम्बर, नीलकंठ भूतनाथ, महादेव, महेश, हर ।

समुद्र—अब्धि, अर्णव, उदधि, ऊर्म्मिमाली, जलनिधि, जलधि, तोयनिधि, नदीश, नीरनिधि, पंकनिधि, पयोधि, वननिधि, वारीश, रत्नाकर, सागर, सिन्धु ।

साँप—अहि, उरग, फणी, व्याल, भुजंग, सर्प ।

अभ्यास

निम्नलिखित शब्दों में प्रत्येक के तीन-तीन पर्यायवाची शब्द लिखें—

सूर्य, कमल, अन्धकार, आँख, साँप, समुद्र, नदी, हाथी और सोना ।

विपरीतार्थक शब्द

आकाश—पाताल ।	आदि—अन्त ।
आय—व्यय ।	प्रकाश—अन्धकार ।
ऊँच—नीच ।	उदय—अस्त ।
जीवन—मरण ।	धनवान्—निर्धन ।
पण्डित—मूर्ख ।	स्तुति—निन्दा ।
गुरु—लघु ।	वाचाल—मूक ।
सुख—दुःख ।	स्थावर—जंगम ।
हर्ष—विषाद ।	सादि—अनादि ।
सान्त—अनन्त ।	अग्र—पश्चात् ।
नूतन—पुरातव	अवृष्टि / अनावृष्टि }—अतिवृष्टि

पाप—पुण्य ।
अनुराग —विराग ।
विरह—मिलन ।
वृद्धि—ह्रास ।
अपना —पराया ।
अर्थ—अनर्थ ।
आगत—अनागत ।
सन्धि—विच्छेद ।
संभव—असंभव ।
संयोग—वियोग ।
सगुण—निर्गुण ।
उर्वर—अनुर्वर ।
हास्य —रुदन, क्रन्दन ।
स्वतंत्र—परतंत्र ।
सुलभ—दुर्लभ ।
काला—उजला ।
दानी—कृपण ।
ज्ञानी—अज्ञानी, मूर्ख ।
जीवन—मरण ।
चंचल—स्थिर ।
क्रय —विक्रय ।
सूक्ष्म—स्थूल ।
उत्कर्ष—अपकर्ष ।
उन्नति—अवनति ।
हानि—लाभ ।
आरोहण—अवरोहण ।
रात—दिन ।
वियुक्त—संयुक्त ।
अनुरोध—विरोध ।
अधिक—न्यून, अल्प ।
शत्रु—मित्र ।
शाश्वत—क्षणिक ।
शीतल—उष्ण ।
समास—व्यास ।
आदान—प्रदान ।
आविर्भूत—तिरोभूत ।
साकार—निराकार ।
ह्रस्व—दीर्घ ।
स्वर्ग—नरक ।
सृष्टि—नाश ।
सुडौल—कुडौल ।
सुगन्ध—दुर्गन्ध ।
दयालु—निर्दय ।
ज्येष्ठ—कनिष्ठ ।
जड़—चेतन ।
श्रद्धा—घृणा ।
कृश—पीन ।
कोमल—कठोर, कठिन ।
उत्कृष्ट—निकृष्ट ।
उपकार—अपकार ।
उद्धत—विवीत ।
प्रेम—द्वेष ।

उन्नत—अवनत । जय—पराजय ।
जीत—हार । मान—अपमान ।
जीवित—मृत । उत्साहित—अनुत्साहित

अभ्यास

निम्नलिखित शब्दों के विपरीतार्थक शब्द लिखें—

आदि, अनादि, अनन्त, मूक, स्वर्ग, विराग, पीन और उत्कृष्ट ।



मुहावरे

अंग तोड़ना = अँगड़ाई लेना ।

अंग लगना = आलिंगन करना, काम में आना ।

अँगुली उठाना = बदनाम करना ।

अँगुली पकड़ते पहुँचा पकड़ना = थोड़ा सहारा पाकर अधिक के लिए दुस्साहस करना ।

अँगुलियों पर नचाना = इच्छा के अनुकूल काम कराना

पाँचों अंगुली घी में होना = सभी तरह से लाभ होना ।

अंगूठा चूमना = खुशामद करना ।

अंगूठा दिखाना = साफ इन्कार करना ।

आँख आना = आँख उठना, आँख में लाली और सूजन होना ।

आँख का तारा—(पुतली) = बहुत प्यारा ।

आँख खुलना = जगना, होशियार होना ।

आँख खोलना = सावधान करना ।

आँखें चार करना = भेंट होना ।

आँख चुराना = सामने न होना ।

आँख दिखाना = क्रोध जतलाना ।

आँखें फिर जाना, आँखें बदल जाना = प्रेम की पूर्वावस्था न रहना, उदासीन होना ।

आँखें बिछाना = रास्ता देखना, प्रेमपूर्वक स्वागत करना ।

आँख मारना = इशारा करना।

आँखों में खटकना = अप्रिय होना।

आँखों में खून उतरना = बहुत क्रुद्ध होना।

आँखों में गड़ना या चुभना = बुरा लगना।

आँखों में चरबी छाना = मदान्ध होना।

आँखों में धूल झोंकना = धोखा देना।

आँखों में रात काटना = सारी रात जगकर बिताना।

आँखों में समाना = हृदय में बसना।

किसी पर आँखें रखना = निगरानी रखना।

आँखें लगना = नींद लगना, प्रेम होना, नजर लगना।

आँखें लड़ना = प्रेम होना।

आँखें लाल करना = सक्रोध देखना।

आँखें सेंकना = दर्शन का सुख प्राप्त करना।

आँखें होना = बुद्धि होना।

आँसू पीकर रह जाना = भीतर ही भीतर रोना।

आँसू पोछना = ढाढ़स देना।

कमर कसना = तैयार होना।

कमर टूटना = बल टूटना, निराश हो जाना।

कलेजा जलाना = दुःख देना।

कलेजा ठंढा करना = शान्त होना।

कलेजा निकाल कर रखना = सर्वस्व दे देना।

कलेजा पकना = दुःख से व्याकुल होना।

कलेजे पर साँप लोटना = ईर्ष्या होना, हठात् शोक प्राप्त करना।

कान उठाना = चौकन्ना होना।

कान काटना = मात करना, हराना।

कान खड़े होना = सावधान होना।

कान खाना, कान खा जाना = बड़ा शोर मचाना।

कान देना = ध्यान देना ।
कान पर जूँ न रेंगना = एकदम ही ध्यान न देना ।
कान भरना = निन्दा करना ।
कान में उँगली देना = उदासीन होकर सुनना ।
कान में डाल देना = कह देना, सुना देना ।
कान में तेल डालना = चुप्पी लगा जाना ।
कानों-कान खबर न होना = जरा भी खबर न होना ।
कोढ़ की खाज = दुःख पर दुःख ।
खून खौलना = क्रोध करना ।
खून का प्यासा होना = जान का दुश्मन होना ।
खून सिर पर सवार होना = किसी को मारने का तैयार होना ।
खून पीना = क्रूरता की सीमा तोड़ना, मार डालना ।
गला काटना = बहुत हानि पहुँचाना ।
गला घोंटना = जबर्दस्ती मार डालना ।
गला छूटना = छुटकारा मिलना ।
गला फाड़ना = जोर से चिल्लाना ।
गले के नीचे उतरना = मन में बैठना ।
गले पड़ना = अनिच्छित रूप में मिलना ।
गले बाँधना या मढ़ना = जबर्दस्ती सौंपना ।
गले लगाना = प्यार से मिलना ।
गले का हार = बहुत प्यारा ।
गाल फुलाना = रूठना ।
गाल बजाना = डींग हाँकना या मारना ।
काल के गाल में जाना = मरना ।
गाल करना = मुँहजोरी करना ।
चित्त चुराना = मन मोहना ।
चित्त में धँसना या पैठना = समझ में आना ।

चित्त से उतरना = नजर से गिरना ।

चुटकियों में उड़ाना = कुछ न समझना ।

चुटकी भरना = चुभनेवाली बात कहना ।

चुटकी लेना = हँसी उड़ाना ।

पत्थर की छाती करना = दुःख सहने के लिए तैयार रहना ।

छाती पर कोदो या मूँग दलना = महान अत्याचार करना ।

छाती पर पत्थर रखना = दुःख सहने के लिए दिल कठोर करना ।

छाती पीटना = हाय-हाय कर रोना ।

वज्र की छाती = कठोरतम हृदय ।

छाती जुड़ाना = आनन्दित और शान्त होना ।

जान के लाले पड़ना = प्राणों पर घोर संकट होना ।

जान को जान न समझना = घोर परिश्रम करना ।

जान खाना = तंग करना ।

जान छुड़ाना = झंझट से मुक्त होना ।

जान आना = उत्साह आना ।

जान पर खेलना = मृत्युभय छोड़कर काम करना ।

किसी पर जी आना = प्रेम होना ।

जी का बुखार निकालना = मनका उद्वेग शान्त करना ।

जी खोलकर = बेधड़क ।

जी चुराना = काम से भागना ।

जी भर आना = दया उमड़ना ।

जी भरकर = मन के मुताबिक ।

जी लगना = चित लगना, प्रेम होना ।

टाँग अड़ाना = रुकावट डालना ।

टाँग पसार कर सोना = निश्चिन्त रहना ।

तलवा सहलाना या चाटना = बहुत खुशामद करना ।

दम तोड़ना = मरना । दम भरना = भरोसा दिलाना ।

दम देना = आशा देना, बहलाना । दाँत काटी रोटी = गाढ़ी मित्रता ।
दाँत अंगुली काटना या दाँत तले अंगुली दबाना = आश्चर्य से दंग रह जाना । दाँत खट्टे करना = खूब नीचा दिखाना ।
दाँत गड़ाये रखना = लेने की प्रबल इच्छा रखना ।
दाँतों में तिनका लेना = दया के लिए प्रार्थना करना ।
दाँत तोड़ना = हरा देना । दाँत लगाना = लेने की गहरी चाह रखना ।
तालू में दाँत जमना = बुरे दिन आना । नाक काटना = इज्जत जाना ।
नाक का बाल = बहुत प्यारा । नाकों चने चबाना = खूब तंग करना ।
नाक में दम करना = बहुत परेशान करना ।
नाक रगड़ना = मिन्नतें करना । नाक रखना—इज्जत बचा लेना ।
नाक भौं-सिकोड़ना = नापसन्द करना, घिनाना ।
पाँव अड़ाना = फिजूल दखल देना । पाँव उखड़ना = युद्ध में न ठहरना ।
पाँव जमाना = स्थिर भाव से रहना ।
पाँव तले की मिट्टी खिसक जाना = भय कंपित हो जाना ।
पाँव तोड़कर बैठना = निश्चेष्ट, स्थिर होना ।
पाँव फैलाना = अधिक प्राप्ति का लोभ करना ।
पाँव बढ़ाना = अतिक्रमण करना ।
पाँव रोपना = प्रण करना । पाँव भारी होना = गर्भवती होना ।
धरती पर पाँव न रखना = फूले न समाना ।
पीठ का, पीठ पर का = ठीक बाद का जन्म । पीठ पीछे = सामने नहीं ।
पीठ ठोकना = उत्साहित करना । पीठ दिखाना = भागना ।
पीठ पर होना = मदद को तैयार होना ।
पीठ लगना = पीठ पर घाव होना ।
पेट काटना = खाने-पीने में कमी करना ।
पेट का पानी न पचना = बात कहे बिना नहीं रहना ।
पेट की आग = भूख । पेट देना = भेद की बात बतलाना ।
पेट फूलना = जानने की उत्सुकता होना ।
पेट में पाँव होना = कपटी होना ।

पेट में पैठना = भेद जानने के लिए मेल बढ़ाना ।

पेट में होना = मन में होना ।

बगलें झाँकना = भागने का उपक्रम करना ।

बाल की खाल खींचना = अनावश्यक दलील देना ।

बाल बाँका न होना = कुछ भी हानि न होना ।

बाल पकना = अनुभवशील होना ।

बाल-बाल बचना = संकट आते-आते व आना ।

भौंह तानना = क्रोध करना । भौंह जोहना = खुशामद करना ।

मन टूटना = हताश होना ।

मन के लड्डू खाना = व्यर्थ आशा पर प्रसन्न होना ।

मन डोलना = लोभ होना । मन देना = जी लगाना, ध्यान देना ।

मन मारना = उदास होना, चाह रोकना ।

मन मैला करना = अप्रसन्न होना । मन रखना = इच्छा पूरी करना ।

मन लाना = मन लगाना । माथा पच्ची करना = सिर खपाना ।

मुँह आना = निनावा होना । मुँह काला होना = निन्दा का पात्र होना ।

मुँह चुराना = लजाना, काम से भागना ।

मुँह छूना = नाम मात्र के लिए पूजना । मुँह फुलाना = रूठना ।

मुँह भरना = घूस देना । मुँह मीठा करना = खुश करना ।

मुँह में लड्डू लगना = चस्का लगना ।

मुँह में जबान होना = कहने की सामर्थ्य होना ।

मुँह में पानी भर आना = ललचाना ।

मुँह में लगाम न होना = व्यर्थ बकना ।

मुँह से फूल झड़ना = मधुर बातें कहना ।

अपना-सा मुँह होना = लज्जित होना । मुँह की खाना = हारना ।

मुँह का निवाला छीनना = रोजी छीनना ।

मुँह के बल गिरना = धोखा खाना ।

मुँह देखकर बात करना = खुशामद करना, न्याय पर नहीं रहना ।

मुँह लगना = बढ़-बढ़ कर बोलना । मुँह लगाना = सिर चढ़ाना ।
मुँह रखना = इज्जत रखना । मुट्ठी में = कब्जे में ।
मुट्ठी गरमाना = रुपये लेना, घूस लेना ।
लातें मारना = त्याग देना । सिर आँखों पर = आदर-सत्कार के साथ ।
सिर उठाना = विद्रोह करना । सिर ऊँचा करना = प्रतिष्ठित होना ।
सिर खाली करना = बकबाद करना । सिर खाना = व्यर्थ बहुत बोलना ।
सिर खपाना = बुद्धि का व्यर्थ प्रयोग करना ।
सिर चढ़ाना = बहुत बढ़ा देना, धृष्ट बनाना ।
सिर देना = प्राण देना । सिर पटकना = पछताना, सिर धुनना ।
सिर पर पाँव रखना = बहुत तेजी में भागना ।
सिर पर होना = बहुत निकट होना । सिर फिरना = पागल होना ।
सिर मारना = सिर खपाना ।
सिर मुड़ाते ओले पड़ना = कार्यारंभ में ही बाधा होना ।
सिर से कफन बाँधना = मरने के लिए तैयार होना ।
सिर पर सींग होना = नाश का लक्षण दिखाई देना, कोई विशेषता होना ।
हथेली पर बाल जमाना = असंभव काम करने की कोशिश करना ।
हथेली पर जान लेकर = प्राणों का भय छोड़कर, अपूर्व साहस के साथ ।
हाथ में आना, पड़ना, लगना = मिलना ।
हाथ उठाना, चलाना, छोड़ना, लगाना = मारना ।
हाथ ऊँचा होना = दान देने में प्रवृत्त होना ।
हाथ कट जाना = बचनबद्ध होना । हाथ का मैल = तुच्छ वस्तु ।
हाथ खाली (तंग) होना—पास में धन न होना ।
हाथ खींचना = सहयोग नहीं देना ।
दूर से हाथ जोड़ना = अलग रहना ।
हाथ डालना, लगाना—योग देना, आरंभ करना ।
हाथ धोना = खोना ।
हाथ धोकर पीछे पड़ना = जी-जान से दुश्मनी में लगना ।

हाथ बँटाना = सहयोग देना।

हाथ-पाँव मारना, हिलाना = कोशिश करना।

हाथ बाँधे खड़ा रहना = सेवा में बराबर उपस्थित रहना।

हाथ मलना = पछताना। हाथों-हाथ लेना = बड़े आदर से स्वागत करना।

हाथ का खिलौना = सर्वथा वश में।

आड़े हाथों लेना—उल्टी सीधी सुनाना।

(२)

कागज रँगना = अंटसंट लिखना। आफत का परकाला = घोर उद्योगी।

पोल खुलना = भण्डा फूटना, भेद प्रकट होना, बुराई प्रकट होना।

डकार जाना = थाती मारना, पचा जाना।

झंडा ऊँचा होना = आतंक फैलना, विजय होना।

ईद का चाँद = मुश्किल से दीखने वाली वस्तु।

किधर चाँद निकला है ? = बहुत दिनों पर किसी का अकस्मात् आना।

चाँदी काटना—खूब धन कमाना।

घोड़ा बेचकर सोना = खूब निश्चिन्त होकर सोना।

गुल खिलना = विचित्र कारण होना, नया भेद प्रकट होना।

अक्ल का घोड़ा दौड़ाना = अनेक तर्क-वितर्क या कल्पनाएँ।

अन्धे की लकड़ी—एकमात्र सहारा। अन्धा बनना = मूर्ख होना।

निन्नावे के फेर में पड़ना = धन जमा करने की चिन्ता में पड़ना, चक्कर में पड़ना।

सोलह आने, बावन तोले पाव रत्ती = बिलकुल, समूचा।

नौ दो ग्यारह होना = भागना। आठ-आठ आँसू रोना = दुःखी होना।

छ-पाँच, नौ-छौ नहीं जानना = सरल होना। चार दिन = कुछ दिन।

तीन-तेरह होना = तितर-बितर होना। दो-दो बातें करना = कुछ कहना-सुनना।

एक से इक्कीस होना = उन्नति होना।

एक और एक ग्यारह होना = मिलकर शक्ति बढ़ाना।

लेना एक न देना दो—कोई मतलब नहीं ।

लेने के देने पड़ना—लाभ के बदले हानि होना ।

मर-मिटना—श्रम करते-करते मर जाना ।

मरने की छुट्टी न मिलना—अवकाश का अभाव होना ।

डूबना-उतराना – घोर चिन्ताकुल होना ।

ठोकर खाना—भूल के कारण क्षति उठाना ।

कच्चा खा जाना—प्राण लेना ।

हवा में गाँठ बाँधना—असंभव बातें करना ।

चेहरे पर हवाइयाँ उड़ना—मुँह का रंग फीका पड़ जाना ।

हवा लगना—बुरी संगति का प्रभाव पड़ना ।

हवा के घोड़े पर सवार होना, हवा से बातें करना—बहुत जल्दी करना ।

हवा उड़ना—खबर फैलना । लोहा मानना अधीनता स्वीकार करना ।

लोहा बजना—युद्ध होना । लोहा लेना – हथियार उठाना ।

मिट्टी में मिलना—नष्ठ होना । मिट्टी पलीद करना—दुर्दशा करना ।

बात में आना—धोखे में आना । बातों बिगड़ना—कार्य नष्ट होना ।

बातों में उड़ाना—टाल जाना ।

चुल्लू भर पानी में डूबना – बहुत लज्जित होना ।

पानी पी-पीकर—लगातार । पानी के मोल—बहुत सस्ता ।

पानी उतारना—इज्जत नष्ट करना । पानी-पानी होना—लज्जित होना ।

पानी न माँगना—एक ही आघात से मर जाना ।

पत्थर पड़ना—नष्ट होना : पत्थर से सिर मारना—असम्भव के लिए प्रयास करना ।

पत्थर पसीजना—निर्दय के मन में दया होना ।

पत्थर पर दूब जमाना अनहोनी करना ।

पत्थर की छाती—निष्ठुर । पत्थर की लकीर—अमिट ।

जिस पत्तल में खाना उसी में छेद करना—कृतघ्नता करना ।

दूध की मक्खी—अत्यन्त तुच्छ ।

तारे तोड़ लाना—बहुत ही कठिन काम कर दिखाना।
तारे गिनना—दुःख से रात काटना।
लोहे के चने चबाना—अत्यन्त कठिन कार्य हाथ में लेना।
घी के दीये जलाना—समृद्धिशाली होना।
घाट-घाट के पानी पीना—यहाँ-वहाँ मारा-मारा फिरना।
घर का न घाट का—व्यर्थ, निकम्मा। गाँठ का पूरा—धनवान्।
गाँठ पर गाँठ पड़ना—उलझन बढ़ना। खाक करना—बर्बाद करना।
खाक छानना—मारा-मारा फिरना। कुँए में गिरना—विपत्ति में पड़ना।
कुँए में भाँग पड़ना—सब की अक्ल मारी जाना।
कुँआ खोदना—बुराई करने का प्रयत्न करना।
सिर पर आसमान उठाना—ऊधम मचाना।
आसमान चढ़ाना—अत्यन्त प्रशंसा करना।
आसमान टूटना—अचानक विपत्ति पड़ना।
आग के मोल—बहुत महँगा।
आकाश-पाताल एक करना—भारी उद्योग करना।

अभ्यास

निम्नलिखित मुहावरों का वाक्य में प्रयोग करें—

दाँत खट्टे करना। खेत आना। लोहे के चने चबाना। घी के दीये जलाना। खाक छानना। हाथ मलना। नौ-दो ग्यारह होना। कान पर जूँ न रेंगना। आँख दिखाना। तारे गिनना।



लोकोक्ति

अण्डा सिखाये बच्चे को—छोटे का बड़े को उपदेश देना।

अन्त भला तो सब भला—अन्तिम परिणाम का सुन्दर होना, सबको सुन्दर बनाता है।

अन्धे के आगे रोये, अपना दीदा खोये—मूर्ख को दुःख-गाथा सुनाना व्यर्थ है।

अन्धेर नगरी चौपट राजा, टके सेर भाजी टके सेर खाजा—मालिक का मूर्खतावश भले-बुरे को एक समान समझना ।

अन्धों में काना राजा = मूर्खों के बीच कम जाननेवाला भी पण्डित माना जाता है ।

अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ता = अकेला मनुष्य कुछ नहीं कर सकता ।

अग्रसोची सदा सुखी = पहले विचार करनेवाला सदैव सुखी रहता है ।

अतिदर्पे हता लंका = घमण्ड से नाश होता है ।

अधजल गगरी छलकत जाय = थोड़ी बुद्धिवाला घमण्ड करता है ।

अपनी करनी पार उतरनी = अपने काम का ही फल मिलता है ।

अपनी डफली अपना राग = एकता का अभाव ।

अपना ढेढर न देखे दूसरे की फूली निहारे = अपना भारी दोष न देखकर दूसरे का छोटा दोष देखना ।

अपने मुँह मियाँ मिट्ठू = आत्म-प्रशंसक, आत्म-श्लाघी ।

अब पछताये होत क्या चिड़िया चुग गई खेत = समय खोकर पछताना व्यर्थ है ।

अशर्फी की लूट, कोयले पर छाप = कीमती वस्तु नष्ट करना और रद्दी को सँभालना ।

आँख का अन्धा, नाम नयन सुख = गुण के विरुद्ध नाम ।

आँख का अन्धा, गाँठ का पूरा = मूर्ख धनवान् ।

आग लगन्ते झोपड़ा, जो निकले सो लाभ = जब सब कुछ नष्ट हो रहा हो तब थोड़ा बचा रहना भी अच्छा है ।

आग लगा कर जमालो दूर खड़ी = झगड़ा लगाकर तमाशा देखना ।

आगे नाथ न पीछे पगहा = अकेला होना, कोई रोकनेवाला नहीं होना ।

आधा तीतर, आधी बटेर = मिलावट की बातें करना ।

आप डूबा तो जग डूबा = अपनी हानि के सहारे दुनिया की हानि का अंदाज करना ।

तारे तोड़ लाना—बहुत ही कठिन काम कर दिखाना।
तारे गिनना—दुःख से रात काटना।
लोहे के चने चबाना—अत्यन्त कठिन कार्य हाथ में लेना।
घी के दीये जलाना—समृद्धिशाली होना।
घाट-घाट के पानी पीना—यहाँ-वहाँ मारा-मारा फिरना।
घर का न घाट का—व्यर्थ, निकम्मा। गाँठ का पूरा—धनवान्।
गाँठ पर गाँठ पड़ना—उलझन बढ़ना। खाक करना—बर्बाद करना।
खाक छानना—मारा-मारा फिरना। कुँए में गिरना—विपत्ति में पड़ना।
कुँए में भाँग पड़ना—सब की अक्ल मारी जाना।
कुँआ खोदना—बुराई करने का प्रयत्न करना।
सिर पर आसमान उठाना—ऊधम मचाना।
आसमान चढ़ाना—अत्यन्त प्रशंसा करना।
आसमान टूटना—अचानक विपत्ति पड़ना।
आग के मोल—बहुत महँगा।
आकाश-पाताल एक करना—भारी उद्योग करना।

अभ्यास

निम्नलिखित मुहावरों का वाक्य में प्रयोग करें—

दाँत खट्टे करना। खेत आना। लोहे के चने चबाना। घी के दीये जलाना। खाक छानना। हाथ मलना। नौ-दो ग्यारह होना। कान पर जूँ न रेंगना। आँख दिखाना। तारे गिनना।



लोकोक्ति

अण्डा सिखाये बच्चे को—छोटे का बड़े को उपदेश देना।

अन्त भला तो सब भला—अन्तिम परिणाम का सुन्दर होना, सबको सुन्दर बनाता है।

अन्धे के आगे रोये, अपना दीदा खोये—मूर्ख को दुःख-गाथा सुनाना व्यर्थ है।

अन्धेर नगरी चौपट राजा, टके सेर भाजी टके सेर खाजा—मालिक का मूर्खतावश भले-बुरे को एक समान समझना।

अन्धों में काना राजा = मूर्खों के बीच कम जाननेवाला भी पण्डित माना जाता है।

अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ता = अकेला मनुष्य कुछ नहीं कर सकता।

अग्रसोची सदा सुखी = पहले विचार करनेवाला सदैव सुखी रहता है।

अतिदर्पे हता लंका = घमण्ड से नाश होता है।

अधजल गगरी छलकत जाय = थोड़ी बुद्धिवाला घमण्ड करता है।

अपनी करनी पार उतरनी = अपने काम का ही फल मिलता है।

अपनी डफली अपना राग = एकता का अभाव।

अपना ढेढर न देखे दूसरे की फूली निहारे = अपना भारी दोष न देखकर दूसरे का छोटा दोष देखना।

अपने मुँह मियाँ मिट्ठू = आत्म-प्रशंसक, आत्म-श्लाघी।

अब पछताये होत क्या चिड़िया चुग गई खेत = समय खोकर पछताना व्यर्थ है।

अशर्फी की लूट, कोयले पर छाप = कीमती वस्तु नष्ट करना और रद्दी को सँभालना।

आँख का अन्धा, नाम नयन सुख = गुण के विरुद्ध नाम।

आँख का अन्धा, गाँठ का पूरा = मूर्ख धनवान्।

आग लगन्ते झोपड़ा, जो निकले सो लाभ = जब सब कुछ नष्ट हो रहा हो तब थोड़ा बचा रहना भी अच्छा है।

आग लगा कर जमालो दूर खड़ी = झगड़ा लगाकर तमाशा देखना।

आगे नाथ न पीछे पगहा = अकेला होना, कोई रोकनेवाला नहीं होना।

आधा तीतर, आधी बटेर = मिलावट की बातें करना।

आप डूबा तो जग डूबा = अपनी हानि के सहारे दुनिया की हानि का अंदाज करना।

आप भला तो जग भला = भले के लिए संसार भला है।

आम का आम और गुठली का दाम = सब तरह से लाभ।

आये थे हरि भजन को ओटन लगे कपास = कुछ करने आना और कुछ करने लग जाना।

आसमान से गिरा, खजूर पर अटका = एक मुश्किल के बाद दूसरी का शिकार होना।

इस हाथ से दे और उस हाथ से ले = कर्म का फल शीघ्र मिलना।

ईश्वर की माया, कहीं धूप कहीं छाया = विचित्रता से पूरित संसार की स्थिति।

उलटी गंगा बहना = अन्याय करना।

उलटा चोर कोतवाल को डाँटे = दोषी निर्दोष को दोषी बताता है।

उघरे अन्त न होइ निबाहू = अन्त में पोल खुलने पर परेशानी होती है।

ऊँची दूकान, फीका पकवान = दिखावा अधिक, वास्तविकता कम।

ऊँट के मुँह में जीरे का फोरन = बहुत खानेवाले को थोड़ा खाना देना।

ऊँट चढ़े पर कुत्ता काटे = दुर्भाग्य।

ऊधो का लेना न माधो का देना = किसी से कोई सम्बन्ध नहीं।

एक अनार, सौ बीमार = एक वस्तु के अनेक चाहनेवाले।

एक तो करैला आप तीता दूजे चढ़ा नीम = दुष्ट की दुष्टता में सहारा मिलना।

एक तो चोरी दूसरे सीना जोरी = दोष करके उलटे आँख दिखाना।

एक पंथ दो काज — एक काम करने से दो काम होना।

एकै साधै सब सधै, सब साधै सब जाय — एक ही समय बहुत कामों को हाथ में लेने पर विफलता मिलती है।

एक म्यान में दो तलवारें नहीं रह सकतीं — दो शक्तिशाली व्यक्तियों का साथ नहीं निभता।

ओखली में सिर दिया तो मूसल का क्या डर = जानकर विपत्ति बुलाने से उसका डर नहीं होता।

ओछे की प्रीति, बालू की भीत = नीचों की प्रीति टिकाऊ नहीं होती।

ओस चाटने से प्यास नहीं बुझती = अपर्याप्त मात्रा में कोई वस्तु पाने पर सन्तोष होता।

कभी नाव गाड़ी पर, कभी गाड़ी पर नाव = समय आने पर एक दूसरे की सहायता लेने को विवश होते हैं।

कहाँ राजा भोज, कहाँ भोजवा तेली ? = नाम को समता से गुण की समता नहीं होती।

कहीं की ईंट, कहीं का रोड़ा, भानुमती ने कुनबा जोड़ा—इधर-उधर की सामग्री से कोई चीज तैयार करना।

काजल की कोठरी में धब्बे का डर ?—बुरी जगह बुराई होकर रहती है।

काठ की हाँड़ी दुबारे नहीं चढ़ती—छल-कपट से एक ही बार सफलता मिलती है।

कानी गाय की भिन्न बथान—मूर्ख अपना अलग ही विचार रखता है।

काम जो आये कामरी का ले करे कमाच—छोटी वस्तु ही यदि काम आये तो बड़ी व्यर्थ है।

काला अक्षर भैंस बराबर—अनपढ़ मूर्ख।

का वर्षा जब कृषि सुखाने—अवसर पर काम करना ही बुद्धिमानी है।

क्या काबुल में गधे नहीं होते ?—बुरे लोग अच्छे स्थान में भी पाये जाते हैं।

खग जाने खग ही कर भाषा—साथी सभी बातें जानता है।

खट्टा अंगूर कौन खाय ?—अप्राप्य वस्तु की निन्दा।

खरी मजूरी चोखा काम—खूब दाम और खूब काम।

खिसियानी बिल्ली खंभा नीचे—निष्फल क्रोध करना।

खूँटे के बल बछड़ा कूदे—नौकर को स्वामी का बल होता है।

खेत खाय गदहा, मार खाय जोलहा—कसूर करे कोई, दण्ड मिले किसी को।

खौरही कुतिया, मखमली झूल—तुच्छ वस्तु पर अधिक सजावट।

गये रोजा छुड़ाने, गले पड़ी नमाज—सुख की खोज से दुःख पाना।

गवाह चुस्त मुद्दई सुस्त—जिसका काम हो उसे कोई चिन्ता नहीं।

गाँठ का पूरा मति का हीन—अनाप-शनाप खर्च करनेवाला।

गाँव का जोगी जोगड़ा, आन गाँव का सिद्ध—बड़ों को भी अपनों के बीच आदर नहीं मिलता ।

गुड़ खाय गुलगुले से परहेज—बनावटी परहेज ।

गुरु गुड़ चेला चीनी—गुरु से शिष्य का अधिक प्रतिभाशाली होना ।

गेहूँ के साथ घुन पीसा जाता है—संगति का दोष ।

गौ मारकर जूता दान—कपटपूर्ण दान का व्यवहार ।

ग्वालिन अपने दही को खट्टा नहीं कहती— लोग अपनी चीज की प्रशंसा ही करते हैं ।

घर का भेदिया लंका डाह—फूट का परिणाम बुरा होता है ।

घर की मुर्गी दाल बराबर—अपनी वस्तु की कीमत नहीं आँकना ।

घर में चूहा दण्ड पेले—गरीब होना ।

घर में दीया जलाकर मस्जिद में दिया जलाना—अपनी हालत पहले सुधारना ।

घर पर फूस नहीं नाम धनपत—नाम बड़े दर्शन थोड़े ।

घी गिरा तो खिचड़ी में—गलती करते हुए भी घाटा नहीं होना ।

घी का लड्डू टेढ़ा भला—गुण के आगे रूप नहीं देखा जाता ।

चमड़ी जाय पर दमड़ी न जाय—बड़ी चीज गँवाकर छोटी चीज बचाना ।

होम करते हाथ जले—अच्छा काम करते बुरा फल ।

होनहार बिरवान के होत चीकने पात—होनहार के लक्षण आरम्भ में ही प्रकट होते हैं ।

हाथी के दाँत दिखाने के और खाने के और—कपटी के वचन और कर्म में अन्तर होता है ।

हाथ कंगन को आरसी क्या—प्रत्यक्ष के लिए प्रमाण व्यर्थ है ।

हँसुए के व्याह में खुरपी का गीत—अनमेल काम ।

सारी रामायण हो गयी, सीता किसकी जोरू—ध्यान से नहीं सुनना ।

सीधी उँगली घी नहीं निकलता—सिधाई से कोई काम नहीं बनता ।

साँप मरे पर लाठी न टूटे—बिना हानि के काम निकालना ।

सत्तर चूहे खाके बिल्ली चली हज को—सारा जीवन पाप करके अन्त में भक्ति।

वह गुड़ नहीं कि मक्खी (चींटी) बैठे—बहुत कंजूस होना।

लूट में चरखा नफा—मुफ्त में जो मिले वही अच्छा।

लकीर का फकीर—रूढ़िवादी।

रस्सी जल गयी पर ऐंठन न गयी—बुरी दशा में भी घमण्ड करना।

मेढ़क को भी जुकाम—छोटे आदमी का घमण्ड करना।

मुँह में राम बगल में छूरी—सामने मे कुछ; पीछे में कुछ।

मान न मान, मैं तेरा मेहमान—जबर्दस्ती करना।

मन चंगा तो कठौती में गंगा—सिद्धि के लिए मन की शुद्धि आवश्यक है; आडम्बर नहीं।

मगनी के बैल के दाँत नहीं देखे जाते—मुफ्त की चीज बुरी भी अच्छी होती है।

भैंस के आगे बीन बजावे, वह बैठी पगुराय—मूर्ख के आगे कला-प्रदर्शन व्यर्थ है।

भागते भूत की लँगोटी ही सही—सर्वस्व नष्ट होने को स्थिति में थोड़ा बचाना भी बहुत है।

भरे समुन्दर घोंघा प्यासा—भाग्यहीन को कहीं सुख नहीं।

भइ गति साँप छुछुन्दर केरी—दुविधा में पड़ना।

बैल का बैल गया नौ हाथ का पगहा लेता गया—बड़ा घाटा होना।

बिल्ली के भागे छींका टूटा—संयोग से लाभ होना।

बाँझ क्या जाने प्रसव की पीड़ा—भुक्त भोगी ही पीड़ा को जानता है।

बहती गंगा में हाथ धोना—अवसर से लाभ उठाना।

बन्दर क्या जाने अदरख का स्वाद—मूर्ख गुण का महत्त्व नहीं जानता।

बन्दर के हाथ में नारियल—मूर्ख किसी वस्तु का उचित मूल्य नहीं जानता।

बकरे की माँ कब तक खैर मनायेगी—कमजोरों की रक्षा कठिन है।

पाँचों उँगली बराबर नहीं होती—सब लोग या सब वस्तुएँ समान नहीं होतीं।

पाँच सवारों में नाम लिखाना—अपने को बड़ों की बराबरी में रखना।

पहले भीतर तब देवता पित्तर—भोजन का स्थान सबमें पहले है।

पढ़े फारसी बेचे तेल, देखो यह कुदरत का खेल—भाग्य बलवान् होता है।

पंचमांगी होना—दगाबाज होना।

नौ की लकड़ी नब्बे खर्च—तुच्छ वस्तु पर अत्यधिक खर्च।

नेकी और पूछ-पूछ ?—भलाई बिना पूछे ही की जाती।

नीम हकीम खतरे जान—अयोग्य व्यक्ति से सदा हानि की आशंका रहती है।

नाम बड़े दर्शन थोड़े—नाम के अनुसार गुण नहीं होना।

नाचे न जाने आँगन टेढ़—अपनी गलती दूसरे के सिर मढ़ना।

न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी—कलह की जड़ काट फेंकना।

न बासी बचे न कुत्ता खाये—मितव्ययिता से खर्च करना।

न नौ मन तेल होगा न राधा नाचेगी—असंभव शर्त्त लगाना।

नदी-नाव संयोग—अचानक मिल जाना।

नक्कारखाने में तूती की आवाज—बड़ों के सामने छोटों की आवाज नहीं सुनी जाती।

धोबी बसकर क्या करे दिगम्बरों के गाँव—जहाँ जिसकी जरूरत नहीं है वहाँ वह क्यों रहे ?

धोबी का कुत्ता, न घर का न घाट का—दो जगहों का निवास, गृहहीन बनना होता है।

दोनों हाथ लड्डू—हर तरह से लाभ।

देशी मुर्गी बिलायती बोल—अपनी भाषा न बोलना, बेमेल काम।

देखें, ऊँट किस करवट बैठता है ?—देखें आगे क्या होता है ?

दूर का ढोल सुहावन—अलभ्य चीज अच्छी लगती है।

दूध का जला मठा भी फूँक-फूँक कर पीता है—एक बार धोखा खाकर आदमी सतर्क हो जाता है।

दुविधा में दोनों गये माया मिली न राम—दो काम हाथ में लेने से किसी में भी सफलता नहीं मिलती।

दुधार गाय की दो लात भली—लाभ पहुँचनेवाले की कठोरता भी सह्य होती।

दही में मसूर
दालभात में मूसरचन्द
दालभात में ऊँट का ठेहुन
} व्यर्थ ही किसी काम में दखल देना।

दस की लाठी एक का बोझ—सहयोग से काम आसानी से होता है।

थूक से सत्तू नहीं सनता—कम खर्च से बड़ा काम नहीं होता।

थूक कर चाटना—देकर लेना, कह कर मुकर जाना।

तेली का तेल जले मशालची का सिर दुखे—किसी के खर्च से दूसरे का बुरा मानना।

तुम डाल-डाल हम पात-पात—तुमसे हम अधिक चतुर हैं।

तीन में न तेरह में—झंझट से अलग।

तीन कनौजिया तेरह चूल्हा—मेल का अभाव।

ढाक के तीन पात—सदा एक-सा रहना (निन्दा के अर्थ में)।

बूड़ा वंश कबीर का उपजा पूत कमाल—अच्छे कुल में बुरे का जन्म।

चार दिनों की चाँदनी फिर अँधेरी रात—अल्पकालीन सुख।

चिराग तले अँधेरा—अपनी त्रुटि नहीं मालूम होती।

चींटी पर तोप चलाना—जोश में आकर बेवकूफी दिखाना।

चींटी के पर लगना—अन्त समय निकट आना।

चूहे के चाम से दमामा नहीं मढ़ा जाता-छोटों से बड़ा काम नहीं होता।

चोर की दाढ़ी में तिनका—दोषी स्वयं उद्विग्न रहता है।

चोर-चोर मौसेरा भाई—एक व्यसनवाले परस्पर मित्र होते हैं।

चौबे गये छब्बे होने, दुब्बे होकर आये—लाभ की खोज में हानि।

छछून्दर के सिर पर चमेली का तेल—अयोग्य व्यक्ति का आदर।

छानी पर फूस नहीं ड्योढ़ी पर नाच—बाहरी आडम्बर।

छोटे मियाँ तो छोटे मियाँ, बड़े मियाँ, सुभान अल्लाह—छोटे से अधिक बुराई बड़े में होना।

छोटे मुँह बड़ी बात—बढ़-चढ़कर बातें करना, धृष्टता करना।

जब तक साँस तब तक आस—अन्त तक आशा बनी रहती है।

जब नाचना तब घूँघट क्या ?—काम करना है तो लजाना क्या ?

जल में रहकर मगर से बैर—जिसके अधीन होना उसीसे दुश्मनी करना।

जस दूलह तस बनी बराता—अपनी ही तरह साथियों का होना।

जहाँ गाछ न बिरिछ तहाँ रेड़ परधान—बड़ी वस्तु के अभाव में छोटी का आदर।

जहाँ न जाय रवि वहाँ जाय कवि—कवि की सूझ अलौकिक होती है।

जहाँ मुरगा नहीं बोलता वहाँ क्या सबेरा नहीं होता ?—किसी के बिना काम नहीं रुकता।

जाके पाँव न फटै बिवाई, सो क्या जानै पीर-पराई—भुक्तभोगी ही दूसरे के दुख को समझता है।

जागे सो पावे, सोवे सो खोवे - सचेत रहने से ही लाभ होता है।

जान बची लाखों पाये—जान का मूल्य सर्वाधिक है।

जिन खोजा तिन पाइयाँ गहरे पानी पैठ—परिश्रम से फल मिलता है।

जिसका बन्दर वही नचावे—विषय का अधिकारी ही कुछ कर सकता।

जिसकी लाठी उसकी भैंस—अधिकार बलवान् का ही होता है।

जैसा देश वैसा भेस—स्थान की परिस्थिति के अनुकूल बनना।

जैसे मुर्दे पर सौ मन वैसे हजार मन—गरीबों को चाहे जितना दुखाओ।

जैसी बहे बयार पीठ तब तैसी कीजै—समयानुकूल काम करना चाहिए।

जो गरजता सो बरसता नहीं—बहुत बोलने वाला काम नहीं करता।

झट-पट की घानी, आधा तेल आधा पानी—जल्दी में काम बिगड़ जाता है।

टके की हाँड़ी गयी, कुत्ते की जाति पहचानी गयी—थोड़ी हानि से किसी की ईमानदारी का पता लगना।

डूबते को तिनके का सहारा—संकट में थोड़ी भी सहायता बहुत होती है।

अभ्यास

निम्नलिखित लोकोक्तियों का प्रयोग करें—

(१) जिसका बन्दर वही नचावे। (२) जहाँ गाछ न बिरिछ तहाँ रेड़ परधान। (३) चार दिनों की चाँदनी फिर अंधेरी रात। (४) दस की लाठी एक का बोझ। (५) मेढ़की को भी जुकाम।

तृतीय विभाग

वाक्य-विन्यास

वाक्य-रचना

वाक्य—शब्दों का सार्थक समूह वाक्य कहलाता है अर्थात् जिससे कहने वाले का पूर्ण अभिप्राय सुनने वाले पर प्रकट हो। जैसे—राम की गाय घास खाती है। शुद्ध वाक्य के लिए तीन बातें आवश्यक हैं—आकांक्षा, योग्यता और आसत्ति !

आकांक्षा—वाक्य में एक पद के पश्चात् दूसरे को सुनने की इच्छा का उत्पन्न होना "आकांक्षा" है। "राम पुस्तक" से अर्थ पूरा नहीं होता, 'पढ़ता है"—सुनने की आकांक्षा बनी रहती है। दूसरे शब्दों में उद्देश्य और विधेय (कर्त्ता और क्रिया) दोनों का वाक्य में होना। जैसे—"राम पुस्तक पढ़ता है" यह वाक्य है क्योंकि इनमें उद्देश्य (राम) और विधेय (पढ़ता है) दोनों हैं। यदि हम केवल "राम पुस्तक" कहकर छोड़ दें तो वह वाक्य न होगा क्योंकि वहाँ विधेय (क्रिया) का अभाव होगा।

योग्यता—वाक्य में जिन शब्दों का प्रयोग हुआ है, उन शब्दों में उस अर्थ को बतलाने की योग्यता होनी चाहिए अर्थात् केवल उद्देश्य और विधेय को रखने ही से वाक्य नहीं होता, किन्तु उनमें उस अर्थ को प्रकाशित करने की शक्ति भी होनी चाहिए। जैसे—"मोहन पानी से स्नान करता है।" यह वाक्य तो ठीक है किन्तु यदि हम कहें कि "मोहन बालू से स्नान करता है।" तो यह वाक्य योग्यता रहित होगा। क्योंकि बालू में स्नान की योग्यता नहीं है।

आसत्ति—इसका अर्थ होता है "निकट होना" अर्थात् उद्देश्य और विधेय दोनों यदि साथ हों तो वाक्य सार्थक होगा, किन्तु यदि उद्देश्य को एक जगह और विधेय को दो पन्नों के बाद लिखें तो दोनों में निकटता न रह जायेगी और वह शब्द समूह वाक्य न कहला सकेगा।

अभ्यास

(१) वाक्य किसे कहते हैं ? उदाहरण सहित लिखें।

(२) आकांक्षा, योग्यता और आसत्ति से आप क्या समझते हैं ?

वाक्यांश और वाक्य खण्ड

वाक्यांश—वाक्य का प्रत्येक अंश वाक्यांश कहलाता है; जैसे—'गंगा नदी के किनारे', 'इतनी बातें होने के बाद' इत्यादि।

वाक्य-खण्ड—ऐसा पद समूह जिससे पूर्ण अभिप्राय नहीं; आंशिक अभिप्राय प्रकट हो, वाक्य-खण्ड कहलाता है। प्रकारान्तर से यों कहा जा सकता है कि खण्ड-वाक्य से पूर्ण तात्पर्य समझ में नहीं आता और एक वाक्य दूसरे खण्ड की अपेक्षा रखता है; जैसे—वह ज्यों ही बाजार पहुँचा, तुम जब सोकर उठे।

वाक्य-खण्ड के दो भेद हैं—(क) प्रधान खण्ड-वाक्य या मुख्य खण्ड-वाक्य और (ख) अप्रधान खण्ड-वाक्य या आश्रित खण्ड-वाक्य। जिस खण्ड-वाक्य से भाव दूसरे खण्ड-वाक्य से अपेक्षा रखता है, उसे अप्रधान या अधीन या आश्रित वाक्य कहते हैं; जैसे—'वह ज्योंही बाजार पहुँचा'—इतना कहने से पूर्ण अभिप्राय नहीं प्रकट होता। पूर्ण अभिप्राय प्रकट करने के लिए इस खण्ड में 'त्योंही बड़े जोर का तूफान आया।' या इसी प्रकार का कोई और खण्ड-वाक्य जोड़ना होगा। इस सम्पूर्ण वाक्य में प्रथम खण्ड-वाक्य का भाव दूसरे खण्ड-वाक्य से अपेक्षा रखता है। इसलिए पहला खण्ड अप्रधान या अधीन या आश्रित कहलाता है और दूसरा खण्ड प्रधान।

गर्भित वाक्य—कभी-कभी किसी वाक्य के अन्तर्गत जो छोटा वाक्य प्रयुक्त होता है, गर्भित वाक्य कहलाता है; जैसे—उनकी दर्दीली आवाज—आह ! कैसी करुण थी ! सुनते ही मेरी आँखों से आँसू आ गये। इस वाक्य में 'आह ! कैसी करुण थी।' एक गर्भित वाक्य है।

अभ्यास

(१) वाक्यांश किसे कहते हैं ? उदाहरण सहित लिखें।
(२) वाक्य-खण्ड किसे कहते हैं ? उदाहरण सहित लिखें।
(३) खण्ड-वाक्य के कितने भेद हैं ? सोदाहरण लिखें।

वाक्यांश

प्रायः प्रत्येक वाक्य के दो अंग होते हैं—उद्देश्य और विधेय। वाक्य में जिसके बारे में कुछ कहा जाय, उसे उद्देश्य और उद्देश्य के

बारे में जो कुछ कहा जाय उसे विधेय कहते हैं; जैसे—राम आम खाता है। इस वाक्य में 'राम' के बारे में कुछ कहा गया है, इसलिए 'राम' उद्देश्य और उद्देश्य 'राम' के बारे में यह कहा गया है कि 'आम खाता है', इसलिए 'आम खाता है' विधेय है।

किसी वाक्य में उद्देश्य और विधेय के सिवा और जितने पद होते हैं, उनमें से कुछ उद्देश्य के और कुछ विधेय के सहकारी होते हैं। उद्देश्य के सहकारी पद मुख्य उद्देश्य के अन्तर्गत माने जाते हैं और विधेय के सहकारी पद मुख्य विधेय के अन्तर्गत माने जाते हैं।

उद्देश्य के भेद—साधारणतः उद्देश्य के रूप में निम्नलिखित शब्द-भेद प्रयुक्त होते हैं—

(१) संज्ञा—'उमा' पढ़ती है।

(२) सर्वनाम - 'वह' आम खाता है।

(३) विशेषण —(जब संज्ञा के रूप में प्रयुक्त होता है) 'धनी' दान करता है।

(४) क्रियार्थक संज्ञा—'टहलना' एक अच्छा व्यायाम है।

(५) वाक्यांश (संज्ञा के रूप में)—'भाग्य के भरोसे बैठना' वीरों का काम नहीं।

उद्देश्य का विस्तार—उद्देश्य के स्थान, रूप और गुण की प्रकृति आदि को स्पष्ट रूप से प्रकट करने के लिए वाक्य में जो पद उद्देश्य के सहकारी पद के रूप में प्रयुक्त होते हैं, उन्हें उद्देश्य का विस्तार या उद्देश्य का परिवर्धित पद कहते हैं। उद्देश्य के विस्तार के रूप में प्रायः निम्नलिखित शब्द-भेद प्रयुक्त होते हैं—

(१) विशेषण—(क) 'चंचल' बालक दौड़ता है।
(ख) 'सुरभि' पवन बहता है।
(ग) 'शीतल, मन्द और सुगन्धित' पवन बहता है।

यहाँ 'चंचल', 'सुरभि' और 'शीतल, मन्द और सुगन्धित' विशेषणों के द्वारा उद्देश्यों का विस्तार किया गया है।

(२) सम्बन्धकारक—(क) 'दशरथ के पुत्र' राम वन गये।
(ख) 'भेड़िये का' बच्चा दौड़ता है।

यहाँ 'दशरथ के पुत्र' और 'भेड़िये का' सम्बन्ध पदों से उद्देश्यों का विस्तार किया गया है।

(३) विशेषण के रूप में प्रयुक्त संज्ञा—'सम्राट्' पृथ्वीराज ने युद्ध में गोरी के दाँत खट्टे किये। 'सम्राट्' संज्ञा है पर यहाँ विशेषण के रूप में प्रयुक्त हुआ है।

(४) वाक्यांश—'परिवार के साथ' अनिल बाबू गया से पटना गये। 'परिवार के साथ' वाक्यांश है जो यहाँ उद्देश्य का विस्तार है।

(५) क्रियाद्योतक—(क) 'नहाया' मुख नहीं छिपता।
(ख) 'चलती' गाड़ी गिर गयी।
(ग) 'दौड़ता हुआ' बालक गिर गया।

यहाँ 'नहाया', 'चलती' और 'दौड़ता हुआ' क्रियाद्योतक पदों के द्वारा उद्देश्य का विस्तार किया गया है।

विधेय के प्रधानतः दो भेद हैं—(क) सरल और (ख) जटिल। जहाँ एक ही क्रिया-पद से पूर्ण अर्थ प्रकट होता है वहाँ सरल विधेय होता है; जैसे—शिवशंकर आम खाता है। यहाँ एक ही क्रियापद—'खाता है' से वाक्य का पूर्ण अर्थ प्रकाशित हो जाता है, इसलिए 'खाता है' सरल विधेय है।

जब एक ही क्रिया-पद से पूर्ण अर्थ प्रकट नहीं होता तब उसके साथ पूर्ण अर्थ प्रकट करनेवाला कोई पद होता है, जिसे जटिल विधेय कहते हैं; जैसे—शिवप्रसाद साहु गया के 'डॉक्टर' हैं। यहाँ सिर्फ 'है' क्रिया से वाक्य का पूर्ण अर्थ प्रकट नहीं होता और उसे पूर्णता प्रकट करने के लिए 'है' के पूर्व उसका सहकारी पद 'डाक्टर' प्रयुक्त हुआ है। इस वाक्य में केवल 'हैं' विधेय नहीं है वरन् 'डाक्टर हैं' विधेय है और इस विधेय को जटिल कहते हैं।

जटिल विधेय की क्रिया के पूर्व अर्थ प्रकट करनेवाले सहकारी पद के रूप में कई प्रकार के शब्द प्रयुक्त होते हैं—

(१) संज्ञा के रूप में—पण्डित जवाहरलाल नेहरू भारत के 'हृदय-सम्राट्' हैं।

(२) विशेषण के रूप में—डाक्टर राधाकृष्णन् दर्शन-शास्त्र के उद्भट 'विद्वान' हैं।

(३) क्रियाविशेषण के रूप में—अमर 'वहाँ' है।

(४) सम्बन्ध कारक के रूप में— (क) यह घोड़ा 'राम का' हुआ।
(ख) यह पुस्तक मेरी' हुई।

वाक्य में जब विधेय सकर्मक क्रिया के रूप में होता है, तब उसके कर्म को विधेयवाचक कहते हैं। यह विधेयवाचक विधेय का ही अंश माना जाता है, जैसे—करुणेश पुस्तक पढ़ता है। यहाँ 'पुस्तक पढ़ता है' विधेय है। कर्म के रूप में निम्नलिखित शब्द-भेद प्रयुक्त होते हैं—

(१) संज्ञा — अमर 'पुस्तक' पढ़ता है।
(२) सर्वनाम — कमला 'उसे' पीटती है।
(३) विशेषण—वह 'मूर्खों' को नहीं पूजता।
(४) क्रियार्थक संज्ञा—वह 'पढ़ना' सीखता है।
(५) वाक्यांश—वह 'देर से उठना' सीख गया है।

कर्म का विस्तार

जिस प्रकार उद्देश्य का विस्तार होता है, उसी प्रकार कर्म का विस्तार होता है और निम्नलिखित शब्द-भेद कर्म के विस्तार के रूप में प्रयुक्त हो सकते हैं—

(१) विशेषण—अमर 'साहित्यिक' पुस्तकें पढ़ता है।
(२) सम्बन्ध-पद—गोविन्द 'हाजीपुर का' आम खाता है।
(३) संज्ञा—महाराणा प्रताप ने 'सेनापति' मानसिंह को हराया।
(४) वाक्यांश—मैंने 'चिन्तन में लीन' साधु को देखा।
(५) क्रियाद्योतक—उसने 'उड़ती हुई' चिड़िया पहचानी।

विधेय का विस्तार

जो पद विधेय की विशेषता प्रकट करता है, वह विधेय का विस्तार कहलाता है। विस्तार के रूप में निम्नलिखित शब्द-भेद प्रयुक्त हो सकते हैं—

(१) क्रिया विशेषण—रमेश 'तेजी से' दौड़ता है।
(२) वाक्यांश—वह 'आम खाने के बाद ही' सो गया।
(३) पूर्वकालिक क्रिया—वह 'हँसकर' चला गया।
(४) क्रियाद्योतक—बैलगाड़ी 'चर्र-मर्र चू' चरर-मरर करती हुई जाती है।

(५) कारक-पद (क) करण--राम ने रावण को 'तीर से' मारा।

(ख) अपादान—आम 'पेड़ से' गिरा था।

(ग) अधिकरण—उसने गुप्त रूप से 'दुश्मन पर' आक्रमण किया।

अभ्यास

(१) निम्नलिखित वाक्यों में उद्देश्य का विस्तार कीजिए—

गाय चरती है। मयूर नाचता है। कृष्ण गाता है। कोयल कूकती है।

(२) निम्नलिखित वाक्यों में विधेय का विस्तार कीजिए—

मंगल सिंह चाय पीते हैं। उस्मान साहब घर जाते हैं। अनीस साहब अभी तो दूध ही पीते हैं।



स्वरूप के अनुसार वाक्य-भेद

स्वरूप के अनुसार वाक्य के तीन भेद हैं—(१) सरल, (२) मिश्र या जटिल और (३) संयुक्त या यौगिक।

(१) सरल वाक्य में साधारणतः एक कर्त्ता या उद्देश्य होता है और एक समापिका क्रिया या विधेय होता है; जैसे—अमर सोता है। इसमें 'अमर' कर्त्ता या उद्देश्य है, और 'सोता है' समापिका क्रिया या विधेय है। इसलिए यह सरल वाक्य है।।

(२) मिश्र या जटिल वाक्य में प्रधान रूप से एक उद्देश्य होता है और एक विधेय होता है अथवा एक सरल वाक्य होता है तथा उसके आश्रित एक दूसरा अधीन या अंग-वाक्य होता है; जैसे— राम कहता है कि गेन्द खेलने के लिए कोई उपयुक्त स्थान नहीं है। इस वाक्य में 'राम कहता है' एक सरल वाक्य है, जिसके अधीन 'गेन्द खेलने के लिए कोई उपयुक्त स्थान नहीं है' एक अंग वाक्य है।

मिश्र या जटिल वाक्य में जो अंश प्रधान या मुख्य होता है, उसे प्रधान और जो अंश अप्रधान या गौण होता है, उसे आनुषंगिक अंग कहते हैं; जैसे—श्याम जानता है कि सूर्य की किरणों से चन्द्रमा चमकता है। इस वाक्य में 'श्याम जानता है' प्रधान अंग है और 'सूर्य की किरणों से चन्द्रमा चमकता है' आनुषंगिक अंग है।

आनुषंगिक अंग—मिश्र या जटिल वाक्य में आनुषंगिक अंग के तीन भेद हैं—(क) विशेषण आनुषंगिक वाक्य (ख) संज्ञा आनुषंगिक वाक्य और (ग) क्रिया विशेषण आनुषंगिक वाक्य ।

(क) विशेषण आनुषंगिक वाक्य—जो आनुषंगिक वाक्य प्रधान वाक्य के विशेषण के रूप में प्रयुक्त होता है, वह विशेषण आनुषंगिक वाक्य कहलाता है; जैसे—'जो मनुष्य विवेक-शक्ति से कार्य करता है' वह सर्वदा बाधाओं पर विजय पाता है । यहाँ 'जो मनुष्य विवेक शक्ति से कार्य करता है' आनुषंगिक अंग है और 'वह सर्वदा बाधाओं पर विजय पाता है' प्रधान वाक्य के विशेषण के रूप में प्रयुक्त हुआ है ।

यह विशेषण वाक्य कभी कर्त्ता और कभी कर्म के रूप में प्रयुक्त होता है । उपर्युक्त विशेषण वाक्य कर्त्ता के रूप में प्रयुक्त हुआ है । कर्म के रूप में प्रयुक्त विशेषण वाक्य का यह उदाहरण है—दिनेश अपने मयूरों को, जो बहुत चंचल हैं, अनेक प्रकार का भोजन खिलाता है ।

विशेषण आनुषंगिक वाक्य अपने प्रधान वाक्य से सम्बन्धवाचक सर्वनाम के द्वारा (जैसे, जो-सो) संयुक्त होते हैं । कहीं-कहीं 'सम्बन्धवाचक' सर्वनाम का लोप भी होता है । आजकल 'सो' की जगह 'वह' के प्रयोग की परिपाटी हो गई है ।

(ख) संज्ञा आनुषंगिक वाक्य- जो आनुषंगिक वाक्य प्रधान वाक्य की किसी संज्ञा के बदले प्रयुक्त होता है, वह संज्ञा वाक्य कहलाता है; जैसे—मोहन ने प्रमाणित कर दिया है कि मैं निरपराध हूँ । इस वाक्य में 'मैं निरपराध हूँ' मुख्य वाक्य की किसी संज्ञा के रूप में प्रयुक्त हुआ है क्योंकि यदि सम्पूर्ण वाक्य को सरल वाक्य में प्रमाणित किया जाय तो यों रूप होगा—मोहन ने अपनी निरपराधता प्रमाणित कर दी । यहाँ आनुषंगिक वाक्य 'मैं निरपराध हूँ' का परिवर्तित रूप 'अपनी निरपराधता' संज्ञा है । इसलिए 'मैं निरपराध हूँ' संज्ञा वाक्य है ।

संज्ञा के रूप में प्रयुक्त आनुषंगिक वाक्य कभी कर्त्ता अथवा उद्देश्य, कभी कर्म और कभी समानाधिकरण संज्ञा के बदले आते हैं, जैसे—

(१) कर्त्ता के रूप में संज्ञा वाक्य—मैं जानता हूँ कि 'यह कल क्या-क्या भोजन करेगा' अर्थात् मैं उसके 'कल का भोजन' जानता हूँ ।

(२) कर्म के रूप में संज्ञा वाक्य—मोहन ने प्रमाणित कर दिया कि 'मैं निरपराध हूँ।' अर्थात् मोहन ने 'अपनी निरपराधता' प्रमाणित कर दी।

(३) समानाधिकरण संज्ञा के रूप में संज्ञा वाक्य—'वैज्ञानिकों का यह कथन है कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है' सभी ने यह मान लिया है। अर्थात् सूर्य के चारों ओर पृथ्वी घूमने का वैज्ञानिकों का कथन सभी ने मान लिया है।

संज्ञा-वाक्य संयोजक 'कि' के द्वारा अपने प्रधान वाक्य के साथ संयुक्त होते हैं परन्तु कभी-कभी 'कि' का लोप भी होता है; जैसे—सभी कहते हैं, (कि) पृथ्वी गोल है।

(४) क्रिया आनुषंगिक वाक्य—जो आनुषंगिक वाक्य प्रधान वाक्य की क्रिया की विशेषता बतलाता है, वह क्रियाविशेषण आनुषंगिक वाक्य कहलाता है; जैसे—यदि इस वर्ष वर्षा होगी तो 'अकाल की संभावना दूर होगी।' अर्थात् 'वर्षा होने पर' अकाल की संभावना दूर होगी।

क्रियाविशेषण वाक्य अपने प्रधान वाक्य से 'यदि-तो', 'जिस प्रकार' 'उसी-प्रकार' 'जब-तब' आदि शब्दों के द्वारा संयुक्त होते हैं। कभी-कभी 'तो' 'उसी प्रकार', 'तब' आदि शब्द लुप्त भी हो सकते हैं।

(३) संयुक्त या यौगिक वाक्य में दो या अधिक सरल या जटिल वाक्य एक दूसरे की अपेक्षा नहीं रखते वरन् मिले होते हैं; जैसे—वह वृद्ध हो गया है पर उसके बाल श्वेत नहीं हुए हैं। रमेश दिल्ली गया और विन्दु पटना गया।

यौगिक या संयुक्त वाक्य दूसरे वाक्य के अधीन नहीं होता वरन दोनों स्वतन्त्र होते हैं। इसलिए वे समानाधिकरण वाक्य कहलाते हैं। 'वे', 'और', 'तथा', 'एवं', 'या', 'अथवा', 'किन्तु', 'परन्तु' आदि संयोजक या विभाजक अव्ययों के द्वारा एक दूसरे से संयुक्त होते हैं।

उद्देश्य के एक से अधिक विधेय और विधेय के एक से अधिक उद्देश्य होने पर भी यौगिक या संयुक्त वाक्य होता है; जैसे—

(क) विन्दु गीत गाता है और आम खाता है। यहाँ एक उद्देश्य 'विन्दु' के दो विधेय 'गीत गाता है' और 'आम खाता है' हैं।

(ख) विन्दु और रमेश मयूरों को खिलाते हैं। यहाँ दो उद्देश्य 'विन्दु' और 'रमेश' का विधेय एक ही 'मयूरों को खिलाते हैं' है।

किन्तु वाक्य में संयोजक या विभाजक अव्ययों के होने पर भी तब तक वह संयुक्त या यौगिक वाक्य नहीं होता, जब तक उसको अलग-अलग करने पर स्पष्ट अर्थ प्रकाशित नहीं होता; जैसे—विन्दु और रमेश दोनों मित्र हैं। चूँकि इस वाक्य को अलग-अलग करने पर स्पष्ट अर्थ प्रकाशित नहीं होता, इसलिए यह संयुक्त या यौगिक वाक्य नहीं है।

अभ्यास

(१) आकार की दृष्टि से वाक्य कितने प्रकार के होते हैं? उदाहरण सहित समझाइये।

(२) अधीन वाक्य और गर्भित वाक्य के दो-दो उदाहरण दीजिये।

(३) निम्नलिखित वाक्यों में कौन किस प्रकार के वाक्य हैं? सकारण समझाइये।

(क) अफगानिस्तान जो एक छोटा-सा देश है, भारतवर्ष के उत्तर पश्चिम की ओर अवस्थित है। वह है ब्राह्मण पर आचरण शूद्र-सा है। सौन्दर्य ही ईश्वर है। जिसने देखा वही आकृष्ट हुआ।

क्रिया के अनुसार वाक्य-भेद

क्रिया के अनुसार वाक्य के तीन भेद हैं (१) कर्त्तृवाच्य, (२) कर्म-वाच्य और (३) भाववाच्य।

(१) जिस वाक्य में कर्त्ता अपनी साधारण अवस्था में होता है, कर्म अपनी अवस्था में रहता है और क्रिया स्वतंत्र नहीं होता है, उसे कर्त्तृवाच्य कहते हैं; जसे—रवीन्द्र लीची खाता है। कर्त्तृवाच्य के सभी वाक्यों में कर्म हो ही, यह आवश्यक नहीं है।

(२) जिस वाक्य में कर्त्ता करण कारक के रूप में और कर्म कर्त्ता के रूप में प्रयुक्त होता है तथा क्रिया कर्म के अनुसार होती है, उसे कर्मवाच्य कहते हैं; जैसे—राम से लीची खायी जाती है। कर्मवाच्य के वाक्यों में कर्म का लोप नहीं होता।

(३) जिस वाक्य में अकर्मक क्रिया से युक्त कर्तृवाच्य के कर्त्ता का रूप करण कारक के समान होता है, उसे भाववाच्य कहते हैं; जैसे—मुझसे चला नहीं जाता

(क) जिस वाक्य में कर्म का प्रयोग ही कर्त्ता की भाँति हो उसमें कर्तृकर्म वाच्य होता है; जैसे—क़लम नहीं चलती। पानी बरसता है। तलवारें बजने लगीं।

(ख) वाच्य के बारे में विशेष ज्ञातव्य बातें—वाच्य-परिवर्त्तनवाले परिच्छेद सविस्तार दी गयी है।

वाक्य के साधारण भेद

वाक्य के साधारणतः आठ भेद हैं—

(१) विधिवाचक—जिस वाक्य से किसी बात का विधान होता है, उसे विधिवाचक कहते हैं; जैसे—चन्द्रमा स्वच्छ है। सूर्य चमकता है।

(२) निषेधवाचक—जिस वाक्य से किसी बात का न होना पाया जाय, उसे निषेधवाचक कहते हैं; जैसे—चन्द्रमा स्वच्छ नहीं है। सूर्य नहीं चमकता।

(३) आज्ञावाचक—जिस वाक्य से आदेश, उपदेश, निवेदन आदि का बोध हो, उसे आज्ञावाचक कहते हैं; जैसे—सत्य बोलो।

(४) प्रश्नवाचक—जिस वाक्य से किसी प्रश्न का बोध हो, उसे प्रश्नवाचक कहते हैं; जैसे—तुम कहाँ गये थे ?

(५) विस्मयादिबोधक—जिस वाक्य से विस्मय, कुतूहल, घृणा आदि भावों का बोध हो, उसे विस्मयादिबोधक कहते हैं; जैसे—अहा ! कितना सुन्दर फूल है ! ओह ! इतनी कष्टदायिनी मृत्यु !

(६) इच्छाबोधक—जिस वाक्य से इच्छा का बोध हो, उसे इच्छाबोधक कहते हैं; जैसे—आप दीर्घायु हों ! ईश्वर आपका कल्याण करे !

(७) संदेहसूचक—जिस वाक्य से सन्देह की सूचना मिले या संभावना हो, उसे सन्देह-सूचक कहते हैं; जैसे—मुझे भय है कि रास्ते में कहीं बाघ न मिल जाय।

(८) संकेतार्थक—जिस वाक्य में कोई संकेत हो या कोई शर्त्त पायी जाय, उसे संकेतार्थक कहते हैं; जैसे—यदि बादल घिरेगा तो मयूर नाचेगा।

एक ही वाक्य के आठ रूप

(१) विधिवाचक—संयमव्रत से शरीर स्वस्थ रहता है।

(२) निषेधवाचक—जो संयम-व्रत का पालन नहीं करता, उसका शरीर स्वस्थ नहीं होता।

(३) आज्ञावाचक—संयमव्रती बनो, शरीर स्वस्थ रहेगा।

(४) प्रश्नवाचक—क्या संयमव्रत से शरीर स्वस्थ रहता है?

(५) विस्मयादिबोधक—क्या कहा! संयम-व्रत से शरीर स्वस्थ रहता है?

(६) इच्छाबोधक—मैं संयम-व्रती बनूँगा, शरीर स्वस्थ रहेगा।

(७) सन्देहसूचक—हो सकता है कि संयम-व्रत से शरीर स्वस्थ हो।

(८) संकेतार्थक—यदि संयम-व्रत का पालन करोगे, तो शरीर स्वस्थ रहेगा।

अभ्यास

(१) कर्मवाच्य और भाववाच्य के भेद बतलायें और दोनों का एक-एक उदाहरण दें। (२) निम्नलिखित वाक्य को बिना अर्थ बदले वाक्य के आठों साधारण भेदों में लिखें—परिश्रम से ज्ञान होता है।



पद-निर्देश

पद-निर्देश—व्याकरण-सम्बन्धी विशेषताओं का उल्लेख करते हुए वाक्य के विभिन्न पदों का जब पारस्परिक सम्बन्ध निर्दिष्ट किया जाय तब उसे पद-निर्देश कहते हैं। पद-निर्देश के कई नाम हैं; जैसे—पदान्वय, पद-व्याख्या, पद-विवरण, पद निर्णय, पद, विन्यास आदि।

(१) संज्ञापद्—संज्ञा के पद-निर्देश में संज्ञा के भेद, लिंग; वचन, पुरुष, कारक और जिस पद के साथ उसका सम्बन्ध होता है, उसे दरसाया जाता है। यदि संज्ञा क्रियार्थक हो तो उसके लिंग, वचन और पुरुष का निर्देश नहीं होता।

(२) सर्वनामपद्—सर्वनाम के पद-निर्देश में सर्वनाम के भेद, लिंग, वचन पुरुष, कारक और अन्य पद के साथ उसके सम्बन्ध का उल्लेख होता है। सर्वनाम जिस संज्ञा के बदले प्रयुक्त होता है, उसके लिंग, वचन आदि उसी संज्ञा के लिंग, वचन आदि के अनुसार होते हैं; अन्तर केवल पुरुष और कारक में होता है।

(३) विशेषणपद्—विशेषण के पद-निर्देश में विशेषण के भेद और जिस विशेषण की वह विशेषता बतलाता है, उस विशेष्य को दरसाया जाता है।

(४) क्रियापद्—क्रिया के पद-निर्देश में पूर्वकालिक या समापिका, सकर्मक, द्विकर्मक या अकर्मक, वाच्य, काल और उसके भेद, लिंग, वचन, पुरुष तथा किस कर्त्ता की क्रिया है, उस कर्त्ता को और यदि क्रिया सकर्मक हो तो कर्म को दरसाया जाता है।

(५) अव्यय—अव्यय के पद-निर्देश में अव्यय-भेद और यदि किसी पद के साथ उसका सम्बन्ध हो तो उस पद को दरसाया जाता है।

टिप्पणी—(१) जब विशेषण पद का प्रयोग स्वतन्त्र रूप से संज्ञा की भाँति होता है, तब उसके लिंग, वचन, पुरुष, कारक आदि संज्ञा के समान होते हैं; जैसे—'बुद्धिमानों' ने ऐसा कहा है।

(२) कुछ गुणवाचक संज्ञाएँ कभी विशेष्य और कभी विशेषण के रूप में प्रयुक्त होती हैं; जैसे—

(क) संज्ञा का प्रयोग विशेष्य के रूप में—यह चमकीला 'स्वर्ण' है।

(ख) संज्ञा का प्रयोग विशेषण के रूप में—यह 'स्वर्ण'-युग है।

(३) कभी-कभी जातिवाचक संज्ञा का प्रयोग भी विशेषण के रूप में होता है; जैसे—यह 'ब्राह्मण' कुल में उत्पन्न होकर भी मूर्ख रह गया।

(४) कभी-कभी व्यक्तिवाचक संज्ञा भी जातिवाचक संज्ञा के रूप में प्रयुक्त होती है; जैसे—इस वर्ग में चार 'मोहन' हैं।

(५) सर्वनाम का प्रयोग भी कभी-कभी विशेषण के रूप में होता है, जैसे–'यह' फूल अचानक खिल गया है।

(६) पद-निर्देश करते समय गद्य के प्रत्येक पद्य का निर्देश अलग-अलग किया जाता है।

(७) सम्बोधन-पद और विधिक्रिया में मध्यम पुरुष होता है।

उदाहरण

दाऊ ने यमुना के किनारे पर खड़ा होकर देखा कि एक नाव यमुना में बह रही है। उस पर एक प्रसन्न शिशु बैठा है, जिसके सिर पर स्वर्ण का मुकुट है।

(१) दाउ ने—संज्ञा, व्यक्तिवाचक, पुल्लिग, एकवचन, अन्य पुरुष और कर्त्ता कारक, जिसकी क्रिया है—'देखा'।

(२) यमुना के—संज्ञा, व्यक्तिवाचक, स्त्रीलिंग, एकवचन, अन्य पुरुष सम्बन्ध कारक और इसका सम्बन्धी है—'किनारे पर'।

(३) किनारे पर—संज्ञा, जातिवाचक, पुल्लिग, एकवचन, अन्य पुरुष और अधिकरण कारक।

(४) खड़ा होकर—क्रिया पूर्वकालिक।

(५) देखा—क्रिया, सकर्मक, कर्त्तृवाच्य, समान्यभूत, पुल्लिग, एकवचन, अन्य पुरुष और इसका कर्त्ता है— दाऊ ने' तथा कर्म 'एक नाव यमुना में बह रही है', आनुषंगिक वाक्य है।

(६) कि—संयोयक अव्यय है जो 'दाऊ ने यमुना के किनारे पर खड़ा होकर देखा' और 'एक नाव यमुना में बह रही है' को जोड़ता है।

(७) एक—संख्यावाचक विशेषण जिसका विशेष्य है—'नाव'।

(८) नाव—संज्ञा, जातिवाचक, स्त्रीलिंग, एकवचन, अन्यपुरुष और इसकी क्रिया है 'बह रही है।'

(९) यमुना में—संज्ञा, व्यक्तिवाचक, स्त्रीलिंग, एकवचन, अन्यपुरुष, अधिकरण कारक।

(१०) बह रही है—क्रिया, अकर्मक, कर्त्तृवाच्य, तात्कालिक वर्त्तमान, स्त्रीलिंग, एकवचन, अन्यपुरुष, और इसका कर्त्ता है—'नाव'

(११) उसपर—सर्वनाम, निश्चयवाचक, स्त्रीलिंग, एकवचन, अन्य पुरुष और अधिकरण कारक।

(१२) एक—संख्यावाचक विशेषण जिसका विशेष्य है—'शिशु'।

(१३) प्रसन्न—गुणवाचक विशेषण जिसका विशेष्य है—'शिशु'।

(१४) शिशु—संज्ञा, जातिवाचक, पुल्लिग, एकवचन, अन्य पुरुष, कर्त्ता-कारक और क्रिया है—'बैठा है।'

(१५) बैठा है—क्रिया, अकर्मक, कर्त्तृवाच्य, आसन्नभूत, पुल्लिग, एक-वचन, पुरुष और इसका कर्त्ता है—'शिशु'।

(१६) जिसके—सर्वनाम, सम्बन्धवाचक, पुल्लिग, एकवचन, अन्य पुरुष, सम्बन्ध कारक और इसका सम्बन्धी है—'सिर पर'।

(१७) सिर पर—संज्ञा जातिवाचक, पुल्लिग, एकवचन, अन्यपुरुष और अधिकरण कारक।

(१८) स्वर्ण का—संज्ञा, द्रव्यवाचक, पुल्लिग, एकवचन, अन्यपुरुष, सम्बन्ध कारक और इसका सम्बन्धी है—'मुकुट'।

(१९) मुकुट—संज्ञा, जातिवाचक, पुल्लिग, एकवचन, अन्यवचन, कर्त्ता-कारक और इसकी क्रिया है—'है'।

(२०) है—क्रिया, अकर्मक, अपूर्ण अर्थ प्रकाशक जिसका विधेयक पूरक 'मुकुट' है, सामान्य वर्त्तमान, पुल्लिग एकवचन, अन्यपुरुष और इसका कर्त्ता भी 'मुकुट' ही है।

अभ्यास

(१) निम्नलिखित वाक्यों का पद-निर्देश कीजिए—

(क) कविवर 'प्रभात' हिन्दी के होमर माने जाते हैं।

(ख) श्री बच्चन ने उमर खैयाम की रुबाइयों का हिन्दी में सफल रूपान्तर किया है।

(ग) वे भारत सरकार के परराष्ट्र मंत्रालय में किसी उच्च पद को सुशोभित कर रहे हैं।

(घ) जिन्दगी एक युद्ध है।

वाक्य-विश्लेषण

वाक्य-विश्लेषण—वाक्य के अंशों को अलग-अलग कर उनके पारस्परिक सम्बन्ध को प्रदर्शित करने की रीति को वाक्य-विश्लेषण या वाक्य-विग्रह कहते हैं।

सरल वाक्य का विश्लेषण—सरल वाक्य का विश्लेषण निम्नलिखित रीति से किया जाता है।

(१) सर्वप्रथम वाक्य के उस अंश को दर्शाया जाता है, जिसे उद्देश्य कहते हैं।

(२) इसके बाद उन अंशों को दर्शाया जाता है, जिनसे उद्देश्य का विस्तार होता है।

(३) फिर विधेय को दर्शाया जाता है।

(४) यदि विधेय-पद से पूर्ण अर्थ प्रकट नहीं होता हो, तो उसके पूरक को या उस अंश को जिससे विधेय का अर्थ प्रकट होता हो दर्शाया जाता है।

(५) यदि विधेय सकर्मक हो तो उसके कर्म को दर्शाया जाता है।

(६) जिन अंशों के द्वारा कर्म का विस्तार होता हो, उन्हें कर्म के बाद दर्शाया जाता है।

(७) अन्त में उन अंशों को दर्शाया जाता है जो विधेय के विस्तार के रूप में प्रयुक्त हुए हों।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि सरल वाक्य-विश्लेषण का क्रम यों होता है—(१) उद्देश्य, (२) उद्देश्य का विस्तार, (३) विधेय, (४) विधेय-पूरक, (५) कर्म, (६) कर्म का विस्तार और (७) विधेय का विस्तार।

उदाहरण

(१) पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने भिन्न-भिन्न राष्ट्रों में राजदूत भेजे हैं।

(२) उन्मत्त श्वान ने सोहन के पुत्र रमेश को कल काटा था।

(३) स्वाभाविक कोमलता ही नारियों के लिए सबसे बढ़कर भूषण है।

(४) विवेकशील व्यक्ति बाधा से नहीं डरते।

विश्लेषण

संख्या	उद्देश्य अंश		विधेय अंश				
	मुख्य उद्देश्य	उद्देश्य का विस्तार	विधेय	विधेय पूरक	कर्म		विधेय का विस्तार
					कर्म	विस्तार	
१.	जवाहर लाल नेहरू ने	पण्डित	भेजे हैं	....	राजदूत	भिन्न-भिन्न राष्ट्रों में	....
२.	श्वान ने	उन्मत्त	काटा था	....	रमेश को	सोहन के पुत्र	कल
३.	कामलता ही	स्वाभा-विक	है	भूषण			नारियों के लिए सबसे बढ़कर
४.	व्यक्ति	विवेक-शील	डरता	नहीं			बाधा से

अभ्यास

निम्नलिखित वाक्य का विश्लेषण करें—

सम्राट् अशोक ने सिंहल द्वीप में अपने पुत्र महेन्द्र और अपनी पुत्री संघमित्रा को बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए भेजा था। प्रेम-प्रगल्भा तिष्यरक्षिता ने अशोक के पुत्र कुणाल की दोनों आँखें छल-कपट से निकलवा ली थीं। सरलता ही कुणाल का आभूषण था। ज्ञानी पुरुष सांसारिक कठिनाइयों से नहीं डरता।

मिश्र या जटिल वाक्य का विश्लेषण

जटिल वाक्य के विश्लेषण में सर्वप्रथम इस बात की ओर ध्यान देना होता है कि वाक्य में कौन अंग प्रधान है और कौन अंग आनुषंगिक या अप्रधान। फिर आनुषंगिक अंग का पद विशेष मान कर सरल वाक्य के विश्लेषण की भाँति सम्पूर्ण वाक्य का विश्लेषण करना होता है और इसके बाद आनुषंगिक अंग का भी विश्लेषण सरल वाक्य-विश्लेषण की रीति के अनुसार करना होता है।

उदाहरण—(१) मोहन जानता है कि वह वहाँ नहीं पहुँचेगा।
(२) जो संयम से रहता है वह कभी अस्वस्थ नहीं होता।
(३) जब तुम गये तब मैं चला आया।

विश्लेषण

वाक्य-	वाक्य-भेद	समुच्चयबोधक	उद्देश्य अंश: मुख्य उद्देश्य	उद्देश्य अंश: उद्देश्य का विस्तार	विधेय अंश: विधेय	विधेय अंश: विधेय पूरक	विधेय अंश: कर्म: कर्म	विधेय अंश: कर्म: विस्तार	विधेय अंश: विधेय का विस्तार
(१) मोहन जानता है कि वह वहाँ नहीं पहुँचेगा।	प्रधान		मोहन	....	जानता है;		वह वहाँ नहीं पहुँचेगा	...	....
	आनुषंगिक (कर्म रूप में)	कि	वह	....	पहुँचेगा	नहीं	....	...	वहाँ
(२) वह कभी अ-स्वस्थ नहीं होता जो संयम से रहता है।	प्रधान		वह	जो संयम से-रहताहै	होता	नहीं			कभी अस्वस्थ
	आनुषंगिक (विशेषण रूप में)		जो	....	रहता है	....	...	....	संयम से
(३) तब मैं चला आया जब तुम गये।	प्रधान		मैं	....	चला आया	....	....	....	तब, जब, तुम गये
	आनुषंगिक (क्रिया विशे-षण रूप में)	....	तुम	....	गये	....	....	....	जब

उपर्युक्त वाक्य-विश्लेषण में प्रथम जटिल वाक्य में आनुषंगिक वाक्य कर्म के रूप में प्रयुक्त हुआ है। यही कारण है, सम्पूर्ण वाक्य का विश्लेषण करते समय उसे कर्म के रूप में दर्शाया गया है। दूसरे वाक्य में चूँकि आनुषंगिक वाक्य विशेषण के रूप में प्रयुक्त हुआ है, इसलिए उसे उद्देश्य के विस्तार के रूप में दर्शाया गया है और तीसरे वाक्य में चूँकि वह क्रियाविशेषण के रूप में प्रयुक्त हुआ है, इसलिए उसे विधेय के विस्तार के रूप में दर्शाया गया है।

अभ्यास

निम्नलिखित वाक्यों का विश्लेषण करें—

जो व्यक्ति धर्म से अनभिज्ञ हैं और संयम से अपरिचित हैं, वे विद्वान् नहीं कहला सकते। जब मैं राग-द्वेष पर विजय पा लूँगा तब विद्या मेरी चेरी हो जायेगी। एक देवता ने बोधिसत्व से पूछा कि कौन जागते हुए सोता और सोते हुए जागता है।

यौगिक या संयुक्त वाक्य का विश्लेषण

यौगिक या संयुक्त वाक्य के विश्लेषण में जिन वाक्यों से युक्त होकर यौगिक या संयुक्त वाक्य बनता है, उनका अलग-अलग विश्लेषण करना चाहिए और उन्हें जिन योजकों या अव्ययों ने संयुक्त किया है, उन योजकों या अव्ययों को दर्शाना चाहिए। यदि यौगिक वाक्य सरल वाक्यों के योग से बनता है तो सरल वाक्य-विश्लेषण की रीति से और जटिल वाक्यों के योग से बनता है तो जटिल वाक्य-विश्लेषण की रीति से विश्लेषण करना चाहिए।

निम्नलिखित वाक्यों का विग्रह कीजिये—

(१) शम्भु जानता है कि जीवन कब यहाँ आयेगा। (२) जो परिश्रम से पढ़ता है वह कभी विफल नहीं होता। (३) जब वह पटना गया तब यह यहाँ आया। (४) इन्दिराकुमारी ने राजेश्वर को चार चित्र दिये। (५) मेहनती विद्यार्थियों ने परीक्षा दी और सफलता प्राप्त की। (६) श्री लक्ष्मीदत्त थपलियाल डाक्टर रमेश के कम्पाउन्डर हैं और नैनीताल में रहते हैं।

वाक्य-रचना के नियम

व्याकरण के नियमों के द्वारा अथवा भाषा की रीति के अनुसार सिद्ध पदों की स्थापना की रीति वाक्य-रचना कहलाती है। सिद्ध पदों की स्थापना में यह विचारणीय होता है कि पदों के साथ पदों का सम्बन्ध हो और स्थापना की रीति का क्रमभंग भी न हो। अभिप्राय यह है कि वाक्य-रचना में पदों के पारस्परिक सम्बन्ध और क्रम पर विशेष ध्यान देना होता है, जिन्हें पद-मेल और पद् क्रम कहते हैं।

पद-मेल

हिन्दी के वाक्यों में प्रायः कर्त्ता या कर्म के साथ क्रिया का, संज्ञा के साथ सम्बन्धी पद का और विशेष्य के साथ विशेषण का सम्बन्ध होता है। कुछ ऐसे शब्द भी हैं जो पारस्परिक रूप से एक दूसरे से सम्बन्धित होते हैं और जो 'नित्यसम्बन्धी' कहलाते है।

(क) कर्त्ता, कर्म और क्रिया का मेल

(१) यदि वाक्य में कर्त्ता का कोई चिह्न प्रकट न हो, तो उसकी क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष कर्त्ता के लिंग, वचन, पुरुष के अनुसार होते हैं, चाहे कर्म का कोई भी रूप क्यों न हो, जैसे—

(क) सीता रोटियां खाती है। (ख) माधुरी आम खाती है। (ग) राम रोटियां खाता है। (घ) नारियां स्नान करती हैं। (ङ) पुरुष स्नान करते हैं।

इन वाक्यों में कर्त्ता चिह्नरहित है, इसलिए इसके लिंग, वचन और पुरुष के समान ही इनकी क्रियाओं के लिंग, वचन और पुरुष हैं और कर्मों के लिंग, वचन आदि का प्रभाव क्रियाओं पर नहीं पड़ता।

(२) यदि वाक्य में एक ही लिंग, वचन और पुरुष के कई चिह्नरहित कर्त्ता 'और' या 'तथा' या 'एवं' या इसी अर्थ में प्रयुक्त किसी और योजक शब्द से मिले हों, तो क्रिया बहुवचन में होगी। लेकिन यदि कर्त्ताओं के समूह से एकवचन का बोध हो तो क्रिया भी एकवचन में होगी, जैसे—

(क) विमलाकुमारी, माधुरी चन्द्रमुखी और स्वर्णलता बाग में खेल रही है।
(ख) राजेश्वर, मोहन, अनिल, रवीन्द्र और राजेन्द्र गेन्द खेलते हैं।
(ग) यह बात सुनकर मुझे उत्साह और आनन्द हुआ।

(३) यदि वाक्य में दो लिंगों और वचनों के अनेक चिह्नरहित कर्त्ता 'और' या 'तथा' या 'एवं' या इसी अर्थ में प्रयुक्त किसी अन्य योजक शब्द से मिले हों, तो क्रिया बहुवचन में होगी और लिंग अन्तिम कर्त्ता के अनुसार होगा, जैसे--

(क) एक घोड़ा, और दो बकरियाँ, चार गायें, और पांच बैल मैदान में चरते हैं।

(ख) पांच बैल, चार गायें, एक घोड़ा और दो बकरियाँ मैदान में चरती हैं।

टिप्पणी—उपर्युक्त नियम के अनुसार बने वाक्य में यदि अन्तिम कर्त्ता एकवचन में प्रयुक्त हो तो क्रिया भी प्रायः एकवचन में प्रयुक्त होती है, जैसे—ईसामसीह की जीवनी में उनके हिसाब का खाता और डायरी नहीं मिलेगी।

इस प्रकार वाक्य लिखने में अन्तिम कर्त्ता का प्रयोग प्रायः बहुवचन में होता है।

(४) यदि वाक्य में दोनों लिंगों के एकवचन के चिह्नरहित कई कर्त्ता 'और' या इसी अर्थ में प्रयुक्त किसी अन्य शब्द से मिले हों, तो क्रिया प्रायः बहुवचन और पुल्लिग होती है, जैसे—

(क) बाघ और बकरी एक घाट पानी पीते हैं।

(ख) अयोध्या में एक राजा और एक रानी रहते थे।

(ग) किसी गांव में एक बूढ़ा और एक बुढ़िया वास करते थे।

(५) यदि वाक्य में कई चिह्नरहित कर्त्ता हों और उनके मध्य में कोई विभाजक शब्द, जैसे--'या', अथवा' आदि हो, तो उसकी क्रिया के लिंग और वचन अन्तिम कर्त्ता के लिंग और वचन के अनुसार होते हैं, जसे—

(क) मेरी बकरी या तुम्हारा घोड़ा बिकेगा।

(ख) मेरा घोड़ा या तुम्हारी बकरियाँ बिकेंगी।

(ग) मेरे घोड़े या तुम्हारी बकरी बिकेगी।

(घ) मेरी बकरियाँ या तुम्हारे घोड़े बिकेंगे।

(६) यदि वाक्य में कई चिह्न-रहित कर्त्ताओं में अन्तिम कर्त्ता समूहवाचक शब्द हो तो क्रिया के लिंग और वचन समूहवाचक शब्द के लिंग और वचन के अनुसार होते हैं, जैसे—युवक, वृद्ध, पुरुष, नारी, लड़का-लड़की सब-के-सब कृष्ण की बांसुरी की तान सुनकर मुग्ध हो जाते थे।

(७) यदि कई संज्ञाएँ चिह्न-रहित कर्त्ता कारक के रूप में एक ही प्राणी या पदार्थ का बोध कराती हैं तो क्रिया एकवचन में प्रयुक्त होती है; जैसे—वह राजनीतिज्ञ और योद्धा स्वर्ग सिधार गया।

टिप्पणी—उपर्युक्त नियम पुस्तकों के नाम के बारे में भी लागू होता है, जैसे—'जीवन और यौवन' नामक पुस्तक आरसी प्रसाद सिंह के द्वारा लिखी गयी है।

(८) वाक्य में सर्वप्रथम मध्यम पुरुष प्रयुक्त होता है, उसके बाद अन्य पुरुष और अन्त में उत्तम पुरुष। इस स्थिति में क्रिया अन्तिम कर्त्ता के अनुसार होती है; जैसे—

(क) तुम, वह और मैं जाऊँगा। (ख) तू वे और हम जायेंगे।

(ग) तू, ये और मैं खाऊँगा। (घ) तुम, ये और मैं खाऊँगा।

(९) यदि वाक्य में चिह्नरहित कर्त्ता तीनों पुरुषों में प्रयुक्त हो तो क्रिया के लिंग और वचन उत्तम पुरुष के लिंग और वचन के अनुसार होते हैं; यदि मध्यम पुरुष और उत्तम पुरुष या अन्य पुरुष में प्रयुक्त हो तो भी उत्तम पुरुष के अनुसार होते हैं और यदि अन्य पुरुष और मध्यम पुरुष में प्रयुक्त हों तो मध्यम पुरुष के अनुसार होते हैं; जैसे—

(क) तुम, वह और हम पटना जायेंगे। (ख) तुम और मैं पटना जाऊँगा। (ग) वह और मैं पटना जाऊँगा। (घ) तुम और वह पटना जाओगे।

(१०) आदर-भाव प्रकट करने के लिए चिह्नरहित कर्त्ता यदि एकवचन में भी हो तो उसकी क्रिया बहुवचन में प्रयुक्त होती है; जैसे—

(क) वह पटना जायेंगे। (ख) श्री करुणेश जी आज दिल्ली जायेंगे।

(११) ईश्वर के लिए एकवचन की क्रिया प्रयुक्त होती है; जैसे—

(क) वह अपनी निर्दोषता कैसे प्रमाणित करे—ईश्वर ही साक्षी है।

(ख) ईश्वर, तू है पिता हमारा।

(१२) जहाँ वाक्य में क्रिया के लिंग और वचन कर्त्ता के लिंग और वचन के अनुसार होते हैं, वहाँ मुख्य कर्त्ता के लिंग और वचन के ही अनुसार होते हैं,

विधेय के रूप में प्रयुक्त हुए अप्रधान कर्त्ता के लिंग और वचन के अनुसार नहीं; जैसे—

(क) लड़की सूख कर काठ हो गयी। (ख) लड़का सूख कर लाठी हो गया।

(१३) यदि वाक्य के एक ही कर्त्ता की दो या अधिक समापिका क्रियाएँ भिन्न-भिन्न कालों में हों अथवा कोई क्रिया अकर्मक और कोई सकर्मक हो तो कर्त्ता का चिह्न सिर्फ पहली क्रिया के अनुसार प्रयुक्त होता है; जैसे—

(क) राजेश्वर ने बाजार में एक आम खरीदा और पटना चला गया।
(ख) विपिन ने स्नान किया और सो गया।
(ग) वह उठा और प्रभातकालीन सूर्य की सुनहली किरणें देखी।

(१४) यदि किसी वाक्य में प्रयुक्त दो या दो से अधिक क्रियाओं का एक ही कर्त्ता हो तो कर्त्ता कई बार प्रयुक्त नहीं होता वरन् एक ही बार प्रयुक्त होता है; जैसे—

(क) रामनन्दन गाता जाता है। (ख) ब्रजकिशोर खाता-पीता है।

(१५) कर्त्ता का चिह्न पौर्वकालिक क्रिया के अनुसार नहीं प्रयुक्त होता और किसी वाक्य में पौर्वकालिक और समापिका दोनों क्रियाओं का एक ही कर्त्ता होता है; जैसे—

(क) विनयकृष्ण खाकर सो गया। (ख) इन्दिराकुमारी ने उठकर भोजन किया।

(१६) यदि एक या अधिक चिह्न-रहित कर्त्ताओं का कोई समानाधिकरण शब्द हो तो क्रिया उसी के अनुसार प्रयुक्त होती है; जैसे—

(क) मृत्यु के समय पुत्र और पत्नी, भाई और बहन, माता और पिता कोई साथी नहीं होता।

(ख) पत्नी और पुत्र कोई नहीं रहा।

(१७) यदि वाक्य में कर्त्ता का 'ने' चिह्न भी हो तो क्रिया सदा एकवचन पुल्लिंग और अन्य पुरुष में प्रयुक्त होती है; जैसे—

(क) इन्दिरा ने चार रोटियों को खाया।
(ख) मोहन और सोहन ने चार रोटियों को खाया।
(ग) विभा ने चार आमों को खाया।
(घ) प्रभा ने अपनी बहन को पुकारा।

(१८) यदि वाक्य में कर्त्ता का 'ने' चिह्न हो और कर्म का 'को' चिह्न लुप्त रहे, तो क्रिया के 'लिंग, वचन और पुरुष' कर्म के लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार होते हैं; जैसे—

(क) मोहन और सोहन ने चार लीचियाँ खायी थीं।

(ख) मोहन और सोहन ने चार आम खाये थे।

(ग) मोहन और सोहन ने एक लीची खायी थीं।

(घ) मोहन और मोहन ने एक आम खाया था।

(१९) यदि वाक्य में कर्त्ता का 'ने' चिह्न हो और कर्म न हो या लुप्तावस्था में हो, तो क्रिया सदा एकवचन, पुल्लिग और अन्य पुरुष में प्रयुक्त होती हैं; जैसे—

(क) इन्दिरा ने कहा। (ख) मोहन ने लिखा। (ग) सोहन ने देखा।

(२०) क्रियार्थक संज्ञा की क्रिया सदा एकवचन, पुल्लिग और अन्य-पुरुष में प्रयुक्त होती है; जैसे—

(क) राम का टहलना स्वास्थ्यकर हुआ। (ख) तुम्हारा जाना सफल हुआ।

(२१) वाक्य में यदि कर्त्ता या कर्म के, जिसके अनुसार क्रिया के लिंग, वचन आदि का प्रयोग होता है, लिंग में सन्देह हो, तो क्रिया पुल्लिग में प्रयुक्त होती है; जैसे—

(क) उपनिषदों में लिखा है। (ख) तुम्हारी आवाज कौन सुनेगा?

(२२) कुछ संज्ञाएँ केवल बहुवचन में प्रयुक्त होती हैं; जैसे—

(क) बाघ को देखकर मेरे होश उड़ गये। (ख) उसके प्राण निकल गये। (ग) उसकी आँखों से आंसू टपक पड़े। (घ) आपके दर्शन हुए। (ङ) मैंने युद्ध में शत्रुओं के दाँत खट्टे किये। (च) क्रोध से मेरे ओठ फड़कने लगे। 'होश', 'प्राण', 'दर्शन', 'आँसू', 'दाँत', 'बाल' आदि का प्रयोग सदा बहुवचव में होता है।

(२३) जिस वाक्य में कर्म के अनुसार क्रिया होती है, उसमें यदि एक ही लिंग और एकवचन के अनेक प्राणीवाचक चिह्न-रहित कर्मकारक प्रयुक्त हों, तो क्रिया उसी लिंग के बहुवचन में प्रयुक्त होती है; जैसे—

(क) प्रकाश ने गाय और बकरी खरीदी हैं।

(ख) विकास ने बैल और घोड़ा खरीदे हैं।

टिप्पणी—(क) चिह्नरहित कर्मकारक में उत्तम पुरुष और मध्यम पुरुष का प्रयोग नहीं होता।

(ख) उपर्युक्त नियम के अनुसार प्रयुक्त कर्मों में यदि पृथकता या भिन्नता का बोध हो, तो क्रिया बहुवचन में प्रयुक्त होती है; जैसे—

(१) श्याम ने एक गाय और बकरी खरीदी है।

(२) राम ने एक बेटा और एक भतीजा भेजा।

(२४) यदि वाक्य में भिन्न-भिन्न लिंग के कई चिह्न-रहित कर्म एकवचन में हों, तो वे पुल्लिग और बहुवचन में प्रयुक्त होते हैं; जैसे—

(क) मैंने बैल और गाय खरीदे। (क) विमल ने सोनपुर मेले में बाघ और बन्दर देखे।

(२५) यदि वाक्य में भिन्न-भिन्न लिंगों और वचनों के एक से अधिक चिह्न-रहित कर्म हों, तो क्रिया के लिंग और वचन अन्तिम कर्म के अनुसार—जो प्राय: बहुवचन में प्रयुक्त होते हैं—होते हैं; जैसे—

(क) उसने मेले में सुई, कंघी, दर्पण और पुस्तकें खरीदी थीं।

(ख) तुमने कलमें, सुइयाँ, दर्पण और खिलौने खरीदे थे।

(२५) यदि वाक्य में कई चिह्न-रहित कर्म हों और वे विभाजक अव्यय के द्वारा मिले हों, तो क्रिया अन्तिम कर्म के अनुसार होती है; जैसे—

(क) रजनीकान्त ने कोट या टोपी खरीदी है।

(ख) त्रिपुरारि ने टोपी या खिलौने खरीदे हैं।

(२७) यदि वाक्य में कई चिह्न-रहित कर्मों से किसी एक व्यक्ति या वस्तु का बोध हो तो क्रिया एकवचन में होती है; जैसे–मैंने एक अच्छा मित्र और बन्धु पाया।

(२८) यदि वाक्य में प्रयुक्त कई चिह्न-रहित कर्मों का कोई समानाधिकरण शब्द हो, तो क्रिया समानाधिकरण शब्द के अनुसार होती है; जैसे—महात्मा बुद्ध ने धन, जन, कुल, परिवार आदि सब कुछ छोड़ दिया।

(२९) चिह्न-रहित दो कर्मों का यदि प्रयोग हो, तो वाक्य में क्रिया प्रधान कर्म के अनुसार होती है; जैसे—मैंने राम को एक लीची दी।

(ख) संज्ञा और सर्वनाम का मेल

(१) वाक्य में किसी सर्वनाम के लिंग और वचन उसी संज्ञा के लिंग और वचन के अनुसार होते हैं, जिसके बदले वह प्रयुक्त होता है; परन्तु कारकों में भेद हो जाता है; जैसे—

(क) स्त्रियाँ कहती हैं कि हम सोनपुर मेला देखने जायेंगी।

(ख) बालक कहते हैं कि हम गेन्द खेलकर स्कूल जायेंगे।

(ग) अमिताभ कहता है कि मैं विज्ञान का अध्ययन करूँगा।

(२) यदि वाक्य में अनेक संज्ञाओं के बदले एक ही सर्वनाम प्रयुक्त हो, तो उसके लिंग और वचन संज्ञा-पद-समूह के लिंग और वचन के अनुसार होते हैं। जैसे—मुकुल और अशोक आम खाते हैं। इसके बाद वे स्कल जायेंगे।

(क) जयन्त, तू आज स्कूल क्यों नहीं गया ?

(ख) विजय, तू आज परीक्षा में क्यों नहीं सम्मिलित हुआ ?

(ब) हा विधाता, तू ने यह क्या किया ?

(३) अनादर या प्यार के अर्थ में 'तू' का प्रयोग किसी संज्ञा के स्थान पर होता है।

देवताओं या ईश्वर के लिए भी यह प्रयुक्त होता है; जैसे—परमात्मा, तू कितना कृपालु है।

(४) किसी सभा या संस्था या वर्ग के प्रतिनिधि सम्पादक, ग्रंथकार और बड़े-बड़े अधिकारी 'मैं' की जगह प्रायः 'हम' का प्रयोग करते हैं; जैसे —

(क) यह बात हम पिछले प्रकरण में लिख चुके हैं।

(ख) जनता के प्रतिनिधि की हैसियत से हम प्रस्ताव का विरोध करते हैं।

(ग) पिछली सम्पादकीय टिप्पणियों में हमने इस विषय पर प्रकाश डाला था।

(५) अधिक आदरका भाव प्रकट करने के लिए 'आप' की जगह पुरुषों के लिए 'श्रीमान्', 'महाशय', 'महोदय', 'कृपानिधान', 'हुजूर' आदि और महिलाओं के लिए 'श्रीमती', 'महाशया', 'महोदया', 'देवी' आदि शब्दों का प्रयोग होता है। कभी-कभी इन शब्दों का प्रयोग व्यंग्य के अर्थ में भी होता है; जैसे—

(क) श्रीमान् की आज्ञा शिरोधार्य है।

(ख) देवी जी पटना कब आयेंगी ?

(ग) हुजूर को सलाम है।

(च) कृपा-निधान के कारण ही मुझे यह कठिनाई उठानी पड़ी है।

(६) महान् व्यक्तियों के सामने अपनी दीनता और हीनता प्रकट करने के लिए अथवा शिष्टाचार के नियमों के अनुसार उत्तम पुरुष सर्वनाम के बदले पुरुषों के लिए 'अनुचर', 'सेवक', 'दास', 'बन्दा', आदि और नारियों के लिए 'अनुचरी', 'सेविका' 'दासी' आदि शब्द प्रयुक्त होते हैं; जैसे—

(क) इस दास को मत भूलियेगा।

(ख) इस दासी को याद रखियेगा।

(ग) विशेषण और विशेष्य का मेल

(१) विशेषण के लिंग, वचन आदि विशेष्य के लिंग, वचन आदि के अनुसार होते हैं। लेकिन यह स्मरण रखना चाहिए कि विशेष्य के लिंग, वचन और कारक के कारण केवल आकारान्त विशेषण विकृत होते हैं और अन्य विशेषण नहीं; जैसे—

(क) काले घोड़े चरते हैं।

(ख) काली गाय चरती है।

(ख) सुन्दर बालक पढ़ता है।

टिप्पणी—(क) 'सुन्दर', 'सुशील', आदि संस्कृत के कुछ अकारान्त विशेषण हैं, जिनमें विशेष्य के लिंग के कारण रूपान्तर हो सकता है और ये विशेषण विकृत और अविकृत दोनों रूपों में प्रयुक्त होते हैं; जैसे—

(क) सुन्दर बालक पढ़ता है ।

(ख) सुन्दरी बालिका पढ़ती है ।

(ग) सुन्दर बालिका पढ़ती है ।

(घ) सुशील बालक पढ़ता है ।

(ङ) सुशीला बालिका पढ़ती है ।

(च) सुशील बालिका पढ़ती है ।

(ख) यद्यपि संस्कृत के नियमानुसार 'सुन्दर', 'सुशील' पुल्लिग विशेषणों के स्त्रीलिंग विशेषण 'सुन्दरी', 'सुशीला' आदि हैं तथापि 'सुन्दरी', 'सुशीला' आदि स्त्रीलिंग विशेषणों का प्रयोग 'सुन्दर स्त्री', 'सुशील स्त्री' आदि के रूप में भी होता है; जैसे—

(क) सुन्दरियाँ गंगा में स्नान करती हैं ।

(ख) सुशीला धीरे-धीरे जाती है ।

(ग) जिस प्रकार 'सुन्दर बालक' और 'सुन्दर बालिका' या 'सुन्दरी बालिका' जैसे प्रयोग हिन्दी में प्रचलित हैं, उसी प्रकार 'मनोहर पुरुष', 'मनोहर नारी', 'मनोहारिणी नारी', 'भाग्यवान् पुरुष', 'भाग्यवती नारी' आदि प्रयोग भी मान्य हैं ।

(२) यदि वाक्यों में चिह्नरहित कर्मकारक का विकारी विशेषण विधेय के रूप में प्रयुक्त हो, तो उसके लिंग और वचन कर्म के लिंग और वचन के अनुसार होते हैं, परन्तु यदि कर्म का चिह्न 'को' प्रकट हो तो विशेषण ज्यों-का त्यों भी रह जाता है; अर्थात् विकल्प से परिवर्त्तित होता है; जैसे—

(क) विमल ने अपनी लाठी टेढ़ी की ।

(ख) विमल ने अपनी लाठी को टेढ़ी किया ।

(ग) विमल ने अपनी लाठी को टेढ़ा किया ।

(३) यदि वाक्य में एक ही विकारी विशेषण के कई विशेष्य हों तो विशेषण प्रथम विशेष्य के लिंग, वचन और कारक के अनुसार परिवर्त्तित होता है; जैसे—

(क) मेले में छोटी-छोटी बालिकाएँ और बालक विचरते हैं।

(ख) बाजार में छोटे-छोटे लड़के और लड़कियाँ हल्ला करते हैं।

(४) यदि एक ही विशेष्य के अनेक विकारी विशेषण हों तो वे विशेष्य के लिंग और वचन के अनुसार बदलते हैं; जैसे—

(क) चमकीली और सुहावनी किरणें प्रतिविम्बित होती हैं।

(ख) चमकीले और नीले बादल आकाश में छा गये हैं।

(५) समय, दूरी, दिशा, परिमाण, धन आदि का बोध कराने वाली संज्ञाओं के पूर्व यदि संख्यावाचक विशेषण हो और संज्ञाओं से समुदाय का बोध न हो तो वे विकृत कारकों के साथ प्रायः एकवचन में प्रयुक्त होती हैं; जैसे—तीन कोस की दूरी, चार हजार रुपये में, आदि।

टिप्पणी—दो महीने में, चार महीनों में, चारों महीनों में और चारों महीने में—इन चारों वाक्यांशों के अर्थ में किंचित् अन्तर है। पहले में साधारण गिनती है और दूसरे में जोर दिया गया है और तीसरे तथा चौथे में समुदाय का अर्थ है।

(छ) यदि क्रिया का साधारण रूप किसी संज्ञा के बाद विधेय-विशेषण के रूप में प्रयुक्त हो और उससे सम्प्रदान या क्रिया की पूर्त्ति का अर्थ प्रकट हो, तो उसके लिंग और वचन उसी संज्ञा के लिंग और वचन के अनुसार होते हैं, जिसके साथ वह प्रयुक्त हों; परन्तु यदि उससे उस संज्ञा के सम्बन्धी का बोध हो तो उसका रूप ज्यों-का-त्यों रहता है; जैसे—

(क) तुम्हें यह रोटी खानी पड़ेगी।

(ख) तुम्हें यह घण्टी बजानी होगी।

(ग) सुरेश को परीक्षा देनी होगी।

(घ) व्यर्थ खिलोना लाना छोड़ दो।

पहले, दूसरे और तीसरे वाक्यों में क्रमशः 'खानी', 'बजानी' और 'देनी' क्रियाएँ सम्प्रदान या क्रिया की पूर्ति का भाव प्रकट करती हैं, परन्तु 'खिलोना लाना' में 'खिलोना' सम्बन्ध कारक के समान प्रयुक्त हुआ है, जिसका सम्बन्धी

'लाना' है अर्थात 'खिलौने का लाना' यही कारण है, पहले तीनों वाक्यों में विधेय-विशेषण क्रियाओं का रूप संज्ञा के रूप के अनुसार परिवर्तित हो गया है और अन्तिम वाक्य में ज्यों का त्यों रह गया है।

(घ) सम्बन्ध और सम्बन्धी का मेल

(१) सम्बन्ध के चिह्न के लिंग और वचन, सम्बन्धी के लिंग और वचन के अनुसार होते हैं; जैसे—सोहन की बकरी चरती है। मोहन का घोड़ा चरता है। श्याम के बैल चरते हैं। यहाँ 'बकरी' चूँकि स्त्रीलिंग है, इसलिए 'सोहन' सम्बन्ध 'के' चिह्न के रूप में 'की' प्रयुक्त हुआ है, 'घोड़ा' चूँकि पुल्लिंग है, इसलिए 'मोहन' सम्बन्ध 'के' चिह्न में 'का' प्रयुक्त हुआ है और बैल चूँकि पुल्लिंग और बहुवचन है, इसलिए 'श्याम' सम्बन्ध के चिह्न के रूप में 'के' प्रयुक्त हुआ है।

(२) जिस प्रकार आकारान्त विशेषण विशेष्य के अनुसार विकृत होते हैं, उसी प्रकार सम्बन्ध कारक के चिह्न सम्बन्धी के अनुसार विकृत होते हैं; जैसे—उजली बकरी और राम की बकरी; अच्छी लड़की और राम की लड़की; आदि।

(३) यदि एक ही सम्बन्ध के अनेक सम्बन्धी हों तो सम्बन्ध का चिह्न पहले सम्बन्धी के अनुसार विकृत होता है; जैसे—

(क) सोहन की बकरी, बैल और घोड़े चरते हैं।

(ख) सोहन के घोड़े, बैल और बकरियाँ चरती हैं।

(ङ) नित्य सम्बन्धी शब्दों का मेल

कई अव्यय, सर्वनाम और कुछ ऐसे शब्द हैं, जिनमें बराबर एक समान सम्बन्ध होता है। ऐसे शब्द नित्य सम्बन्धी शब्द कहलाते हैं; जैसे—

(१) जब-तब—'जब' के साथ 'तब' का बराबर एक समान सम्बन्ध होता है अर्थात् वाक्य में जब 'जब' का प्रयोग होगा तब 'तब' भी प्रयुक्त होगा; जैसे—जब वह आयेगा तब मैं जाऊँगा।

'तब' के स्थान पर 'तो' का प्रयोग भी होता है पर यह प्रयोग खटकता है।

(२) यद्यपि-तथापि—ये दोनों भी नित्य सम्बन्धी शब्द हैं; जैसे—यद्यपि वह यहाँ नहीं आयेगा तथापि मैं वहाँ जाऊँगा।

'तथापि' के स्थान पर 'किन्तु', 'परन्तु' आदि का प्रयोग अनुचित हैं; 'तो भी' का प्रयोग उचित माना जा सकता है। पद्य में 'यद्यपि' और 'तथापि' के स्थान पर क्रमशः 'यद्यपि' और 'तथापि' का प्रयोग होता है।

(३) यदि—तो—ये दोनों भी नित्य-सम्बन्धी शब्द हैं। 'तो' की जगह 'तब' का प्रयोग नहीं होना चाहिए। 'यदि' की जगह 'जो' का प्रयोग हो सकता है; जैसे—(क) यदि वर्षा होती तो अकाल नहीं होता।

(ख) जो मैं यह जान पाता कि तुम पटने से आज आओगे तो मैं उसको पटना नहीं भेजता।

(४) जो-सो—ये दोनों भी नित्य-सम्बन्धी शब्द हैं; लेकिन आजकल 'सो' की जगह 'वह' या 'वही' का प्रयोग प्रचलित हो गया है; जैसे —

जो परिश्रम करेगा वह सफलता की प्राप्ति करेगा। जो इसे देखेगा वह हँसेगा।

(५) जहाँ-तहाँ—जिस प्रकार आजकल 'सो' की जगह 'वह' का प्रयोग प्रचलित हो गया है, उसी प्रकार 'तहाँ' की जगह 'वहाँ' का प्रयोग प्रचलित हो गया है; जैसे—जहाँ सत्य है वहाँ ईश्वर है।

टिप्पणी—कभी-कभी वाक्य में नित्य सम्बन्धी शब्द लुप्त भी होता है; जैसे—(यदि) ऐसा होगा तो देखा जायगा। जिस प्रकार यह काम सम्पन्न हुआ, (उसी प्रकार) वह काम भी सम्पन्न हो जायगा।

पद-क्रम

वाक्य-रचना में पदों की स्थापना की प्रणाली को पद-क्रम कहते हैं। यहाँ पद-क्रम के कुछ नियम लिखे जाते हैं—

(१) वाक्य के पद-क्रम का सबसे प्रथम नियम यह है कि वाक्य में सर्वप्रथम कर्त्ता या उद्देश्य का प्रयोग होता है और अन्त में क्रिया या विधेय पद का; जैसे—

(क) फूल खिलता है।

(ख) हवा बहती है।

(ग) तारा चमकता है।

(२) यदि क्रिया सकर्मक हो तो क्रिया के पूर्व कर्म का प्रयोग होता है और यदि क्रिया द्विकर्मक हो तो पहले गौण कर्म और उसके बाद मुख्य कर्म का प्रयोग होता है; जैसे—विपिन आम खाता है। विपिन विमला को पुस्तक देता है।

(३) शेष कारकों में आनेवाले पद उन पदों के पहले प्रयुक्त होते हैं, जिनसे उनका सम्बन्ध होता है; जैसे—

(क) युगेश्वर ने आलमारी से राजेश्वर की पुस्तकें निकालीं।

(ख) अमरेश का भाई कल कलकत्ते से पटना जायेगा।

(४) वाक्य के आरम्भ में सम्बोधन पद का प्रयोग होता है, जिसके चिह्न हे, अरे, रे, री, अरी आदि हैं—सम्बोधन पद के पहले प्रयुक्त होते हैं; जैसे—अरे सुमन, तू क्या करता है ? रे नरेश, तू विनय को क्यों डाँटता है ?

(५) सम्बन्ध पद के बाद उसके सम्बन्धी पद का प्रयोग होता है और यदि सम्बन्धी पद का कोई विशेषण हो, तो वह सम्बन्धी पद के पूर्व प्रयुक्त होता है, जैसे—

(क) यह मोहन की किताब है।

(ख) गोविन्द की उजली बकरी चरती है।

यदि सम्बन्धी-पद उद्देश्य के रूप में हो, तो विधेय-पद वाक्य के पूर्व प्रयुक्त होता है, जैसे—जनता की सेवा करना ईश्वर की सेवा करने के समान है।

(६) करणकारक में आनेवाले शब्द का प्रयोग प्रायः कर्म के पूर्व होता है और उसका विशेषण उसके पूर्व प्रयुक्त होता है, जैसे —

(क) मोहन ने बन्दूक से बाघ मारा।

(ख) कन्हैया ने अपने सुकुमार हाथों से नाग नाथा।

(७) अपादान कारक अपने अर्थबोधक पद के पूर्व प्रयुक्त होता है; जैसे—
विनय कल इस्लामपुर से पटना आया।

(८) अधिकरण पद का प्रयोग आधेय के पूर्व होता है; जैसे—चन्द्रमा में कलंक है।

(क) कालवाचक अधिकरण पद का प्रयोग वाक्य के पूर्व होता है, जैसे—प्रभात में सूर्य उदयाचल पर उदित होता है।

(ख) जिस वाक्य में कालवाचक और स्थानवाचक दोनों अधिकरण-पद हों उस वाक्य में पहले कालवाचक का प्रयोग होता है और पीछे स्थानवाचक का, जैसे—मदालसा दिन में स्कूल में रहती है ।

टिप्पणी—पदक्रम के उपर्युक्त नियमों का कभी-कभी व्यतिक्रम भी होता है अर्थात् वाक्य में जिस पद का प्रधानता दिखलानी हो उसे, पदक्रम के नियम के खिलाफ पहले रक्खा जाना है, जिससे वाक्य के अन्य भागों में भी हेर-फेर हो जाता है, जैसे—

(क) कर्त्ता का व्यतिक्रम—सिर तोड़ मेहनत कर कमाता है 'तू' और खाता है 'वह' ।

(ख) कर्म का व्यतिक्रम—'आम' मैं खाऊँगा ही नहीं ।

(ग) करण का व्यतिक्रम—'छुरी से' उसने आम काटा ।

(घ) सम्प्रदान का व्यतिक्रम—'आप के लिए' ही यह प्रबन्ध किया था ।

(ङ) अपादान का व्यतिक्रम—'पेड़ से' जितने पत्ते गिरे सब हवा में उड़ गये ।

(च) सम्बन्ध का व्यतिक्रम—'मेरी' पुस्तक कोई ले गया है ।

कभी-कभी पद के सिलसिले में सम्बन्ध-पद अपने सम्बन्धी के पीछे प्रयुक्त होता है, जैसे—यह पुस्तक किसकी है ?

(छ) अधिकरण का व्यतिक्रम—'इसी पर' यह कार्य निर्भर है ।

(ज) क्रिया का व्यतिक्रम—'क्या खूब' ! मैंने पुकारा उसे और 'आ गये' आप !

(९) विशेषण का प्रयोग प्रायः विशेष्य के पहले होता है । यदि एक से अधिक विशेषण-पदों का प्रयोग एक साथ हो तो उनके मध्य में संयोजक अव्यय प्रयुक्त होता है, जैसे—

(क) सुन्दर और सुगन्धित फूल हवा में झूमते हैं ।

(ख) भक्त वत्सल, दीन दयालु और नरश्रेष्ठ राम ने रावण को मारा ।

(१०) क्रिया-विशेषण या क्रिया-विशेषण के रूप में प्रयुक्त वाक्यांश क्रिया के पूर्व आता है; जैसे—हवा धीरे-धीरे बहती है ।

(११) पौर्वकालिक क्रिया का प्रयोग प्रायः समापिका क्रिया के पूर्व होता है, जबकि दोनों का कर्त्ता एक ही हो और जिस क्रिया के जो कर्म, करण आदि पद होते हैं उनका प्रयोग उसके पूर्व होता है ।

(१२) सर्वनाम का विशेषण-पद प्रायः उसके बाद प्रयुक्त होता है; जैसे—

(क) वह बदमाश है ।

(ख) वह चतुर है ।

टिप्पणी—शब्द पर जोर देने के लिए उपर्युक्त नियमों का व्यतिक्रम भी होता है; जैसे—

(क) क्रिया-विशेषण कर्त्ता के पूर्व—एक-एक कर सब लड़के चले गये ।

(ख) विशेषण का व्यतिक्रम—मोहन बहुत समझदार है ।

(ग) पौर्वकालिक क्रिया का व्यतिक्रम—सुनकर भी उसने बात अन-सुनी की ।

(१३) प्रश्नवाचक सर्वनाम या अव्यय का प्रयोग उस पद के पूर्व होता है, जिस पद के बारे में प्रश्न किया जाता है; जैसे—यह किसकी कलम है ?

टिप्पणी—उपर्युक्त नियम का व्यतिक्रम भी होता है :

(क) यदि सम्पूर्ण वाक्य ही प्रश्न हो तो प्रश्नवाचक सर्वनाम या अव्यय का प्रयोग वाक्य में पहले ही होता है । जैसे—क्या राजेश्वर कल गोपालपुर जाने-वाला है ?

(ख) वाक्य पर जोर देने के लिए प्रश्नवाचक सर्वनाम या अव्यय का प्रयोग मुख्य क्रिया और सहायक क्रिया के बीच में हो सकता है; जैसे—

इन्दिरा पटना जा कैसे सकेगी ?

(ग) कभी-कभी वाक्य में प्रश्नवाचक सर्वनाम या अव्यय का प्रयोग नहीं होता, केवल प्रश्नवाचक का चिह्न अन्त में प्रयुक्त होता है; जैसे—वास्तव में वह खायगा ? (वास्तव में क्या वह खायेगा ?)

(घ) प्रश्नवाचक अव्यय 'क्या' का प्रयोग प्रायः वाक्य के आरम्भ में होता है परन्तु कभी-कभी मध्य या अन्त में होता है; जैसे—क्या कलम खो गयी ? कलम खो गयी क्या ? कलम क्या खो गयी ?

(ङ) जब 'न' प्रश्नवाचक अव्यय की भाँति प्रयुक्त होता है तब वाक्य के अन्त में आता है; जैसे—तुम जाओगे न ? वह आम खायेगा न ?

(१४) मात्र, तक, भर, ही, भी और तो—इन शब्दों का प्रयोग वाक्य में किसी शब्द पर जोर देने के लिए ही होता है। ये शब्द उस शब्द के बाद प्रयुक्त होते हैं, जिस शब्द पर जोर देने के लिए आते हैं। इन शब्दों के स्थान परिवर्त्तन से वाक्य के अर्थ में भी परिवर्त्तन होता है; जैसे—

(क) मैं भी आम खाऊँगा।

(ख) मैं आम भी खाऊँगा।

(ग) मैं ही गेन्द खेलूँगा।

(घ) मैं गेन्द ही खेलूँगा।

(ङ) मैं तो यह कार्य अवश्य करूँगा।

(च) मैं यह कार्य तो अवश्य करूँगा।

टिप्पणी—'मात्र' के सिवा 'तक', 'भर', 'ही' आदि शब्दों का प्रयोग मुख्य क्रिया और सहायक क्रिया के बीच में भी होता है। 'भी' और 'तो' के सिवा शेष शब्दों का प्रयोग संज्ञा और विभक्ति के बीच में किया जा सकता है और 'ही' शब्द का प्रयोग कर्त्तृवाचक कृदन्त और सामान्य भविष्यत् काल प्रत्यय के पूर्व भी किया जा सकता है; जैसे—

(क) अब तो वह कुछ टहलता भी है।

(ख) कलकत्ते से पटने तक की दूरी ३७५ मील है।

(ग) मोहन ही ने यह कहा था।

(घ) अब इस पत्र को पढ़ने ही वाला कौन है ?

(१५) सम्बन्धवाचक क्रिया-विशेषण— जहाँ-तहाँ, जब-तब, जैसे-वैसे आदि प्रायः वाक्य के आरम्भ में प्रयुक्त होते हैं। आजकल 'तहाँ' की जगह 'वहाँ' या 'वहीं' का प्रयोग प्रचलित हो गया है। 'तब' की जगह 'तो' का प्रयोग अनुचित है; जैसे— (क) जहाँ अरविन्द गेन्द खेलेगा वहाँ अमरेश भी जायगा।

(ख) जब वर्षा होगी तब फसल उपजेगी।

(ग) जैसे गोविन्द ने कहा वैसे नरेश ने भी।

(१६) निषेधवाचक अव्यय—न, नहीं और मत—प्रायः क्रिया के पूर्व प्रयुक्त होते हैं; जैसे—

(क) वह कभी न गायेगा।

(ख) उसने आम अभी तक नहीं खाया है।

(ग) तुम शराब मत पीओ।

'मत' का प्रयोग विधि क्रिया होने पर भी होता है।

टिप्पणी—उपर्युक्त नियम का व्यतिक्रम भी होता है।

(क) 'नहीं' और 'मत' क्रिया के बाद भी प्रयुक्त होते हैं; जैसे—तुम यह गीत गाना मत। तुम वहाँ पहुँचे ही नहीं, वहाँ का रहस्य तुम क्या जानोगे?

(ख) यदि वाक्य में संयुक्त क्रिया हो तो निषेधवाचक अव्यय मुख्य क्रिया और सहायक क्रिया के बीच में भी प्रयुक्त होते हैं; जैसे—वह इसकी पुष्टि में कोई प्रमाण दे नहीं सकता। तुम शीघ्र शराब पा मत जाना।

(१७) समुच्चयबोधक अव्यय और जिन शब्दों या वाक्यों को संयुक्त करते हैं, बीच में प्रयुक्त होते हैं; जैसे—

(क) अरविन्द और अमरेश पढ़ते हैं।

(ख) गोविन्द आम खाता है और नरेश पानी पीता है।

टिप्पणी—(क) यदि संयोजक अव्यय कई शब्दों या वाक्यों को मिलाता हो तो अन्तिम शब्द या वाक्य के पहले प्रयुक्त होता है; जैसे—राजेश्वर स्कूल गया, वहाँ जाकर पाठ्य-पुस्तकें पढ़ीं और उन्हें बाँधकर घर आ गया। इस परिवार के बूढ़े, बच्चे और जवान सभी समझदार हैं।

(१८) संकेतावाचक समुच्चयबोधक—यदि, तो, यद्यपि, तथापि—प्रायः वाक्य के आरम्भ में प्रयुक्त होते हैं; जैसे—

(क) यदि यह बात ठीक थी तो तुम्हें कहने में क्या आपत्ति थी?

(ख) यद्यपि यह बात सत्य थी तथापि उस समय बोलना अनुचित था।

(१९) वाक्य में जब कोई शब्द दो बार प्रयुक्त होता है, तब वीप्सा कहलाता है, जो सम्पूर्णता, एककालीनता, निकटता आदि अर्थ का परिचायक या बोधक है; जैसे—

(क) मैंने घर-घर जा-जा देखा।

(ख) घर-घर डोलत दीन ह्वै, जन-जन जाँचत जाय।

टिप्पणी—जहाँ एक ही शब्द दो बार लिखना होता है, वहाँ एक शब्द लिखने के बाद '२' लिखने का प्रचलन दोषपूर्ण है क्योंकि इससे कभी-कभी भ्रान्ति उत्पन्न हो जाती है।

अभ्यास

(१) निम्नलिखित वाक्यों को शुद्ध कीजिये—

तारा चमकती है। हवा चलता है। राम ने रोटी खाया होगा। गोविन्द का भाई कलकत्ता से पटना जायगा। मयूर ने साँप निगल गया। सुरेश ने लाठी उठाया और तीन साँपों को मारे थे। बालकें स्नान करते हैं। सीता और सावित्री नहाती है। एक गायें, दो बैलें, चार ऊँटें तीन गदहे चर रहे हैं। बाघ और बकरी एक घाट पानी पीती है। उसके गायें या मेरे बैलें बिकेंगे। राम या सीता आयेगा। तुम, मैं और वह आयेगा। हरि ने दोपहर को खाना खायी और सो गये। काला घोड़ा ने दौड़ दौड़ा था। उजला घोड़ा ने चार पत्ता खाया था।

(२) निम्नलिखित वाक्य-समूह में परस्पर क्या भेद हैं?

(क) राजेश्वर भी पटना जाने को तैयार है।

(ख) राजेश्वर पटना जाने को भी तैयार है।

(ग) राजेश्वर पटना भी जाने को तैयार है।

(३) निम्नलिखित शब्दों को इस प्रकार रखिये कि एक पूर्णवाक्य बन जाये—

(क) है, कंचन, कामिनी, और, बना, कर, पागल, लोगों, को, ही, दोनों, छोड़ती।

(ख) के, गले, सीता, में, ने, दी, डाल, जयमाला, राम।

(ग) हैं, रही, जा, में, गंगा, नौका, एक, कि, देखा, जा, कर, पर, तट, के, गंगा, ने, विजय।

(घ) है, माला, की, पुष्प, में, गले, के, जिस, के, बैठा, बालक, सुन्दर, एक, पर, उस ।

(ङ) से, पहाड़, हिमालय, नदी, निकल, कर, बंगाल, गिरती, की, खाड़ी में, है ।

(च) की, है, पटना, बिहार, राजधानी ।

वाक्य-रचना का अभ्यास

परिवर्त्तन

वाक्य को मधुर और आकर्षक बनाने के लिए पद, वाक्यांश और खण्ड-वाक्य के प्रयोग का पूर्ण अभ्यास करना चाहिए, जिसके लिए पद, वाक्यांश और खण्डवाक्य के पारस्परिक परिवर्त्तन के ज्ञान की आवश्यकता है और कभी वाक्य को विस्तृत, कभी संकुचित, कभी पृथक् और कभी संयुक्त करने की ओर ध्यान देना चाहिए ।

पद, वाक्यांश और खण्डवाक्य

पद, वाक्यांश और खण्डवाक्य का पारस्परिक परिवर्त्तन समास, कृदन्त और तद्धितान्त पर निर्भर है । परिवर्त्तन में इस बात की ओर ध्यान रहना चाहिए कि अर्थ में किसी प्रकार की कठिनाई उत्पन्न न हो ।

(क) पद का वाक्यांश और वाक्यांश का पद

समस्त पद, कृदन्त और तद्धितान्त पद का परिवर्त्तन वाक्यांश में और वाक्यांश का परिवर्त्तन समस्त पद, कृदन्त और तद्धितान्त में किया जा सकता है ।

पद का वाक्यांश

(क) शैव—शिव के उपासक ।

(ख) वैष्णव—विष्णु के उपासक ।

(ग) शाक्त—शक्ति के उपासक ।

(घ) दार्शनिक—दर्शनशास्त्र के ज्ञाता ।

(ङ) राजनीतिक—राजनीति शास्त्र के ज्ञाता ।

(च) कूटनीतिज्ञ—कूटनीति के जानकार ।

(छ) आसिन्धु हिमालय—सिन्धु से हिमालय तक ।

(ज) आपादमस्तक—पैर से सिर तक ।
(झ) प्रशंसनीय—प्रशंसा करने योग्य ।
(ञ) विज्ञानवेत्ता—विज्ञान का जानकार ।
(ट) द्रुतगामी—तेज चलनेवाला ।
(ठ) निन्दनीय—निन्दा करने योग्य ।

वाक्यांश का पद्

(क) इतिहास जाननेवाला—इतिहासज्ञ ।
(ख) आकाश में गमन करनेवाला—खग ।
(ग) भुजा के बल से चलनेवाला—भुजग, भुजंग, भुजंगम ।

(ख) पद का खण्डवाक्य और खण्डवाक्य का पद

पद् का खण्डवाक्य

(क) शैव—जो शिव का उपासक है ।
(ख) वैष्णव—जो विष्णु का उपासक है ।
(ग) शाक्त—जो शक्ति की उपासना करता है ।
(घ) दार्शनिक—जो दर्शन शास्त्र जानता है ।
(ङ) आजानुबाहु—जाँघों तक जिसकी भुजाएँ फैली हैं ।
(च) बुद्धिमान्—जिसके पास बुद्धि है ।
(छ) विधुरा—जिस स्त्री के पति नहीं है ।
(ज) दयालु—जो दया से भरा है ।
(झ) महाशय—जिसका आशय महान् है ।

खण्ड वाक्य का पद्

(क) जो सुख देता है—सुखद ।
(ख) जो अपने देश का है—स्वदेशी ।
(ग) जिसके पास विद्या है—विद्वान्
(घ) जो दूसरे का उपकार नहीं मानता—कृतघ्न ।
(ङ) जो शत्रु का नाश करता है—शत्रुघ्न ।
(च) जो अन्धकार का नाश करता है—तमोघ्न ।

(ग) वाक्यांश का खण्डवाक्य और खण्डवाक्य का वाक्यांश

वाक्यांश का खण्डवाक्य

(क) उसके वहाँ पहुँचते ही—जब वह वहाँ पहुँचता है ।

(ख) मेरे आने पर—जब मैं आया या आऊँगा ।

(ग) कल्पना से—जो कल्पना के बाहर है ।

(घ) सरस्वती का पुत्र—जो सरस्वती का पुत्र है ।

खण्डवाक्य का वाक्यांश

(क) जब वसन्त ऋतु समाप्त होगा—वसन्त ऋतु के समाप्त होने पर ।

(ख) जो घमण्ड करता है—घमण्ड करनेवाला ।

(ग) जिसे बल और कौशल है—बल-कौशलवाला ।

अभ्यास

(१) निम्नलिखित पदों को वाक्यांश और खण्डवाक्य दोनों में परिणत करें—कृतज्ञ, स्वदेशी, वैयाकरण, शास्त्री, जितेन्द्रिय, नास्तिक, अनिर्वचनीय ।

(२) निम्नलिखित वाक्यांशों या खण्ड वाक्यों का एक-एक पद बनाइये—जो आया न हो । परिश्रम के बिना । जिसकी आशा न की गयी हो । जिसकी आयु कम हो । जो सूर्य को न देख सको । शुरू से अन्त तक । सिर से पैर तक । वह जिसे शीघ्र सोचने की शक्ति है । वह उपकार जो किसी उपकार के बदले में हो । जिसका वर्णन नहीं किया जा सके । जिसकी बोली मीठी हो । जो खाने के योग्य हो । जिसकी भुजा बड़ी है । जो तीनों गुणों से परे हो । आँखों के सामने नहीं । वह बात जो दुहरायी जाय । जो सुनने में अच्छा लगे ।

वाक्य-संकोचन और वाक्य-सम्प्रसारण

अर्थ में किसी तरह का अन्तर पैदा किये बिना कई पदों से बने वाक्य के भावों को कम-से-कम पदों के द्वारा अभिव्यक्त करने की रीति को वाक्य-संकोचन-विधि कहते हैं और ठीक इसके विपरीत कम पदों के बने वाक्य के भाव को अधिक स्पष्ट करने के लिए उसे अनेक पदों के द्वारा अभिव्यक्त करने की रीति को वाक्य-सम्प्रसारण विधि कहते हैं ।

(क) वाक्य-संकोचन-विधि

अर्थ में किसी प्रकार का अन्तर पैदा किये बिना किसी वाक्य को संकुचित करने की भिन्न-भिन्न रीतियाँ या विधियाँ प्रयोग में लायी जा सकती हैं। यहाँ दो प्रधान रीतियाँ या विधियाँ दर्शायी जाती हैं—

वाक्य में युक्त कई समापिका क्रियाओं का परिवर्त्तन असमापिका या पौर्वकालिक क्रिया में करने से वाक्य संकुचित किया जा सकता है; जैसे—

(क) विनोद ने आम के पेड़ों को सींचा और बाजार चला गया। विनोद आम के पेड़ों को सींचकर बाजार चला गया।

(ख) राजेश्वर सड़क पर गया और राज-मजदूर को बुलाया—राजेश्वर ने सड़क पर जाकर राज-मजदूर को बुलाया।

(२) आनुषंगिक वाक्यांश या अनेक पदों में स्थान पर एक समस्त पद, प्रत्ययान्त या अल्पपद का प्रयोग कर वाक्य को संकुचित किया जा सकता है; जैसे—

(क) जैसा राजेश्वर गंभीर प्रकृति का बालक है, वैसा युगेश्वर गंभीर प्रकृति का बालक नहीं—युगेश्वर-राजेश्वर जैसा गंभीर प्रकृति का बालक नहीं है।

(ख) जैसा काम किया वैसा फल मिला—जैसी करनी वैसा फल।

(ग) जो पीड़ा से व्याकुल है उसकी सेवा करो—पीड़ित की सेवा करो।

(घ) शंकर के तीन नेत्र हैं—शंकर भगवान् त्रिनेत्र हैं।

(ङ) मेघनाद ने इन्द्र पर विजय पायी थी—मेघनाद इन्द्रजित् था।

(च) लक्ष्मण ने इन्द्रियों को वश में किया था—लक्ष्मण जितेन्द्रिय थे।

(छ) सीता के नेत्र मृग के नेत्रों के समान थे—सीता मृगलोचना थी।

(ख) वाक्य-सम्प्रसारण-विधि

वाक्य-संकोचन-विधि के विपरीत नियमों से वाक्य का सम्प्रसारण किया जा सकता है। यहाँ इस बात की ओर ध्यान देना चाहिए कि वाक्य-सम्प्रसारण में अनावश्यक पदों का प्रयोग नहीं हो और किसी एक वाक्य में दो पौर्व-कालिक क्रियाएँ प्रयुक्त न हों। वाक्य-सम्प्रसारण के कुछ उदाहरण ये हैं—

(क) मोहन दार्शनिक है—मोहन दर्शनशास्त्र का ज्ञाता है।

(ख) टहलना स्वास्थ्यप्रद है—टहलने से स्वास्थ्य-लाभ होता है।

(ग) परिश्रमी को पुरस्कार दो—जो परिश्रमी है उसे पुरस्कार दो।

(घ) वहाँ का दृश्य नेत्ररंजक था—वहाँ का दृश्य नेत्रों को रंजन करनेवाला था।

अभ्यास

(१) निम्नलिखित वाक्यों का विस्तार करें—यह कार्य दुष्कर है। वह कृतघ्न है। वह छिद्रान्वेषी है। वह कुशाग्र बुद्धि है। आकाश असीम है। वह वैष्णव है। यह कार्य दुर्निवार्य है। उस बात से उसे अनिर्वचनीय आनन्द मिला। यह संसार क्षणभंगुर है। यह आस्तिक है। वह नास्तिक है।

(२) निम्नलिखित वाक्यों को संकुचित करें—

जिस व्यक्ति का चरित्र अच्छा होता है, वह आदर के योग्य होता है। दशों दिशाओं को जीतनेवाला रावण शिव की उपासना करता था। वह विष्णु की उपासना करनेवालों का संहार करनेवाला था। उसका पुत्र मेघ की भाँति गरजता था, जिसने इन्द्र पर विजय प्राप्त की थी।

वाक्यों का संयोजन और विभाजन

अर्थ में बिना किसी तरह का भेद पैदा किये ही समापिका क्रिया पौर्वकालिक क्रिया में बदलने से, वाक्यों के उभयनिष्ठ या मिलते-जुलते शब्दों को एक बार ही प्रयुक्त करने से, अव्यय के प्रयोग से, वाक्यों के शब्दों को आवश्यकता के अनुसार उलट-फेर करने से और वाक्यों के पद, वाक्यांश या आनुषंगिक वाक्य में बदलने से वाक्यों का संयोजन होता, जिसके कुछ उदाहरण ये हैं—

(क) समापिका क्रिया को पौर्वकालिक क्रिया में बदलने से और वाक्यों के मिलते-जुलते शब्दों को एक बार प्रयुक्त करने से; जैसे—

विभाजितवाक्य—श्री निवास पटना शहर के प्रतिष्ठित डाक्टर हैं। श्री निवास ने कई असाध्य कहलानेवाले रोगों को दूर भगाया है। श्री निवास ने अगणित व्यक्तियों को जीवन दिया है।

संयोजित वाक्य—पटना शहर के प्रतिष्ठित डाक्टर श्री निवास ने कई असाध्य कहलानेवाले रोगों को दूर भगाकर अगणित व्यक्तियों को जीवन दिया है।

(ख) अव्यय के प्रयोग से; जैसे—

विभाजित वाक्य—मैं 'घनश्याम प्रेस' गया। वहाँ मुझे ज्ञात हुआ कि प्रेस के मैनेजर बाहर गये हुए हैं।

संयोजित वाक्य—जब मैं 'घनश्याम प्रेस' गया तब मुझे ज्ञात हुआ कि प्रेस मैनेजर बाहर गये हुए हैं।

विभाजित वाक्य—राम निर्धन नहीं है। वह निरभिमान है। उसकी प्रकृति बहुत सरल है।

संयोजित वाक्य—यद्यपि राम निर्धन नहीं है तथापि निरभिमान है और उसकी प्रकृति बहुत सरल है।

(ग) वाक्यों को पद, वाक्यांश आदि में बदल कर उलट-फेर से; जैसे—

विभाजित वाक्य—सम्राट् अशोक मगध के राजा थे। उनकी राजधानी पाटलिपुत्र थी। पाटलिपुत्र गंगा और सोन के संगम पर बसा हुआ था। अब भी उस प्राचीन नगरी का भग्नावशेष कुम्हरार नामक स्थान में पाया जाता है। कुम्हरार गुलजारबाग स्टेशन के निकट है।

संयोजित वाक्य—गंगा और सोन के संगम पर बसा हुआ पाटलिपुत्र मगध के सम्राट् अशोक की राजधानी था, जिसका भग्नावशेष गुलजारबाग स्टेशन के निकट कुम्हरार नामक स्थान में पाया जाता है।

वाक्य-विभाजन

वाक्य-संयोजन के विपरीत नियमों के अनुसार मिलित वाक्यों को कई वाक्यों में परिवर्त्तित किया जा सकता है—

मिलित (मिश्रित) वाक्य	विभक्त वाक्य
(क) जंगल में हरिण के चोकरी भरते ही सिंह के मुँह में पानी भर आया।	जंगल में हरिण चौकड़ी भरने लगा। सिंह के मुख में पानी भर आया।
(ख) मयूर की वाणी सुनते ही साँप भय से काँपकर वायु की गति से सरकने लगा।	साँप ने मयूर की वाणी सुनी। वह भय से काँप उठा। वह वायु की गति से सरकने लगा।
(ग) प्रभात होने पर दीपक की शिखा मन्द हो गयी।	प्रभात हो गया। दीपक की शिखा मन्द हो गयी।

अभ्यास

(१) निम्नलिखित वाक्यों को टुकड़े-टुकड़े कर कई सरल वाक्यों में परिणत करें—

भारत-प्रसिद्ध शिकारी और 'शिकार' लेखक श्री राम शर्मा एक आठ फीट लंबे और हिंस्र तथा बलवान बाघ को मार कर नगर में लाये थे। उनके चारों पुत्रों में सबसे बड़े का विवाह हुआ है। सूर्यास्त होने पर सत्यव्रत घर आ गया।

(२) निम्नलिखित वाक्यों को मिलाकर एक-एक वाक्य बनायें—

(क) सूर्योदय हुआ। सरोवर में कमल खिले। फूलों पर भौंरे मँड़राने लगे। कोयल गाने लगी।

(ख) वह धनी है। वह सुखी नहीं है। वह असन्तोषी है।

(ग) चन्द्रोदय हुआ। कुमुद खिले। चकोर और चकोरी वियुक्त हो गये।

———

वाक्यों का परिवर्त्तन

स्वरूप के विचार से वाक्य के तीन प्रकार हैं—सरल, जटिल और यौगिक। इन तीनों प्रकारों के वाक्य को एक दूसरे में परिवर्त्तित किया जा सकता है।

(क) सरल वाक्य से जटिल वाक्य

नियम—सरल वाक्य में प्रयुक्त विधेय-पूरक; विधेय-विशेषण, विधेय-विस्तार और उद्देश्य-वर्द्धक विशेषण के रूप में आये हुए पद या पद समूह को वाक्य के रूप में परिवर्त्तित कर 'जो—वह'; 'यदि-तो', 'जब-तब' आदि अव्ययों के द्वारा मिलाने से जटिल या मिश्र वाक्य बनता है। पद-विन्यास के अनुसार कभी-कभी नित्य सम्बन्धी शब्द लुप्त भी हो सकते हैं।

(क) सरल वाक्य—पटना शहर के निवासी श्री केशव देव शर्मा बहुत योग्य अध्यापक हैं।

जटिल वाक्य—श्री केशव देव शर्मा जो पटना शहर के निवासी हैं, बहुत योग्य अध्यापक हैं।

सरल वाक्य—वसन्त ऋतु में उपवन में भाँति-भाँति के फूल खिलते हैं।

जटिल वाक्य—जब वसन्त ऋतु आती है तब उपवन में भाँति-भाँति के फूल खिलते हैं।

(ख) जटिल वाक्य से सरल वाक्य

नियम—जटिल वाक्य में प्रयुक्त आनुषंगिक या सहायक वाक्य को वाक्यांश या पदसमूह के रूप में बदलकर नित्य सम्बन्धी या अन्य योजक शब्दों को लोप करने से सरल वाक्य बनता है। ऐसा करने में यह स्मरण रखना चाहिए कि काल और अर्थ में कठिनाई न हो।

(क) जटिल वाक्य—जो केवल अपने कर्मों से भाग्य का निर्माण करता है वह कर्मवीर कहलाता है।

सरल वाक्य—केवल अपने कर्मों से भाग्य का निर्माण करने वाला कर्मवीर कहलाता है।

(ख) जटिल वाक्य—जिन्हें धन है वे समाज में आदृत होते हैं।

सरल वाक्य—धनी समाज में आदृत होते हैं।

(ग) यौगिक वाक्य—यदि आप कहते हैं कि इस संसार में स्वर्ग-सुख की प्राप्ति करें तो अपने स्वास्थ्य की रक्षा कीजिए।

सरल वाक्य—इस संसार में स्वर्ग-सुख की प्राप्ति के लिए आप अपने स्वास्थ्य की रक्षा कीजिए।

(ग) सरल वाक्य से यौगिक वाक्य

नियम—सरल वाक्य के किसी वाक्यांश को एक सरल वाक्य में अथवा असमापिका या पौर्वकालिक क्रिया को समापिका क्रिया में परिवर्तित कर 'और', 'एवं', 'परन्तु'. 'किन्तु', 'इसलिए' आदि योजकों के प्रयोग से यौगिक वाक्य बनता है।

(क) सरल वाक्य—वह धन के अभिमान से अकड़कर चलता है।

यौगिक वाक्य—उसे धन का अभिमान है, इसलिए अकड़कर चलता है।

(ख) सरल वाक्य—सुन्दर होने के कारण राम सब की आँखों का तारा है।

यौगिक वाक्य—राम सुन्दर है, इसलिए सबकी आँखों का तारा है।

(घ) यौगिक वाक्य से सरल वाक्य

नियम—यौगिक वाक्य में किसी स्वतंत्र वाक्य को वाक्यांश में या किसी समापिका क्रिया को पौर्वकालिक क्रिया में बदलकर यौगिक वाक्य से सरल वाक्य बनाया जा सकता है। यौगिक वाक्य के अव्यय अथवा योजक पदों को सरल वाक्य में लुप्त कर दिया जाता है।

(क) यौगिक वाक्य—राजेश्वर ने युगेश्वर को पुकारा और स्कूल चला गया।

सरल वाक्य—राजेश्वर, युगेश्वर को पुकार कर स्कूल चला गया।

(ख) यौगिक वाक्य—गोविन्द ने आँगन में नाली बनायी और पानी बाहर निकाला।

सरल वाक्य—गोविन्द ने आँगन में नाली बनाकर पानी बाहर निकाला।

(ग) यौगिक वाक्य—सूर्योदय हुआ और तारे अदृश्य होने लगे।

सरल वाक्य—सूर्योदय होने पर तारे अदृश्य होने लगे।

(ङ) जटिल वाक्य से यौगिक वाक्य

नियम—जटिल वाक्य के अंग वाक्य (आनुषंगिक वाक्य) को एक स्वतंत्र वाक्य में बदलने से और उनके नित्य सम्बन्धी दोनों शब्दों को लोप करने से तथा 'नहीं', 'तो', 'किन्तु', 'अन्यथा' आदि संयोजक, विभाजक अव्ययों का प्रयोग करने से यौगिक वाक्य बनता है।

(क) जटिल वाक्य—यदि तुम कल्याण की कामना करते हो तो अध्ययन में दत्तचित्त हो जाओ।

यौगिक वाक्य—तुम अपने कल्याण की कामना करते हो, इसलिए अध्ययन में दत्तचित हो जाओ।

(ख) जटिल वाक्य—कर्मवीर जो कुछ बोलता है, वह कर दिखलाता है।

यौगिक वाक्य—कर्मवीर बोलता है और कर दिखलाता है।

(च) यौगिक वाक्य से जटिल वाक्य

नियम—यौगिक वाक्य में स्वतंत्र वाक्यों में से एक के सिवा शेष को आनुषंगिक वाक्य में बदलने से जटिल वाक्य बनता है। इस स्थिति में यौगिक वाक्य में प्रयुक्त संयोजक या विभाजक अव्ययों को नित्य सम्बन्धी अव्ययों में बदलना पड़ता है।

(क) यौगिक वाक्य—सूर्योदय हुआ और किरणों में हिमकण मोती-से चमकने लगे।

जटिल वाक्य—ज्योंही सूर्योदय हुआ त्योंही किरणों में हिमकण मोती-से चमकने लगे।

(ख) यौगिक वाक्य—कबीरदास ने अक्षर-ज्ञान की प्राप्ति नहीं की थी परन्तु चरम कोटि के प्रत्युत्पन्नमति थे ।

जटिल वाक्य—यद्यपि कबीरदास ने अक्षर-ज्ञान का प्राप्ति नहीं की थी तथापि चरम कोटि के प्रत्युत्पन्नमति थे ।

अभ्यास

निम्नलिखित सरल वाक्यों को जटिल वाक्यों में परिणत करें—

(क) परिश्रमी विद्यार्थी परीक्षोत्तीर्ण होते हैं । (ख) भोंदू विद्यार्थी परीक्षा में अनुत्तीर्ण होते हैं । (ग) उद्योगी व्यक्ति सफल मनोरथ होते हैं । (घ) उसने अपना अपराध नहीं स्वीकार किया ।

(२) निम्नलिखित जटिल वाक्यों को सरल वाक्यों में परिणत करें—

(क) जो बुद्धिमान व्यक्ति है वह ऐसा ही प्रशंसनीय काम करता है । (ख) जो व्यक्ति अपने जीवन में नियमितता नहीं बरतते हैं वे प्रायः अस्वस्थ होते हैं । (ग) जब व्यक्ति विपत्तिग्रस्त हो तब उसे धैर्य से काम लेना चाहिए ।

(३) निम्नलिखित सरल वाक्यों को संयुक्त वाक्यों में परिणत करें—

(क) सूर्योदय होते ही चिड़ियाँ अपने-अपने घोंसले से निकल कर दानों की खोज में चलीं ।

(ख) सुरेश ने पटना जाकर दो कार्य किये । (ग) भवेश सोनपुर से दो मयूर खरीद कर चला आया ।

(४) निम्नलिखित संयुक्त वाक्यों को सरल वाक्यों में परिणत करें—

(क) गंगा नदी हिमालय पहाड़ से निकलती है और बंगाल की खाड़ी में गिरती है । (ख) यदि वर्षा नहीं होगी तो धान नहीं उपजेगा ।

(५) निम्नलिखित जटिल वाक्यों को संयुक्त वाक्यों में परिणत करें—

(क) मैंने जो मयूर खरीदे थे वे सब नाचने लगे ।

(ख) सभी दार्शनिक व्यक्तियों का विचार है कि आत्मा अमर है । (ग) जो मयूर मैंने सोनपुर में खरीदा था वह नाचता है ।

(६) निम्नलिखित संयुक्त वाक्यों को जटिल वाक्यों में परिणत करें—

(क) वह बहुत निरभिमान है, इसलिए सभी से सरलतापूर्वक मिलना अपनी महत्ता के खिलाफ नहीं समझता है। (ख) वह बहुत अस्वस्थ है इसलिए पटना जाकर डाक्टर श्री शिवनन्दन प्रसाद से नहीं मिल सकता। (ग) युगेश्वर बहुत चंचल है इसलिए किसी काम को वह शीघ्र कर लेना चाहता है।

वाच्य-परिवर्तन

(सकर्मक क्रिया)

कर्त्तृवाच्य	कर्मवाच्य
(१) रामानन्द गणित सीखता है।	रामानन्द से गणित सीखा जाता है।
(२) विनय रोटी खाता है।	विनय से रोटी खायी जाती है।
(३) इन्दिरा कुमारी दूध पीती है।	इन्दिरा कुमारी से दूध पीया जाता है।
(४) अनिल पेड़ काटता है।	अनिल से पेड़ काटा जाता है।
(५) गोविन्द लीची खायेगा।	गोविन्द से लीची खायी जायेगी।

(अकर्मक क्रिया)

कर्त्तृवाच्य	भाववाच्य
(१) रामानन्द मुस्कुराता है।	रामानन्द से मुस्कुराया जाता है।
(२) विनय रोता है।	विनय से रोया जाता है।
(३) इन्दिरा कुमारी सोती है।	इन्दिरा कुमारी से सोया जाता है।
(४) अनिल आ रहा है।	अनिल से आया जाता है।
(५) गोविन्द जाता है।	गोविन्द से जाया जाता है।

विविध उदाहरण

कर्त्तृवाच्य	कर्मवाच्य
(१) सुरेश प्रसाद एक आम खरीदेगा।	सुरेश प्रसाद से एक आम खरीदा जायेगा।
(२) मोहन चार रोटियाँ खायेगा।	मोहन से चार रोटियाँ खायी जायेंगी।
(३) इन्दिरा कुमारी एक लीची खा गयी।	इन्दिरा कुमारी से एक लीची खायी गयी।
(४) विजय पत्र पढ़ चुका है।	विजय से पत्र पढ़ा जा चुका है।
(५) गोविन्द चार आम खा गया।	गोविन्द से चार आम खाये गये।

(क) द्विकर्मक क्रियाओं के वाच्य-परिवर्त्तन में प्रधान कर्म को कर्त्ताकारक की जगह रक्खा जाता है और गौण कर्म का रूप नहीं बदलता; जैसे—राजेश्वर विनयकुमार को इतिहास पढ़ाता है। (इस कर्त्तृवाच्य में 'इतिहास' प्रधान कर्म है और 'विनयकुमार' गौण कर्म है।) इसका कर्मवाच्य होगा—राजेश्वर के द्वारा विनय कुमार को इतिहास पढ़ाया जाता है।

(ख) 'ने' चिह्नसहित और 'को' चिह्नरहित कर्मवाच्य को कर्म के बाद 'को' जोड़कर भाववाच्य में बदला जा सकता है; जैसे—

कर्मवाच्य	भाववाच्य
(१) सुधाकुमारी ने रोटी खायी थी।	सुधाकुमारी ने रोटी को खाया था।
(२) विनय ने मयूर खरीदा था।	विनय ने मयूर को खरीदा था।
(३) अमरेश ने मोरनी खरीदी है।	अमरेश ने मोरनी को खरीदा है।

अभ्यास

निम्नलिखित वाक्य का वाच्य-परिवर्त्तन करें—

राजेश्वर मयूर को पालता है। इन्दिराकुमारी उन्हें रोटी खिलाती है। युगेश्वर उन्हें पानी पिलाता है। वह हँसता है। वह पुस्तकें पढ़ता है। देवता ने बोधिसत्व की भूरि-भूरि प्रशंसा की। जो व्यक्ति धर्म से अनभिज्ञ हैं, संयम से अपरिचित हैं, मैं वैसे सोते हुए व्यक्तियों में जगता हूँ और जिन्होंने राग-द्वेष पर विजय पा ली है, विद्या जिनकी चेरी है, मैं वैसे जगते हुए व्यक्तियों में सोता हूँ।



उक्ति-भेद

जब बोलनेवाले की उक्ति को उसी के शब्दों में कहा जाय तब उसे प्रत्यक्ष उक्ति कहते हैं और जब अपने शब्दों में प्रकट किया जाय तब उसे परोक्ष उक्ति कहते हैं। प्रत्यक्ष उक्ति " " के बीच में होती है।

(१) प्रत्यक्ष—विनय ने कहा—"पृथ्वी चलती है।"

परोक्ष—विनय ने कहा कि पृथ्वी चलती है।

(२) प्रत्यक्ष—मोहन ने पूछा—"आप कहां रहते हैं ?"

परोक्ष—मोहन ने उनके रहने के बारे में पूछा।

(३) प्रत्यक्ष—राम ने कहा था—"मैं रोटी खाता हूँ।"

परोक्ष—राम ने अपनी रोटी खाने की बात कही थी। राम ने कहा था कि वह रोटी खाता था।

(४) प्रत्यक्ष—पुत्र ने उसे कहा—"अरविन्द की किताब देखूँ।"

परोक्ष—पुत्र ने उसे अरविन्द की किताब देखने का निवेदन किया।

(५) प्रत्यक्ष—पिता ने उसे आशीर्वाद दिया—"दीर्घायु हो।"

परोक्ष—पिता ने उसे दीर्घायु होने के लिए आशीर्वाद दिया।

अभ्यास

निम्नलिखित वाक्यों को परोक्ष उक्ति में बदलें—

शंकराचार्य ने मण्डन मिश्र से पूछा—"गृहस्थ धर्म किसे कहते हैं ?"

मण्डन मिश्र ने उत्तर दिया—"सर्वप्रथम आप संन्यास धर्म की व्यवस्था करें।"

आज अचानक मैंने अपनी आत्मा से पूछा—"आखिर, तू चाहती क्या है ?"

वह बोली—"मैं ज्ञान चाहती हूँ।"

मैंने प्रश्न किया—"किसका ज्ञान चाहती है तू ?"

उसने उत्तर दिया—"सब……वह सब, जो है और जो नहीं है।"

मैंने फिर पूछा—"इस ज्ञान में तेरी सिद्धि क्या है ?"

वह वैसे ही सरलता से बोली—"मैंने इन सब से—जो मुझे भीतर और बाहर घेरे हुए हैं—मुक्त होना चाहती हूँ।"

मैंने कहा—"इतना ओढ़कर भी क्या तू मुक्त हो सकेगी ?"

वह बोली—"क्यों, ज्ञान बोझ है क्या ? नहीं, नहीं, वह तो त्राता है, मुक्तिदाता है वैसे ही, जैसे ऊष्मा छिलके में बन्द बीज को, आनन्द कण्ठ में बन्द गीत को और करुणा हृदय में बन्द कवि के उद्‌गार को उन्मुक्त करती है।"

×

एक वाक्य के बदले कई वाक्य

वाक्य-वियोजन

वाक्य-संयोजन का उलटा वाक्य-वियोजन है, इसलिए वाक्य-संयोजन के नियमों को विपरीत भाव से वाक्य में लाकर वियोजन किया जाता है, जैसे—

(१) एक वाक्य—आँधी खतम होने के बाद ही बड़े जोर की वर्षा होने लगी।

कई वाक्य—आंधी खतम हो गई। फिर बड़े जोर की वर्षा होने लगी।

(२) एक वाक्य—पटने के अनुभवी चिकित्सक श्री चतुर्वेदी जी ने मेरा उपचार किया था।

कई वाक्य— पटना के चिकित्सक श्री चतुर्वेदी जी अनुभवी हैं। उन्होंने मेरा उपचार किया था।

(३) एक वाक्य—प्रभात होते ही रानी निवासी श्री रुद्रनारायण झा निपनियाँ गाँव में कवि श्री भागवत प्रसाद सिंह के पास पहुँचे।

कई वाक्य—प्रभात हो गया। रानी निवासी श्री रुद्रनारायण झा निपनियाँ गाँव में कवि श्री भागवत प्रसाद सिंह के पास पहुँचे।

(४) एक वाक्य—गुरुकुल कांगड़ी के औषधालय में श्री रमाशंकर सिंह शाम होते ही पहुँच गये।

कई वाक्य—शाम हो गयी। श्री रमाशंकर सिंह गुरुकुल कांगड़ी के औषधालय में पहुँच गये।

अभ्यास

निम्नलिखित वाक्यों का वाक्य-परिवर्त्तन करें—

(क) राम और श्याम पुस्तकें पढ़ते हैं।

(ख) गायें घास खाती हैं।

(ग) कान्ता कुमारी से कपड़ा सीया जाता है।

(घ) अमरेश ने एक गीत गाया।

(ङ) रवीन्द्र ने चार लीचियाँ खायी थीं।

(च) सीता ने चार धोतियाँ खरीदी थीं।

चिह्न-विचार

विराम-चिह्न

पद, वाक्यांश या वाक्य का उच्चारण करते समय शब्दों और वाक्य में परस्पर सम्बन्ध बतलाने के निमित्त बीच-बीच में कुछ देर ठहरना आवश्यक होता है, इस ठहराव को विराम कहते हैं। पद, वाक्यांश या वाक्य लिखते समय जहाँ ठहराव की जरूरत होती है, वहाँ कुछ चिह्नों का प्रयोग होता है। ये चिह्न विराम-चिह्न कहलाते हैं। जबतक विराम-चिह्नों का प्रयोग नहीं होता तबतक वाक्य का अर्थ स्पष्टतया समझ में नहीं आता। इसलिए वाक्य-रचना के अभ्यास के साथ-साथ विराम-चिह्न के उचित प्रयोग का अभ्यास आवश्यक है। हिन्दी के अधिकतर विराम-चिह्न अंग्रेजी से लिये गये हैं। हिन्दी के प्रधान विराम-चिह्न ये हैं—

(१) अल्प विराम ,
(२) अर्द्ध विराम ;
(३) पूर्ण विराम ।
(४) योजक -
(५) निर्देशक —
(६) प्रश्न चिह्न ?
(७) विस्मयादि चिह्न !
(८) क्षेपक————
(९) लोप चिह्न × × × ※ या ......
(१०) रिक्त चिह्न......
(११) कोष्ठक [ ] { } ( )
(१२) उद्धरण-चिह्न " " या ' '
(१३) त्रुटि-चिह्न ∧
(१४) टिप्पणी सूचक ※ या ※ या ❋
(१५) अवतारक „ „
(१६) समाप्ति सूचक --०— या — या —x—
(१७) तुल्यता सूचक =
(१८) अपूर्ण विराम (दीर्घ) :
(१९) लाघव चिह्न ०

१· अल्प विराम (,)

'एक' उच्चरित होने में जितनी देर लगती है, अल्प विराम में उतनी ही देर ठहरना चाहिए। इसका प्रयोग निम्नलिखित स्थानों पर होता है—

(क) जब कई शब्दों का प्रयोग युग्म रूप में या सामासिक रूप में हो तो हर युग्म या सामासिक शब्द के बाद; जैसे—हर्ष-शोक, दु:ख, विरह-मिलन, उत्थान-पतन ये सभी की जिन्दगी में आते हैं।

(ख) एक ही शब्द-भेद के तीन या अधिक शब्दों के मध्य में समुच्चयबोधक का जब प्रयोग हो तब अन्तिम शब्द को छोड़कर सर्वत्र; जैसे--द्वारिका, रामचन्द्र, श्याम, मोहन, वागेश्वर और सुखदेव प्रसाद बाजार गये।

(ग) यदि समुच्चयबोधक से जोड़ गये दो शब्दों पर विशेष जोर देना हो तो; जैसे—यह मयूर सुन्दर है, अतः कीमती है।

(घ) यदि शब्दों के बीच से समुच्चयबोधक का लोप करना हो तो; जैसे—मैं अबोध बालक, इन बातों को क्या समझूँ ?

(ङ) अन्तिम समानाधिकरण को छोड़कर शेष सभी समानाधिकरण शब्दों के बाद; जैसे—मिथिला के राजा, विदेह, प्रतापी और परोपकारी जनक।

(च) बहुत लम्बे उद्देश्य के बाद, जैसे—कानों के पर्दे फाड़नेवाला, तोप का घोर धमाका, सुनसान वन में गूँज उठा।

(छ) सम्बोधन शब्दों के बाद; जैसे—हे राम, मेरा अन्तिम प्रणाम लो।

(ज) किसी की उक्ति के पहले, जैसे—द्वारिकानाथ ने कहा, "मैं भागलपुर जाऊँगा।"

(झ) 'यह' या 'वह' के लोप होने पर, जैसे—मैं कब पटना जाऊँगा, कह नहीं सकता।

(ञ) कई क्रिया-विशेषण या विशेषण-वाक्यांश हों तो अन्तिम के सिवा सभी के बाद; जैसे—उसने सदा ही जोर-जोर से, चिल्ला-चिल्लाकर उसको सावधान किया था।

(ट) छन्दों में यति, अंकों में सैकड़े और उसके पश्चात् प्रत्येक दूसरे अंक तथा खण्ड उदाहरण के बाद; जैसे—

छन्द—"जाति न पूछो साधु की, पूछि लीजिये ज्ञान ।
मोल करो तरवारि का, पड़ा रहन दो म्यान ।"

अंक—२२, ३५, ५७६ । संज्ञा—जैसे, गाय ।

(ठ) यदि संज्ञा-वाक्य और मुख्य वाक्य के बीच समुच्चयबोधक का लोप हो तो; जैसे—आत्मा अमर है, यह सभी दार्शनिक मानते हैं ।

(ङ) जब दो परस्पर अन्वित पदों को पद, वाक्यांश या खण्डवाक्य बीच में आकर अलग-अलग कर दें तो उनके दोनों ओर; जैसे—मेरी यह पुस्तक, मैं दावे के साथ कहता हूँ, हिन्दी में समादृत होगी ।

(ढ) अधिकरण अव्यय में युक्त वाक्य के पहले; जैसे—सुख और दुःख का सम्बन्ध जीवन में क्षणिक ही नहीं, वरन् चिरन्तन है ।

(ण) अन्यत्र अल्प ठहराव की जगह; जैसे—श्री कृपानारायण मिश्र, षष्ठ वर्ष हिन्दी, लंगट सिंह कॉलेज, मुजफ्फरपुर ।

अभ्यास

निम्नलिखित वाक्यों में अल्प विराम का प्रयोग करें—

(क) वर्ष भर में छह ऋतुएँ बारी-बारी से आती हैं–ग्रीष्म, शरत्, हेमन्त, वर्षा, शिशिर और वसन्त । श्री आशुतोष झा, श्री रामरीझन रसूलपुरी और श्री 'जीवन' जी पटना गये हैं । यह छाता टिकाऊ है अतः मूल्यवान् है । वह युवक इन बातों को क्या जानेगा ? हिन्दी के कवि, कहानीकार और नाटककार श्री आरसी प्रसाद सिंह आजकल लखनऊ में हैं ।

(ख) हे राम तुम्हारा वंशजात घर छोड़ चला यह अर्द्धरात ।

(ग) अमरेश ने कहा "मैं एक जूता खरीदूँगा ।"

(घ) संसार क्षणिक है यह बुद्ध का मत है ।

(ङ) तेरा साईं तुज्झ में ज्यों पुहपन में बास ।
कस्तूरी का मिरग ज्यों फिर-फिर ढूँढ़े घास ॥



२. अर्द्धविराम (;)

अल्प विराम की अपेक्षा अर्द्धविराम में अधिक देर ठहरना चाहिए। इसका प्रयोग निम्नलिखित स्थितियों में होता है—

(क) किसी नियम के बाद और उदाहरणसूचक शब्द—जैसे; यथा, आदि शब्द के पहले, जैसे—(इसका उदाहरण यही है।)

(ख) एक ही मुख्य वाक्य पर निर्भर कई आश्रित वाक्य के मध्य में; जसे—देश के हर साहित्यकार को यह विचारना चाहिए कि हिन्दी में पारिभाषिक शब्दों की कैसे वृद्धि हो; अहिन्दी प्रान्तों में हिन्दी का प्रचार किस ढंग से हो; हिन्दी के प्रति लोगों में कैसे प्रेम उत्पन्न हो और भाषा के मार्ग की कठिनाइयाँ कैसे दूर हों।

(द) संयुक्त वाक्य का प्रधान वाक्य अर्द्धविराम के द्वारा अलग किया जाता है: जैसे—सरकार सब कुछ कर सकती है; अन्यायी और दुष्टों का दमन कर सकती है; जितना सेना चाहे रख सकती है; कर वसूल सकती है; देश को उन्नति की चोटी पर चढ़ा सकती है।

(घ) अन्त में समुच्चयबोधक से जोड़े गये पूर्ण वाक्य के प्रत्येक खण्ड-वाक्य के बाद; जैसे—सुबह हुई; चिड़ियाँ चहकने लगीं; सूर्य की लाली चारों ओर चमक उठी; कमल खिल गये; ओस-कण मोती की भाँति दमकने लगे; और धरती प्रकाशित होने लगी।

अभ्यास

निम्नलिखित वाक्यों में अर्द्धविराम का प्रयोग करें—

(क) अकर्मक क्रिया जब अपने साथ जातीय कर्म लाती है तब सकर्मक हो जाती है; जैसे—सिपाहियों ने कई लड़ाइयाँ लड़ी थीं।

(ख) संसार के हर विज्ञानवेत्ता को यह सोचना चाहिए कि विज्ञान किस रूप में मानवता के लिए कल्याणकर हो सकेगा, वह विश्व के संहार का एक कारण क्यों हो गया है और उससे जीवन के किन-किन क्षेत्रों में कैसे प्रगति होगी।

३. अपूर्ण विराम (दीर्घ) (:)

इस विराम में अर्द्धविराम की अपेक्षा अधिक देर तक (तीन की गिनती तक) ठहरना चाहिए। इससे विसर्ग का भ्रम संभव है। इसलिए इसके बाद एक लकीर (:—) भी खींची जाती है। कथन के कुछ भाग को अलग करके गिनाने या बतलाने में इसका प्रयोग होता है; जैसे—नीचे लिखे वाक्यों को शुद्ध करो :–। शीर्षक में भी इसका उपयोग होता है ; जैसे—कवि 'वियोगी:' एक व्यक्तित्व।

अभ्यास

निम्नलिखित वाक्यों या शीर्षकों में अपूर्ण विराम का प्रयोग करें—

(क) निम्नलिखित वाक्यों को शुद्ध करें—राम रोटी खाया। श्याम ने चार चिड़िएँ देखे।

(ख) कवि आरसी एक व्यक्तित्व

(ख) महाकाव्य तथागत एक समीक्षा



४. पूर्ण विराम (।)

इसका प्रयोग प्रत्येक वाक्य की समाप्ति के बाद होता है; जैसे सत्य बोलना चाहिए। डा० श्री विजय प्रसाद पटना शहर के निवासी हैं। श्री उमेश सिंह कालेजियट स्कूल के अध्यापक हैं। श्री व्रजनन्दन शर्मा राजा साहब के अभिन्न मित्र हैं। श्री कृपा नारायण साह, रामनन्दन बाबू के कम्पाउण्डर हैं।

५. प्रश्न चिह्न (?)

इसका प्रयोग प्रश्नबोधक वाक्य की समाप्ति के बाद होता है; जैसे—तुम कहाँ जाते हो ?

(क) प्रश्नवाचक शब्दों का अर्थ सम्बन्धवाचक-सा हो तो प्रश्नचिह्न का प्रयोग नहीं होगा; जैसे—वे कब आयेंगे, मैं नहीं कह सकता।

(ख) जिस शब्द की शुद्धता में लेखक को सन्देह हो उस शब्द के बाद कोष्ठक में प्रश्न-चिह्न का प्रयोग होता है, जैसे—एक अनुनासिक (?) वर्ण का उदाहरण दीजिये।

अभ्यास

निम्नलिखित वाक्यों में पूर्णविराम और प्रश्न-चिह्न-प्रयोग करें—

राम आया, पुस्तक ली और चला गया, क्या तुम पटना जाओगे।



६· आश्चर्य-चिह्न या विस्मयादि-चिह्न (!)

इसका प्रयोग विस्मयादिबोधक वाक्य या शब्द के अन्त में होता है; जैसे—काश !

(क) तिरस्कार, क्रोध, व्यंग्य, घृणा, ग्लानि, करुणा, शोक, विस्मय आदि मनोविकारों की मात्रा की वृद्धि ज्यों-ज्यों होती है त्यों-त्यों विस्मयादि चिह्न की आवृत्ति होती है और तीन आवृत्तियाँ तक होती हैं; जैसे—धिक्कार ! धिक्कार !! धिक्कार !!!

(ख) प्रश्नवाचक वाक्य यदि विस्मयादि बोधक-सा प्रतीत हो तो आश्चर्य-चिह्न का प्रयोग होता है; जैसे—तुमने यह क्या लिखा !

(ग) यदि कोई शब्द या पद या वाक्यांश या वाक्य किसी असम्भव बात का बोधक और उसके बारे में विस्मय प्रकट किया जाये तो उसके बाद कोष्ठ में आश्चर्य-चिह्न का प्रयोग होता है; जैसे—सर्वव्यापी (!) जवाहरलाल का नाम कौन नहीं जानता ?

अभ्यास

निम्नलिखित वाक्यों में आश्चर्य-चिह्न का प्रयोग करें—

ओह तुम कितने मूर्ख हो यह बात भी नहीं समझ सके यह पत्र क्या तुमने लिखा था।



७. संयोजक या योजक चिह्‌न [-]

इसका प्रयोग दो या दो से अधिक शब्दों को जोड़ने में होता है; जैसे—'मुकुर'-कृत, 'शंकर-विजय'। कुमुद विद्यालंकार-रचित 'तथागत'। किसी-न-किसी प्रकार।

(क) विशेषण और विशेष्य के मध्य में योजक चिह्न का प्रयोग नहीं होना चाहिए; जैसे– विजन वन। श्वेत कमल।

(ख) लिखते समय यदि कोई शब्द या शब्दांश एक पंक्ति में पूर्णतः नहीं लिखा जा सके तो शब्द या शब्दांश के बाद योजक चिह्न प्रयुक्त होता है, जैसे—

वह उनकी कठिनाई और दिक्क- तों को जानता है।

अभ्यास

निम्नलिखित वाक्यों में संयोजक चिह्न का प्रयोग करें—

हमारे जीवन में सुख-दुःख, हर्ष-शोक और विरह-मिलन का सम्मिश्रण होता रहता है। श्री लक्ष्मी नारायण शर्मा 'मुकुर' विरचित 'शब्द छन्द रसालंकार' एक उत्कृष्ट काव्य शास्त्र है।

८. निर्देशक-चिह्‌न (—)

इसका प्रयोग इन अवस्थाओं में होता है—

(क) विषय-विभाग सम्बन्धी शीर्षक के बाद और वार्त्तालाप में वक्ता के बाद; जैसे— सीता—मैं वन जाऊँगी।

(ख) वाक्य के बीच यदि कोई स्वतंत्र पद या वाक्यांश या वाक्य प्रयुक्त हो तो उसके दोनों ओर; जैसे—मेरे स्वामी ने—भगवान उनकी रक्षा करें—विदेश यात्रा की है।

(ग) किसी वस्तु पर जोर देने या बीच में उसका विवरण देने में; जैसे—यह पेन्सिल—जापानी—बड़ी सुन्दर है। मैं हूँ—वैयाकरण—पाणिनि।

(घ) किसी शब्द के समानार्थक शब्द के पूर्व; जैसे—उनकी राय—उनका विचार है कि इस काम को करें।

(ङ) विराम के बदले; जैसे—

तेरी उल्फत की चिनगारी ने जालिम, एक जहाँ फूँका।

इधर चमकी—उधर सुलगी—यहाँ फूँका—वहाँ फूँका।

(च) अकस्मात् ठिठकने या भाव-परिवर्तन की स्थिति में; जैसे—मैं—विचारता हूँ कि आपके दर्शन नहीं होंगे।

(छ) किसी उद्धरण के पूर्व; जैसे—गीता कहती है—"आत्मा अमर है।"

(ज) वाक्य के मध्य में प्रयुक्त किसी स्वतंत्र पद, वाक्यांश या खण्डवाक्य के निर्देशन के लिए; जैसे—वह मनुष्य—उसके विचार से—दुष्ट है।

अभ्यास

निम्नलिखित वाक्यों में निर्देशक चिह्न का प्रयोग करें—

(क) हीरा मैं राजाओं के मुकुट की शोभा बढ़ाता हूँ। कोयला मैं राजाओं और गरीबों दोनों के कामों को सम्पन्न करता हूँ।

(ख) मेरे पति भगवान् उन्हें सद्बुद्धि दें संन्यास ग्रहण कर चुके हैं।

(ग) मेरा जूता जापानी बहुत सस्ता है।

(घ) मैं हूँ पहलवान गामा।

(ङ) वह चित्र उसकी नजरों में सुन्दर हैं।

९. क्षेपक-चिह्न (——)

इसका प्रयोग निर्देशक-चिह्न की जगह होता है।

१०. लोप-चिह्न (× × ×।.......)

इसका प्रयोग वाक्य या अनुच्छेद में छोड़े हुए अंशों की जगह होता है; जैसे—

राम और श्याम को...............कह कर गाली दी।

अभ्यास

निम्नलिखित वाक्यों में लोप-चिह्न का प्रयोग करें—

गुण्डों ने श्याम को कहकर गाली दी राम ने भी कहकर गाली दी।



११. रिक्त स्थान पर रिक्त-चिह्न (......)

इसका प्रयोग होता है, जैसे—राम ने....को...से जाकर लंका...वाण...मारा।

१२. कोष्ठ चिह्न []{ }, () [

इसका प्रयोग इन स्थानों पर होता है—

(क) किसी पद, वाक्यांश या वाक्य के अर्थ को अथवा किसी अन्य वाक्य, वाक्यांश या पद को घेरने में; जसे—कलकल निनादिनी (नदी) की लोल (चंचल) तरंगों में हाथी पक्षी की भाँति बहता है।

(ख) कोष्ठक का क्रम यों है—[{ ( ) }]

(ग) इसका प्रयोग गणित में अधिकतर होता है।

१३. उद्धरण चिह्न (" ", ' ')

जब दूसरे की उक्ति, लेख या वाक्य को अविकल रूप में उद्धृत करना होता है या किसी अंश पर विशेष ध्यान आकृष्ट करना होता है, तब उसे उद्धरण-चिह्न के अन्तर्गत रखा जाता है; जैसे—राजेश्वर ने कहा— 'मैं साइकिल पर चढ़ना सीखूँगा।"

(क) अगर दूसरे की उक्ति के भीतर तीसरे की उक्ति का प्रयोग अविकल-रूप में हो तो उसे ' ' के अन्तर्गत रखा जाता है; जैसे—इन्दिरा ने कहा—"राजेश्वर ने पिता को प्रणाम किया और पिता ने 'चिरायु हो' कहकर आशीर्वाद दिया।"

(ख) आजकल " " के स्थान पर ' ' का भी प्रयोग होता है।

अभ्यास

निम्नलिखित वाक्यों में उद्धरण-चिह्न का प्रयोग करें—

कृष्ण ने कहा है, आत्मा अमर है।

राम ने कहा, मैं भात खाऊँगा।

शिक्षक ने कहा, पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है?

१४. अवतारक या पुनरुक्ति सूचक चिह्न

इसका प्रयोग ऊपर के किसी लिखित शब्द या वाक्य का अनुमोदन करने में होता है, जैसे—

गोविन्द आम खा रहा है।
तू " " " "
वह " " " "

१५. तुल्यता सूचक चिह्न (=).

समता की दशा में प्रयुक्त होता है; जैसे—अन् + अन्त = अनन्त।

१६. लाघव चिह्न [०]

इसका प्रयोग शब्द के संक्षिप्तीकरण में होता है, जैसे—ति० (तिथि) ता० (तारीख)।

१७. त्रुटि चिह्न (∧)

छूटे हुए, अक्षर, शब्द, पद, वाक्यांश और वाक्य को त्रुटि-चिह्न लगाकर परिपार्श्व (हासिया) पर लिखा जाता है, जैसे—

अनीता ने राम के जो ग्रंथ चुराये थे ∧ राधा ने जला दिया। उन्हें ∧

१८. टिप्पणीसूचक चिह्न (×, ※, ❋)

किसी विषय के बारे में यदि अन्यत्र कुछ लिखना हो तो उसके बाद टिप्पणीसूचक चिह्न का प्रयोग होता है और पृष्ठ के अधोभाग में रेखा के नीचे पुनः टिप्पणीसूचक का प्रयोग कर तत्सम्बन्धी बातें लिखी जाती हैं। (उदाहरण अन्यत्र देखिये।)

१९. समाप्तिसूचक चिह्न

इसका प्रयाग किसी प्रकरण के बाद होता है; जैसे—

०—०

अनुच्छेद

किसी विषय का एक भाग या खंड जब समाप्त होता है तब उसका विच्छेद किया जाता है और दूसरे भाग का खंड आरम्भ किया जाता है। इस प्रकार आरम्भ से अन्त तक के वाक्यों को अनुच्छेद कहते हैं।

अभ्यास

निम्नलिखित वाक्यों में उपयुक्त विरामादि चिह्न का प्रयोग करें और अनुच्छेदों को अलग करें—

व्याकरण भी चर्चा का एक विषय है अभी तक तो लोगों को यह भी पता नहीं कि राम ने रोटी खाया में क्रिया कर्त्तृवाच्य है या कर्मवाच्य गुरुजी ने लिख दिया कि ऐसी क्रियाएँ कर्त्तृवाच्य हैं क्योंकि कर्त्ता के अनुसार हैं हिन्दी

व्याकरण की शतशः सहस्रशः पाठ्य पुस्तकों में लिख दिया गया रामने रोटी खायी कर्त्तृवाच्य क्रिया है क्योंकि कर्त्ता के अनुसार क्रिया है यह अन्धकार अब तक चल ही रहा है यद्यपि ढोल पीट कर कहा गया कि ये क्रियाएँ कर्मवाच्य हैं कर्म रोटी आदि के अनुसार उनका लिंग वचन आदि है कर्त्ता राम आदि के अनुसार नहीं गुरुजी के अनुसार लोगों ने लिख दिया कि सकर्मक क्रिया का वाच्य प्रयोग हिन्दी में नहीं होता है जो एकदम गलत है हिन्दी में सकर्मक क्रियाओं के भाववाच्य प्रयोग अत्यधिक होते हैं कृष्ण ने गीता में कहा है आत्मा अमर है इस उपदेश से अर्जुन प्रेरित हुए क्या हुक्म है अर्जुन से भगवान् ने कहा युद्ध करना तुम्हारा धर्म है सावधानता के साथ पद का प्रयोग किया जाये तो कहना ही क्या श्री प्रेमचन्द ने एक कहानी सरस्वती में छपने के लिए भेजी शीर्षक था पंचों में परमेश्वर द्विवेदी जी ने शीर्षक कर दिया पंच परमेश्वर कितना परिवर्त्तन हो गया काशी नागरी प्रचारिणी सभा में कुछ सुधार द्विवेदी जी करना चाहते थे सभा के अधिकारी नाराज हो गये और द्विवेदी जी को लिखा कि क्यों न आपको सभा की सदस्यता से पृथक् कर दिया जाये द्विवेदी जी ने पचास से भी अधिक पृष्ठों में उत्तर दिया तब सभा की ओर से लिखकर आया कि आप के उत्तर से सभा को सन्तोष हो गया है और अब वैसे अनुशासन की कोई बात नहीं इस पर द्विवेदी जी ने लिखा सन्तोष हो गया है तो ठीक परन्तु सभा के जिन पदाधिकारियों पर मैंने जो आरोप लगाये हैं उनकी जाँच की जाय और अपराधी सिद्ध होने पर उन्हें दण्ड दिया जाये यदि अपराध निराधार सिद्ध हो तो मुझे दण्ड दिया जाय यदि ऐसा नहीं होता तो मैं सभा का सदस्य न रहूँगा और वैसी दशा में मेरा त्यागपत्र स्वीकार किया जाये अन्ततः द्विवेदी जी सभा से अलग हो ही गये सरस्वती में द्विवेदी जी ने यह प्रकरण विस्तार से छापा था और शीर्षक दिया था सभा की सभ्यता शीर्षक में सभ्यता बहुत अच्छा रहा उनके उस समय के भावों के बहुत अनुकूल है और कोई होता तो सभा की सदस्यता रखता सदस्यता की जगह यहाँ सभ्यता कितना अच्छा है क्यों अच्छा है यह बतलाने की जरूरत नहीं।

(पण्डित किशोरीदास वाजपेयी के एक लेख से)

★

